इकाई 1 सांख्यिकी: अर्थ एवं उपयोग, सांख्यिकी के प्रकार, मनोवैज्ञानिक मापन में सांख्यिकी की सार्थकता (महत्व)

इकाई संरचना

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 आँकड़ों (प्रदत्त) का अर्थ

1.4 आँकड़ों की प्रकृति

1.4.1 गुणात्मक तथा संख्यात्मक आँकड़े

1.4.2 सतत तथा विविक्त आँकड़े

1.4.3 प्राथमिक तथा द्वितीयक आँकड़े

1.5 मापन के पैमाने

1.6 सांख्यिकी का अर्थ

1.7 सांख्यिकी का उपयोग

1.8 सांख्यिकी के प्रकार

1.9 मनोवैज्ञानिक मापन में सांख्यिकी की सार्थकता

1.10 सार–संक्षेप

1.11 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1.12 पारिभाषिक शब्दावली

1.13 संदर्भ–ग्रन्थ

1.14 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.1 प्रस्तावना–

आधुनिक युग में सांख्यिकी का प्रयोग दिन–प्रतिदिन अनेक प्रकार के मनोवैज्ञानिक एवं शिक्षा से संबंधित समस्याओं के अध्ययनों में बढ़ता जा रहा है। सांख्यिकी ने मनोविज्ञान तथा शिक्षा के अध्ययनों में अपना एक विशेष स्थान बना लिया है। इसका प्रयोग परिकल्पना की जाँच के लिए ही नहीं किया जाता है बल्कि वैयक्तिक भेदों के माप तथा जटिल व्यवहार को समझने में भी यह उपयोगी है। जिन अध्ययनों में इसका प्रयोग किया जाता है उन अध्ययनों के परिणाम शुद्ध, विश्वसनीय, वैध तथा वस्तुनिष्ठ होते है। ऐसे परिणामों के आधार पर अध्ययन किए गए व्यवहार के संबंध में भविष्यवाणी भी की जा सकती है। इस इकाई में आप आँकड़ों के अर्थ और उनकी प्रकृति तथा सांख्यिकी की आवश्यकता और महत्व के विषय में पढ़ेंगे।

1.2 उद्‌देश्य –

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप–

1. सांख्यिकी का अर्थ स्पष्ट कर सकेंगे।
2. सांख्यिकी की आवश्यकता और महत्व बता सकेंगे।
3. आँकड़ों का अर्थ और उसकी प्रकृति स्पष्ट कर सकेंगे।
4. विभिन्न प्रकार के मापनियों में भेद कर सकेंगे।
5. मनोवैज्ञानिक मापन में सांख्यिकी की सार्थकता पर प्रकाश डाल सकेंगे।

1.3 आँकड़ों (प्रदत्तों) का अर्थ–

मान लें किसी विद्यालय में दशम वर्ग की सर्वाधिक परीक्षा में 30 विद्यार्थी गणित की परीक्षा में बैठते हैं। विद्यालय के प्रधान शिक्षक जानना चाहते हैं कि गणित में परीक्षाफल कैसा रहा। इसके लिए पहले उन्हें विद्यार्थियों द्वारा प्राप्त अंक लेने होंगे। ये परीक्षाफल के अध्ययन के लिए आँकड़े हुए। मान लें प्राप्त अंक निम्नलिखित हैं–

सारणी–1

क्रम संख्या	प्राप्त अंक	क्रम संख्या	प्राप्त अंक	क्रम संख्या	प्राप्त अंक
1	80	11	89	21	32
2	85	12	70	22	99
3	90	13	75	23	100
4	70	14	79	24	35
5	80	15	82	25	49
6	45	16	83	26	67
7	35	17	93	27	63
8	96	18	97	28	77
9	95	19	98	29	87
10	94	20	44	30	97

इन आँकड़ों से यह आसानी से पता लगाया जा सकता है कि सर्वाधिक या सर्वनिम्न अंक कितने रहे।

जिज्ञासा के किसी भी क्षेत्र में सबसे पहले संगत संख्यात्मक आँकड़ों या सांख्यिकीय आँकड़ों को संगृहित किया जाता है। यदि आँकड़े बहुत अधिक हों तो उनमें कुछ प्रतिदर्श वस्तुओं के आँकड़े लिए जाते हैं। जैसे–देश में मूल्य–स्तर के अध्ययन में यह संभव नहीं है कि जितनी भी वस्तुएँ खरीदी – बेची जाती हैं, सबके मूल्य दर्ज किए जाएँ। अतः इसके लिए केवल कुछ मुख्य वस्तुएँ, जैसे चावल, गेहूँ, दाल, तेल, चीनी, बिजली, पेट्रोल, कोयला, कपड़ा, लोहा जैसी अत्यधिक उपयोगी वस्तुएँ ही चुनी जाती हैं। अतः आँकड़ों का संबंध सर्वेक्षणों एवं अनुसंधान में प्राप्त सूचनाओं से होता है।

आँकड़ों का आशय उन सभी ज्ञात तथ्य या सूचनाओं से है, जिसके आधार पर निष्कर्ष निकाला जा सकता है। उदाहरण के लिए, यदि किसी कक्षा के छात्रों की बुद्धि का मापन बुद्धि परीक्षा से किया जाए तो उस बुद्धि परीक्षा में छात्रों को जो प्राप्तांक प्राप्त होंगे, उन्हें आँकड़ा कहा जाएगा।

1.4 आँकड़ों की प्रकृति–

आँकड़ों के विभिन्न रूपों के अध्ययन के द्वारा इसकी प्रकृति को समझा जा सकता है। आँकड़ें निम्न प्रकार के होते हैं–

1. गुणात्मक तथा संख्यात्मक आँकड़े
2. सतत तथा विविक्त (असतत्) आँकड़े
3. प्राथमिक तथा द्वितीयक आँकड़े

1.4.1 गुणात्मक तथा संख्यात्मक आँकड़े–

गुणात्मक आँकड़े वे हैं जिनका मापन केवल वर्गीय स्तर पर किया जाता है, क्योंकि इनका केवल वर्गीकरण ही संभव होता है। इस प्रकार के आँकड़ों के उदाहरण है– लिंग, व्यवसाय, जाति, धर्म, सामाजिक स्तर, आर्थिक स्तर आदि। संख्यात्मक आँकड़े गणना या मापन का परिणाम होते हैं। संख्यात्मक आँकड़ों के उदाहरण हैं– निष्पत्ति, बुद्धि, प्रवणता, व्यक्तित्व, अभिरूचि, तथा मूल्य।

1.4.2 सतत तथा विविक्त आँकड़े–

सतत आँकड़े वे हैं जिनका मापन मापनी से किया जा सकता है और अनुमानतः दो मापनियों के बीच का मूल्य भी ज्ञात किया जा सकता है। इस प्रकार के आँकड़ों के उदाहरण है– ऊँचाई, भार आदि।

असतत या विविक्त आँकड़े वे हैं जिनकी सीमाओं के बीच के पूर्णांक मूल्य संभव हों, परन्तु मात्रात्मक मूल्य संभव न हों। इस प्रकार के आँकड़ों के उदाहरण हैं– कक्षा में विद्यार्थियों की संख्या, बुद्धि परीक्षण के प्राप्तांक आदि।

1.4.3 प्राथमिक तथा द्वितीयक आँकड़े–

यदि अन्वेषक या अनुसंधानकर्ता ने पर्यवेक्षण द्वारा अपने आँकड़ों का संग्रह किया हो, अर्थात् आँकड़ों की सत्यता का उत्तरदायित्व अन्वेषक पर ही हो तो इस प्रकार के आँकड़ों को प्राथमिक आँकड़े कहते हैं। उदाहरण के लिए, कक्षा में शिक्षक द्वारा ली गई उपस्थिति, शिक्षक द्वारा ली गई परीक्षा के अंक आदि उस शिक्षक के लिए प्राथमिक आँकड़े कहलाऐंगे।

यदि अन्वेषक विभिन्न स्त्रोतों से आँकड़े संग्रहित करे, अर्थात् उसकी सत्यता का उत्तरदायित्व अन्वेषक पर न हो, तो आँकड़ों का विभिन्न एजेन्सियों द्वारा प्रयोग में लाना।

1.5 मापन के पैमाने–

स्वीकार्य तथा तर्कसंगत नियमों के अनुसार वस्तुओं, घटनाओं, निरीक्षणों तथा व्यवहार का मात्रात्मक वर्णन समंकों द्वारा करना मापन कहलाता है। गिलफोर्ड के अनुसार, ''मापन वस्तुओं या घटनाओं का तर्कपूर्ण ढंग से संख्या प्रदान करने की क्रिया है।''

जीव के सूक्ष्म एवं अमूर्त व्यवहार तथा सामाजिक संबंधों के क्षेत्र में मापन का महत्व दिन–प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। बच्चे के जन्म का समय, भार, उसके भोजन की मात्रा, उसकी बुद्धि, योग्यता, स्मरण शक्ति, स्वभाव, सहनशीलता आदि कुछ दैनिक जीवन के मापन के उदाहरण हैं। मापन का प्रयोग मुख्यतः वर्गीकरण, चयन, तुलना, भविष्यवाणी, निदान तथा शोध आदि में होता है।

स्टीवेन्स (1968) ने मापन से प्राप्त संख्याओं के आधार पर मापन के चार स्तरों का वर्णन किया है–

1. **नामित मापनी या पैमाना–**

इस प्रकार के मापन में वस्तु या घटनाओं का विशिष्ट वर्गीकरण गुणों या विशेषताओं के आधार पर किया जाता है। प्रत्येक वर्गीकृत वर्ग को कोई नाम, संख्या, संकेत या कोड दे दिया जाता है। उदाहरण के लिए किसी कक्षा के 30 विद्यार्थियों को 1 से 30 तक की क्रम संख्या दे देना। सभी छात्रों को 1 से 30 तक की क्रम संख्या उनकी पहचान के लिए दी गई है।
इस प्रकार का मापन गुणात्मक मापन है। अतः यह मापन का निम्न स्तरीय स्वरूप है। इस प्रकार के मापन के आधार पर सांख्यिकीय गणना संभव नहीं होती है।

2. **क्रमवाचक / क्रमसूचक मापनी या पैमाना–**

इस प्रकार के मापन में एक वर्ग की इकाइयों को विभिन्न श्रेणियों में क्रमात्मक रूप में प्रस्तुत किया जाता है। इस प्रकार वस्तुओं, घटनाओं, विशेषताओं या अनुक्रियाओं को उनके किसी लक्षण के आधार पर क्रम में व्यवस्थित कर प्रत्येक वस्तु को क्रम सूचक अंक दे दिया जाता है। उदाहरण के लिए छात्रों को एक पंक्ति में लंबाई के अनुसार खड़े कर उन्हें उनकी स्थिति के अनुसार 1 से 30 तक क्रम संख्या दी गई है। चूँकि यहाँ छात्रों को लंबाई के क्रम में क्रमसंख्या दी गई है इसलिए छात्रों की तुलना लंबाई के आधार पर की जा सकती है।
यह मापनी परिशुद्धता और वैज्ञानिकता की दृष्टिकोण से अधिक महत्वपूर्ण है। क्रमसूचक अंकों से यह तो स्पष्ट हो जाता है कि दो वस्तुओं, घटनाओं या व्यक्तियों आदि में एक–दूसरे की तुलना में कौन श्रेष्ठ है, परन्तु यह पता नहीं चलता है कि दोनों की पारस्परिक स्थितियों में कितना अन्तर है।

3. **अन्तराल मापनी–**

इस प्रकार के मापनी में दो या अधिक वस्तुओं या घटनाओं आदि की मापी जाने वाली विशेषताओं के वास्तविक अन्तर को ज्ञात किया जा सकता है। इस मापन में गुणात्मक तथ्यों को परिमाणात्मक आँकड़ों में व्यक्त किया जाता है। इस मापनी में वास्तविक शून्य बिन्दु नहीं होता है फिर भी मापन की प्रत्येक इकाई एक–दूसरे से समान दूरी पर होती है। उदाहरण के लिए एक उपलब्धि परीक्षण के आधार पर छात्रों 0 से 50 समंक दिए गए हैं। यदि तीन छात्रों द्वारा प्राप्त समंक 30, 20 और 40 हों तो यह कहा जा सकता है कि प्रथम और द्वितीय छात्रों में समंकों में अन्तर प्रथम और तृतीय छात्रों के प्राप्तांकों में अन्तर के समान है। इसके बावजूद भी यह नहीं कहा जा सकता कि तृतीय छात्र के प्राप्तांक द्वितीय छात्र के प्राप्तांकों से दुगने हैं। यहाँ ऐसा इसलिए है कि 0 अंक पाने वाले छात्र के लिए यह नहीं कहा जा सकता कि उसकी उपलब्धि शून्य है।
अन्तराल मापनी उपर्युक्त दो मापनियों की अपेक्षा अधिक वैज्ञानिक और उपयोगी है। परन्तु शून्य बिन्दु के अभाव के कारण किसी भी विशेषता या गुण का निरपेक्ष मापन नहीं हो पाता है।

4. **अनुपात मापनी–**

इस प्रकार के मापन में समान्तर स्तर की संख्याओं के सभी गुणों के अतिरिक्त परम शून्य या किसी गुण की अनुपस्थिति को व्यक्त करने की विशेषता भी होती है। इस प्रकार का मापन सबसे अधिक विकसित, वैज्ञानिक, विश्वसनीय और वस्तुनिष्ठ मापन है। उदाहरण के लिए किसी कक्षा के सभी छात्रों की ऊँचाई और भार की माप करना तथा उनकी तुलना करना। यदि दो

छात्रों की लंबाई क्रमशः 110 सेमी. और 130 सेमी. है तो उनकी लंबाई का अन्तर 20 सेमी. है और उनकी लंबाइयों का अनुपात 6:7 है।

उपर्युक्त चार प्रकार के मापनियों के उपयोग का मुख्य उद्देश्य घटनाओं, गुणों और विशेषताओं आदि को अंकों में परिवर्तित करना है। मापों पर प्रयुक्त गणितीय प्रक्रिया इस बात पर निर्भर करती है कि किसी मापनी का प्रयोग मापन के लिए किया गया है।

1.6 सांख्यिकी का अर्थ–

सांख्यिकी गणित की एक उपयोगी शाखा है। विज्ञान की विभिन्न शाखाओं एवं राज्य या किसी संस्था की विभिन्न सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक परिस्थितियों तथा समस्याओं के अध्ययन में ''सांख्यिकी'' का प्रयोग किया जाता है।

सांख्यिकी के अंग्रेजी शब्द 'Statistics' की उत्पत्ति लैटिन भाषा के शब्द 'Status' इटैलियन शब्द 'Statista' अथवा जर्मन भाषा के शब्द 'Statistik'से हुई है। इन सभी शब्दों का शाब्दिक अर्थ राज्य तथा राजनैतिक कार्य है। प्राचीन काल में 'सांख्यिकी'–राजनीति का अंग थी और राज्य–कर्मचारियों द्वारा उसका प्रयोग राज्य से संबंधित आँकड़ों को एकत्र करने के लिए किया जाता था। जैसे– जन्म दर, मृत्यु–दर, राज्य की आय, उद्योग आदि।

जर्मनी में 18वीं सदी में 'सांख्यिकी' का 'Stastik' नामक स्वतंत्र विषय के रूप में अध्ययन आरम्भ किया गया, पर मध्ययुग के समान इसका क्षेत्र सीमित रहा और इसका संबंध राज्य के मामलों से ही रहा।

प्राचीन काल की अपेक्षा सांख्यिकी अर्थ आधुनिक काल में बिल्कुल भिन्न है। फिर भी आँकड़ों को एकत्र करने के अर्थो में इसका प्रयोग आज भी करते हैं।

'सांख्यिकी' वैज्ञानिक विधि की वह शाखा है, जो प्रदत्त का विवेचन करती है। ये प्रदत्त गणना तथा मापन से प्राप्त किए जाते हैं। सांख्यिकी को निम्न प्रकार से परिभाषित किया जा सकता है।

''वह विज्ञान, जो पदत्तों के संकलन, विश्लेषण तथा निर्वचन से संबंधित नियमों का अध्ययन करता है, सांख्यिकी कहलाता है।''

आधुनिक समय में सांख्यिकी का प्रयोग ज्ञान के लगभग सभी क्षेत्रों में किया जाता है। इस दृष्टि से इसकी आधुनिकतम परिभाषा देते हुए फरग्यूसन (1971) ने लिखा है– *''सांख्यिकी वैज्ञानिक विधियन्त्र की शाखा है जिसका सम्बन्ध सर्वेक्षणों और परीक्षणों द्वारा प्राप्त होने वाली सामग्री के संकलन, वर्गीकरण और व्याख्या से है।'*

रोस्को ने सांख्यिकी को परिभाषित करते हुए लिखा है कि सांख्यिकी एक आधुनिक शैक्षिक संकाय है, जो व्यवहारपरक विज्ञानों में पायी जाने वाली मात्रात्मक सूचनाओं के संकलन, व्यवस्थापन, सरलीकरण तथा विश्लेषण की वैज्ञानिक प्रक्रिया प्रदान करती है।

1.7 सांख्यिकी का उपयोग एवं महत्व–

आज सामाजिक विज्ञानों के क्षेत्र में हो रहे अध्ययन एवं शोध कार्यो में सांख्यिकी का महत्व दिन–प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। सामाजिक विज्ञानों में मनोविज्ञान, शिक्षाशास्त्र और समाज शास्त्र का स्वरूप जैसे–जैसे वैज्ञानिक होता जा रहा है, इन विषयों में सांख्यिकी का उपयोग बढ़ता ही जा रहा है। सांख्यिकी के द्वारा वैज्ञानिक अनुसंधान में अनेक कार्यों की पूर्ति होती है। सामाजिक विज्ञानों में सांख्यिकी की आवश्यकता और महत्व निम्न प्रकार से है–

1. **प्रदत्तों के वर्णन में–**

किसी समस्या के अध्ययन से जो प्रदन्त या आँकड़े प्राप्त होते हैं। उन आँकड़ों के वर्णन में अनेक सांख्यिकी विधियाँ उपयोगी हैं। उदाहरण के लिए, प्रदन्तों का आवृत्ति वितरण बनाना, उन्हें विभिन्न प्रकार के रेखाचित्रों के द्वारा प्रदर्शित करने में सांख्यिकी का बहुत अधिक महत्व है। मध्यमान, मध्यांक और बहुलांक जैसी केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापन की विधियों की सहायता से आँकड़ों या प्रदत्तों का वर्णन करने में भी सांख्यिकी उपयोगी है। आँकड़ों को सुस्पष्ट तथा आकर्षक ढंग से प्रदर्शित करने हेतु स्तम्भ रेखाचित्र, वृत्तचित्र, स्तम्भाकृति, आवृत्ति बहुभुज, सरल आवृत्ति बहुभुज, संचयी बारंबारता वक्र आदि विधियों का उपयोग भी किया जाता है। वर्णनात्मक सांख्यिकी विधियों को प्रयोग कर यह भी ज्ञात किया जा सकता है कि अध्ययन या अनुसंधान से प्राप्त आँकड़ों की प्रकृति समवितरित प्रकार की है अथवा नहीं एवं आँकड़ों की प्रकृति वितरण या कुकुदता के रूप में है अथवा नहीं।

2. प्रदत्तों के सहसम्बन्ध के वर्णन में–

कभी–कभी अनुसंधानकर्ता दो या अधिक प्रकार के आँकड़ों अथवा दो या दो से अधिक समूहों से प्राप्त आँकड़ों के पारस्परिक संबंध का अध्ययन करना चाहता है अथवा यह जानना चाहता है कि यह दो या दो से अधिक समूह से प्राप्त आँकड़े किस सीमा तक एक–दूसरे से सहसंबंधित हैं? इन प्रश्नों का उत्तर जानने के लिए अनुसंधानकर्ता सांख्यिकी की सहसम्बन्ध की विधियों का उपयोग करता है।

3. प्रतिगमन और भविष्यकथन–

दो चरों के अपने–अपने मध्यमान से घटने बढ़ने के मध्य अनुपात ही प्रतिगमन है। प्रतिगमन के द्वारा दो चरों के स्वरूप का भी ज्ञान हो जाता है। एक घटना या चर से संबंधित ज्ञान के आधार पर घटना या चर के संबंध में जब कोई अनुसंधानकर्ता पूर्वानुमान लगाना चाहता है अथवा भविष्यकथन करना चाहता है तब वह सांख्यिकी की प्रतिगमन और भविष्यकथन से संबंधित विधियों का उपयोग करता है।

4. वैज्ञानिक परिकल्पनाओं के परीक्षण में–

सांख्यिकी का उपयोग परिकल्पनाओं के परीक्षण में वैज्ञानिकों द्वारा किया जाता है। उदाहरण के लिए एक अनुसंधानकर्ता ने यह परिकल्पना बनाई कि दस वर्ष के बच्चों में बुद्धि सामान्य रूप से वितरित होती है। इस परिकल्पना के परीक्षण के लिए वह यादृच्छिक विधि से दस वर्ष के बच्चों के एक प्रतिदर्श का चुनाव करेगा और किसी प्रमाणिक बुद्धि–मापनी द्वारा प्रतिदर्श के बच्चों की बुद्धि का मापन करेगा। इसके बाद उपयुक्त सांख्यिकीय परीक्षण की सहायता से यह देखा जा सकता है, बच्चों की बुद्धि के प्राप्तांकों का वितरण सामान्य वितरण वर्ग के अनुरूप है या नहीं। इससे यह भी पता चलेगा कि परिकल्पना और प्रतिदर्श के बच्चों में प्राप्तांकों का वितरण एक–दूसरे के कितना अनुरूप हैं? इन प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करने हेतु वह टी–परीक्षण, सी.आर. परीक्षण, सैण्डलर का ए–परीक्षण, प्रसरण विश्लेषण, काई–वर्ग परीक्षण, मध्यांक परीक्षण और चिन्ह–परीक्षण आदि सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग करता है।

5. **प्रतिदर्श चयन में–**

संख्या में बहुत समष्टि या जनसंख्या पर अपनी अनुसंधान समस्या के अध्ययन के दौरान अनुसंधानकर्ता सम्पूर्ण जनसंख्या का अध्ययन न करके सम्पूर्ण जनसंख्या में से कुछ अध्ययन इकाइयाँ चुन लेता है। यह चुनी गई अध्ययन इकाइयाँ ही प्रतिदर्श कहलाती है। अध्ययन समस्या की प्रकृति के अनुसार अनुसंधानकर्ता सांख्यिकी विधियों की सहायता से प्रतिनिधिपूर्ण

प्रतिदर्श का चयन कर लेता है। इसके अलावा वह प्रतिदर्श के आकार की गणना भी वह सांख्यिकीय विधियों की सहायता से कर लेता है।

6. साहचर्य के आधार पर कारण–कार्य सम्बन्ध में–

जब कोई अनुसंधानकर्ता स्वतन्त्र चर का परतन्त्र चर पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना चाहता है अथवा कारण–कार्य सम्बन्ध का अध्ययन करना चाहता है तो वह सांख्यिकीय विधियों की सहायता लेता है। उदाहरण के लिए शिक्षा एवं आय में संबंध ज्ञात करने के लिए अनुसंधानकर्ता को न केवल समूहों में अन्तर की सार्थकता की जाँच करनी होती है बल्कि उसे सहसंबंध की गणना भी करनी होती है।

7. मापन और मनोवैज्ञानिक परीक्षणों में–

मनोवैज्ञानिक मापन और मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के निर्माण में सांख्यिकी विधियाँ बहुत अधिक उपयोगी हैं। मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के निर्माण में पदों का चयन करते समय परीक्षण बन जाने के बाद, परीक्षण की विश्वसनीयता और वैधता की गणना करने में सांख्यिकीय विधियाँ बहुत उपयोगी हैं। सांख्यिकीय विधियों के उपयोग के अभाव में मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का निर्माण असंभव है।

8. शैक्षिक व अनुसंधान कार्यो में–

प्रायः सभी देशों में समयानुसार शिक्षा के उद्देश्यों, पाठ्यक्रमों, शिक्षण व मूल्यांकन विधियों में परिवर्तन की माँग को पूर्ण करने के लिए नाना प्रकार के शैक्षिक परीक्षण और अनुसंधान कार्य किए जाते हैं। 'सांख्यिकी' की सहायता से इन कार्यो और परीक्षणों की विश्वसनीयता और प्रामाणिकता की जाँच की जाती है। इससे न केवल त्रुटियों का ज्ञान हो जाता है, वरन् उनकी उपयोगिता के बारे में भविष्यवाणी भी की जा सकती है।

उपर्युक्त विवेचना से यह स्पष्ट है कि मनोविज्ञान तथा शिक्षा जगत में सांख्यिकी का एक महत्वपूर्ण स्थान है। सांख्यिकी के महत्व के संदर्भ में प्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री रीशमैन (Reichmann) ने बिल्कुल सटीक लिखा है– ''हम सांख्यिकी के युग में प्रवेश कर चुके हैं। प्राकृतिक घटना एवं मानव और अन्य क्रियाओं के लगभग प्रत्येक पहलू का अब सांख्यिकी के द्वारा मापन किया जाता है और तत्पश्चात् व्याख्या की जाती है।''

1.8 सांख्यिकी के प्रकार

साख्यिंकी के विभिन्न प्रकारों को निम्नांकित आधारों पर वर्गीकृत किया गया है –

(क) प्रक्रिया की आधारभूत मान्यताओं के आधार पर : इस आधार पर सांख्यिकी के दो प्रकार हैं –

1. **प्राचलिक सांख्यिकी –** इस सांख्यिकी का सम्बन्ध समष्टि के किसी एक विशेष प्राचल से होता है तथा आंकड़ों के आधार पर प्राचल के सम्बन्ध में अनुमान लगाया जाता है। इस प्रकार की सांख्यिकी में जिस प्रकार के आंकड़ों का विश्लेषण किया जाता है वे आंकड़े प्रतिदर्श और सामान्य वितरण से सम्बन्धित होते हैं। इसमें प्रतिदर्श की यादृच्छिकता तथा विचरण की समजातीयता का उपयोग वैध माना जाता है। इस प्रकार की सांख्यिकी में आंकड़ों की सार्थकता का अध्ययन मानक त्रुटि, टी–परीक्षण, एनोवा तथा सम्बन्धित सांख्यिकी विधियों द्वारा किया जाता है। इसमें प्रतिगमन की रैखिकता आदि के होने पर पियरसन सहसम्बन्ध गुणांक की गणना भी वैध मानी जाती है।

2. **अप्राचलिक सांख्यिकी –** उपर्युक्त के अतिरिक्त कुछ आंकड़े ऐसे भी होते हैं जहां न तो संयोगिक चयन होता है और न सामान्य वितरण ही। ऐसे आंकड़ों की संख्या कम होने के कारण आंकड़ों का स्वरूप विकृत होता है। इन आंकड़ों की एक विशेषता यह भी होती है कि इनका एक समष्टि के प्राचल से सम्बन्ध भी नहीं होता है। ऐसे आंकड़ों से सम्बन्धित सांख्यिकीय विधियाँ अप्राचल सांख्यिकी के अन्तर्गत आती हैं या इन्हें वितरण मुक्त सांख्यिकी भी कहते हैं। इस प्रकार की सांख्यिकी विधियों में कुछ प्रमुख हैं। मेडियन टेस्ट, स्पीयरमैन का कोटि अन्तर सहसम्बन्ध, काई–वर्ग टेस्ट आदि।

(ख) **व्यावहारिक उपयोग प्रक्रिया के आधार पर :** इस आधार पर सांख्यिकी के दो प्रकार बताये गये हैं –

1. **वर्णनात्मक सांख्यिकी –** इसका प्रयोग किसी समूह अथवा वर्ग के अंकात्मक वर्णन के लिए किया जाता है। इस प्रकार की सांख्यिकी का प्रयोग प्रदत्तों के संकलन, संगठन, प्रस्तुतीकरण एवं परिकलन से होात है। वर्णनात्मक सांख्यिकी में प्रदत्तों का संकलन करके सारणीबद्ध किया जाता है और प्रदत्तों की विशेषता स्पष्ट करने के लिए कुछ सरल सांख्यिकीय मानों की गणना की जाती है। जैसे–केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापकों, विचलन मापकों तथा सहसम्बन्ध आदि का प्रयोग समूह अथवा वर्ग की तथा स्थिति आदि को जानने के लिए किया जाता है। आंकड़ों को साकार बनाने के लिए उनका विभिन्न विधियों द्वारा आलेखीय चित्रण किया जाता है : जैसे पाईचित्र, दंड चित्र, आयत चित्र, आवृत्ति बहुभुज, ओगाइव आदि। समूह में व्यक्ति की स्थिति को शततमक तथा शततमक कोटि आदि की सहायता से समझा जाता है। इस प्रकार की सांख्यिकी का प्रयोग समूह के सदस्यों की लम्बाई, भार, बौद्धिक स्तर, सामाजिक स्तर, शैक्षिक स्तर, साक्षरता तथा लड़के–लड़कियों का प्रतिशत ज्ञात करने के लिए, औसत ज्ञात करने के लिए या विचलन और सहसम्बन्ध ज्ञात करने के लिए किया जाता है।
2. **निष्कर्षात्मक सांख्यिकी –** इसका प्रयोग अधिक बड़े समूहों से सम्बन्धित समस्याओं के अध्ययन के लिए किया जाता है। इस प्रकार की सांख्यिकी में प्रदत्तों के आधार पर समूह के सम्बन्ध में अनुमान लगाते हैं या निष्कर्ष निकालते हैं। बहुधा इस सांख्यिकी की सहायता से परिणामों की वैधता की जांच की जाती है। बहुधा अनुमान के लिए अपेक्षाकृत उच्च सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग किया जाता है: जैसे–सम्भावना नियम, मानक त्रुटि, सार्थकता परीक्षण आदि। चूंकि समूह विस्तृत होते हैं तथा इनके सदस्यों संख्या अधिक होती है, अतः अध्ययनकर्ता अध्ययन के लिए इन बड़े समूहों से प्रतिदर्श चुनकर समस्या का अध्ययन करता है। इस प्रकार प्रतिदर्श के अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष सम्पूर्ण समूह का प्रतिनिधित्व करते हैं। संक्षेप में, किसी समूह के सम्बन्ध में अनुमान लगाने और पूर्व कथन से सम्बन्धित सांख्यिकी को निष्कर्षात्मक सांख्यिकी कहते हैं। इस प्रकार की सांख्यिकी को प्रतिदर्शन निगमनात्मक सांख्यिकी भी कहते हैं।

1.9 मनोवैज्ञानिक मापन में सांख्यिकी की सार्थकता

बाजारवाद के इस युग में पूरी दुनियां आंकड़ों से चल रही है। आंकड़ों के विश्लेषण हेतु सांख्यिकी का प्रयोग किया जाता है।

थाउलेस के अनुसार समाज– विज्ञानवेत्ता सांख्यिकी का प्रयोग अपनी पसन्द और नापसन्द के आधार पर नहीं करता है, बल्कि आंकड़ों की प्रकृति के कारण अनिवार्य रूप से उसे करना पड़ता है। आधुनिक युग में सांख्यिकी का प्रयोग दिन–प्रतिदिन अनेक प्रकार के मनोवैज्ञानिक एवं

शिक्षा से सम्बन्धित समस्याओं के अध्ययनों में बढ़ता जा रहा है। सांख्यिकी ने मनोविज्ञान तथा शिक्षा के अध्ययनों में अपना एक विशेष स्थान बना लिया है। इसका प्रयोग परिकल्पना की जांच के लिए ही नहीं किया जाता है बल्कि यह वैयक्तिक भेदों के माप में तथा जटिल व्यवहार को समझने में भी उपयोगी है। जिन अध्ययनों में इसका प्रयोग किया जाता है उन अध्ययनों के परिणाम शुद्ध, विश्वसनीय, वैध तथा वस्तुनिष्ठ होते हैं। ऐसे परिणामों के आधार पर अध्ययन किये गये व्यवहार के सम्बन्ध में भविष्यवाणी भी की जा सकती है। इसका प्रयोग मनोविज्ञान और शिक्षा क्षेत्र में दिन–प्रतिदिनि बढ़ता जा रहा है। संक्षेप में इसकी सार्थकता इस प्रकार है –

1. मनोवैज्ञानिक मापन से प्राप्त तथ्यों की व्याख्या अंकों के द्वारा की जाती है। सांख्यिकी के द्वारा यह व्याख्या अधिक उपर्युक्त एवं सार्थक ढंग से सम्भव है।
2. सांख्यिकी के प्रामाणिक पैमानों की सहायता से वस्तुगत प्रत्युत्तर या वस्तुगत परिणाम प्राप्त किये जा सकते हैं। सीखने पर अभ्यास के प्रभाव के सम्बन्ध में भिन्न–भिन्न लोगों के मत भिन्न हो सकते हैं। यदि इसी तथ्य की अंकों के द्वारा व्याख्या की जाय तो केवल एक व्याख्या होगी। अतः सांख्यिकी की सहायता से वस्तुगत और शुद्ध परिणाम प्राप्त किये जा सकते हैं।
3. सांख्यिकीय अध्ययनों के आधार पर प्राप्त निष्कर्षों की सहायता से तथ्यों की व्याख्या वैज्ञानिक ढंग से की जा सकती है।
4. सामान्य निष्कर्षों के निर्धारण में भी सांख्यिकी सहायक है। यह निष्कर्ष सांख्यिकीय सूत्रों और नियमों के आधार पर निकाले जाते हैं।
5. सांख्यिकी के द्वारा तुलनात्मक अध्ययन अधिक सरल हो जाते हैं। यह तुलना कई आधारों पर हो सकती है; जैसे–समय, स्थान और तथ्य आदि। दो या अधिक विद्यार्थियों की बुद्धि की तुलना बुद्धि–लब्धि की सहायता से की जा सकती है। तुलनात्मक अध्ययनों में सांख्यिकी द्वारा शुद्ध एवं विश्वसनीय परिणाम प्राप्त किये जा सकते हैं।
6. सांख्यिकी विश्लेषण के आधार पर दो या दो से अधिक चल–राशियों में सम्बन्ध भी ज्ञात किया जा सकता है। इसके लिए सह–सम्बन्ध गुणाक निकालना होता है। केवल दो या अधिक चल–राशियों में सम्बन्ध ही मालूम होता है बल्कि उनमें कितना सम्बन्ध है, यह भी ज्ञात किया जा सकता है।
7. सांख्यिकीय अध्ययनों के आधार पर व्यवहार के सम्बन्ध में प्राप्त निष्कर्षो के आधार पर व्यवहार के सम्बन्ध में उचित भविष्यवाणी भी की जा सकती है। उदाहरण के लिए सक समूह व्यवहार का सांख्यिकीय विधियों से अध्ययन करके यह भविष्यवाणी की जा सकती है कि भविष्य में समूह के व्यवहार का स्वरूप क्या होगा।
8. मानसिक और शारीरिक योग्यताओं को मापने के लिए अनेक मनोवैज्ञानिक परीक्षण तैयार किये जाते हैं जैसे – बुद्धि, रूचि, व्यक्तित्व, अभिवृत्ति आदि। इस प्रकार के परीक्षणों के निर्माण की प्रक्रिया में सांख्यिकी का बहुत महत्व है। आज के युग में वैध परीक्षणों का निर्माण सांख्यिकी के प्रयोग पर ही निर्भर करता है।
9. सांख्यिकीय विधियों की सहायता से प्रतिनिनिधित्व प्रतिदर्श का चयन भी सरलता से किया जा सकता है। मनोविज्ञान और शिक्षा के क्षेत्र में अधिकांश अध्ययन प्रतिदर्श पर ही आधारित होते हैं, परन्तु प्रतिदर्श के लिए आवश्यक है कि प्रतिदर्श समष्टि का प्रतिनिधित्व करता हुआ हो। प्रतिनिध्यात्मक प्रतिदर्श चुनने में सांख्यिकी सहायका है।
10. आधुनिक वैज्ञानिक अनुसंधान योजनाओं में सांख्यिकीय विधियां बहुत अधिक सहायक हैं। उच्च वैज्ञानिक अनुसंधान योजनाऐं सांख्यिकीय विधियों के अभाव में बनाना सम्भव नहीं है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि मनोवैज्ञानिक मापन हेतु सांख्यिकी एक अत्यन्त ही सार्थक विषय है जो मनोवैज्ञानिक मापन को वस्तुनिष्ठ एवं वैज्ञानिक बनाती है।

अभ्यास प्रश्न

1 **जिन आंकड़ों का मापन सिर्फ वर्गीय स्तर पर किया जाता है उसे कहते हैं –**

(अ) सतत आंकड़ें (ब) विविक्त आंकड़ें

(स) गुणात्मक आंकड़ें (द) इनमें से कोई नहीं

2 **स्पीयरमैन का कोटि–अन्तर सहसम्बन्ध गुणांक सम्बन्धित है –**

(अ) प्राचल सांख्यिकी से (ब) अप्राचलन सांख्यिकी से

(स) दोनों से (द) इनमें से कोई नहीं

1.10 सार–संक्षेप

- आँकड़ों का आशय उन सभी ज्ञात तथ्यों या सूचनाओं से है, जिसके आधार पर निष्कर्ष निकाला जा सकता है।
- आँकड़ें गुणात्मक तथा संख्यात्मक, सतत तथा असतत (विविक्त), एवं प्राथमिक तथा द्वितीयक होते हैं। यह तत्वों की प्रकृति पर निर्भर करता है।
- गुणात्मक आँकड़ों का मापन केवल वर्गीय स्तर पर किया जाता है जबकि संख्यात्मक आँकड़े गणना या मापन के परिणाम होते हैं।
- जब अनुसंधानकर्ता स्वयं आँकड़े प्राथमिक कहलाते हैं जबकि वे आँकड़ें जो प्रयोग हेतु अनुसंधानकर्ता द्वारा एकत्र नहीं किये जाते हैं, द्वितीयक आँकड़ें कहलाते हैं।
- मापनी चार प्रकार की होती है– नामित मापनी, क्रमवाचक मापनी, अन्तराल मापनी और अनुपात मापनी। मापों पर प्रयुक्त गणितीय प्रक्रिया मापन हेतु प्रयुक्त उचित मापनी पर निर्भर करती है।
- आँकड़ों के एकत्रीकरण तथा प्रदत्तीकरण में हमें सांख्यिकी की आवश्यकता पड़ती रहती है। सांख्यिकी का हमारे दैनिक जीवन में अत्यधिक महत्व है। कोई भी कार्य हम सांख्यिकी के बिना सम्पन्न नहीं कर सकते हैं। सांख्यिकी के प्रयोगात्मक तथा व्यावहारिक मूल्य को ध्यान में रखते हुए यह कहा जा सकता है कि सांख्यिकी का हमारे दैनिक जीवन में घनिष्ठ संबंध होता है। दूसरे शब्दों में, हमारे जीवन का कोई भी ऐसा पहलू नहीं है, जो सांख्यिकी के ज्ञान से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित न हों।

1.11 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न–

I. निम्नलिखित आँकड़ों को विभिन्न प्रकार के आँकड़ों में वर्गीकृत करें–

II. शिक्षा शास्त्रियों द्वारा जनगणना के आँकड़ों का प्रयोग।

III. अपने विद्यालय में स्वयं शिक्षक द्वारा मापी गई छात्रों की ऊँचाई।

IV. वर्गानुसार विद्यालय के छात्रों की उपस्थिति।

V. विद्यालय के कक्षा IX के छात्रों के गणित के प्राप्तांक

VI. किसी विद्यालय के छात्रों की आयु।

VII. बुद्धि परीक्षण में कक्षा V के विद्यार्थियों के प्राप्तांक।

VIII. मापन से आप क्या समझते हैं? मापन के प्रकार और इसके दैनिक जीवन में महत्व को समझाइए।

IX. सांख्यिकी से आप क्या समझते हैं? दैनिक जीवन में सांख्यिकी की आवश्यकता को स्पष्ट कीजिए।

1.12 पारिभाषिक शब्दावली –

- **सांख्यिकी (Statistics)** : सांख्यिकी वह विज्ञान है जो घटनाओं की व्याख्या, उनका वर्णन तथा उनकी तुलना के लिए आवश्यक आंकिक तथ्यों के संग्रह, वर्गीकरण एवं सारणीयन से सम्बन्ध रखता हो।
- **आँकड़ा (Data)** : आँकड़ों का आशय उन सभी ज्ञात तथ्यों या सूचनाओं से है जिसके आधार पर निष्कर्ष निकाला जा सकता है।
- **अचर (Non-Variable)** : अचर का आशय उस गुण से है, जो शोध के समय सभी परिस्थितियों में एक सा रहता है। न्यादर्श के सभी सदस्यों में उस गुण के संदर्भ में समानता रहती है।
- **चर (Variable)** : चर उस गुण को कहते हैं, जो शोध की सभी परिस्थितियों में परिवर्तनशील रहता है। न्यादर्श के सभी सदस्यों में उस गुण के संदर्भ में विषमता रहती है।

1.13 सदंर्भ ग्रन्थ –

1- Blommers & Lindquist (1970), Elementary Statistical Methods in Psychology & Education, Oxford Books & Co. DDLS.
2- Garrett, H.E. (1973), Statistics in Psychology & Education, Longmans, Green & Co., New York.
3- Guilford, J.P. (1965), Fundamental Statistics in Psychology & Eduation, McGraw Hill Book Company, New York.
4- Lindgren, B.W. (1975), Basic Ideas of Statistics, Macmillan Publishing Co. Inc., New York.
5- भाटिया, तारेश, आधुनिक मनोवैज्ञानिक सांख्यिकी, लावण्य प्रकाशन, उरई
6- श्रीवास्तव, डी.एन., सांख्यिकी एवं मापन
7- अस्थाना, विपिन, शिक्षा और मनोविज्ञान में सांख्यिकी

1.14 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर –

1. स
2. ब

इकाई 2 आवृत्ति वितरणः द्विचरीय आवृति वितरण, समूह प्रदत्तों का आलेखीय प्रस्तुतीकरण– आवृत्ति बहुभुज, स्तंम्भाकृति, स्तम्भ चित्र, तोरण

इकाई संरचना

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 आँकड़ों के व्यवस्थापन का अर्थ एवं महत्व

2.4 मूल आँकड़ोंका व्यवस्थापन तथा प्रकार

2.5 आँकड़ों का प्रस्तुतीकरण एवं वितरण (आवृत्ति वितरण)

2.6 द्विचर आवृत्ति वितरण

2.7 आँकड़ों का आलेखीय निरूपण

2.8 आँकड़ों के आलेखीय निरूपण के प्रकार

- 2.8.1 आलेख बनाने की रीति
- 2.8.2 बारंबारता आयत (आयत–चित्र)
- 2.8.3 दंड चित्र या दंड आलेख
- 2.8.4 बारंबारता बहुभुज
- 2.8.5 संचयी प्रतिशत बारंबारता वक्र या ओगाइव

2.9 सार–संक्षेप

2.10 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

2.11 पारिभाषिक शब्दावली

2.12 संदर्भ ग्रंथ

2.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2.1 प्रस्तावना–

इकाई–1 में आपने सांख्यिकी के अर्थ एवं महत्व का अध्ययन करने के क्रम में मनोवैज्ञानिक मापन के बारे में भी जानकारी प्राप्त की और आप इस तथ्य से अवगत हुए कि सांख्यिकी में विभिन्न श्रोतों से प्राप्त आँकड़ों का अध्ययन एवं विश्लेषण किया जाता है। आँकड़े लिखित हों अथवा मौखिक, अंकों के रूप में हो अथवा ग्रेड के रूप में इन अंकों अथवा ग्रेडों की व्याख्या करने के लिए हमें इन्हें सार्थक ढंग से सारणीबद्ध करने की आवश्यकता होती है। तत्पश्चात् सांख्यिकीय गणनाओं द्वारा आँकड़ों का विश्लेषण किया जाता है। आँकड़ों को सरलतापूर्वक समझने के लिए उनका आलेखीय निरूपण भी किया जाता है। इस इकाई में आप आँकड़ों के प्रस्तुतीकरण एवं वितरण, आवृत्ति वितरण तथा लेखाचित्रीय अंकन के विषय में पढ़ेंगे।

2.2 उद्देश्य–

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप–

1. आँकड़ों के व्यवस्थापन के महत्व का वर्णन कर सकेंगे
2. प्राप्त आँकड़ों का सार्थक ढंग से सारणीयन तथा प्रस्तुतीकरण कर सकेंगे।
3. आलेखीय निरूपण का महत्व स्पष्ट कर सकेंगे।
4. प्राप्त आँकड़ों का उपयुक्त लेखाचित्रीय निरूपण कर सकेंगे तथा

5. आलेखीय रूप में दिए गए आँकड़ों की व्याख्या कर सकेंगे।

2.3 आँकड़ों के व्यवस्थापन का अर्थ तथा महत्व–

समंकों के संकलन के पश्चात् उन्हें नियमित या व्यवस्थित ढंग से प्रस्तुत करने की आवश्यकता होती है। अव्यवस्थित और अनियमित समंक आवश्यक सूचनाएँ प्रदान नहीं करते हैं। उन्हें सुगम और स्पष्ट बनाने के लिए व्यवस्थित तथा नियमित करना पड़ता है।

प्रदत्त व्यवस्थापन में मापन के आधार पर प्राप्त आँकड़ों या प्रदत्तों को सजातीय गुणों के आधार पर विभिन्न वर्गो में सारणीबद्ध किया जाता है। मुख्यतः व्यवस्थापन की तीन पद्धतियाँ हैं–

1. वर्गीकरण
2. सारणीयन
3. रेखाचित्र प्रस्तुतीकरण

प्रथमतः समानता या सजातीयता जैसे– लिंग के आधार पर, धर्म के आधार पर या सामाजिक स्तर आदि के आधार पर आँकड़ों का वर्गीकरण किया जाता है। तत्पश्चात् आँकड़ों के पारस्परिक सम्बन्ध को तथा प्रकृति समझने के लिए सारणीयन करते हैं। अंततः आँकड़ों को अधिक स्पष्ट रूप से समझने के लिए आँकड़ों का प्रस्तुतीकरण रेखाचित्र द्वारा करते हैं।

व्यवस्थापन से निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति होती है–

1. सर्वेक्षण द्वारा प्राप्त सांख्यिकीय आँकड़ों को आवृत्ति वितरण द्वारा व्यवस्थित तथा नियमित किया जा सकता है।
2. अव्यवस्थित और अनियमित आँकड़े वांछित सूचनाएँ प्रदान नहीं करते हैं, अतः उन्हें सुगम और स्पष्ट बनाने के लिए व्यवस्थित तथा नियमित करने से आँकड़े सार्थक बन जाते हैं और उन्हें सरलता से समझा जा सकता है।
3. आवृत्ति वितरण तालिका बनाने के पश्चात् केवल तालिका देखने मात्र से ही आँकड़ों का अर्थ ज्ञात किया जा सकता है।
4. अव्यवस्थित आँकड़ों को व्यवस्थित करने से हम उनके स्वरूप को सरलता से समझ सकते हैं।
5. आवृत्ति वितरण तालिका आँकड़ों के तुलनात्मक अध्ययन को सरल तथा स्पष्ट करता है।
6. आँकड़ों के वर्गीकरण के बाद सारणीयन द्वारा उनके सजातीय गुण अधिक स्पष्ट हो जाते हैं।

2.4 मूल आँकड़ों का व्यवस्थापन तथा प्रकार–

शिक्षा के क्षेत्र में अध्ययनों तथा अनुसंधान से प्राप्त आँकड़े अधिक विस्तृत तथा संख्या में अधिक होते हैं। इन आँकड़ों को स्पष्ट एवं सार्थक बनाने की एक प्रक्रिया व्यवस्थापन है, जो मुख्यतः तीन प्रकार से किया जा सकता है–

1. साधारण व्यवस्था
2. आवृत्ति व्यवस्था
3. आवृत्ति वितरण

1. **साधारण व्यवस्था–**

व्यवस्थापन की यह सरलतम विधि है। इसमें प्राप्तांकों को आरोही या अवरोही क्रम में व्यवस्थित करते हैं। प्राप्तांकों की संख्या कम होने पर इस विधि का प्रयोग किया जाता है। प्राप्तांकों को एक क्रम में सजाने पर उनकी प्रकृति स्पष्ट हो जाती है। इस विधि का सबसे बड़ा दोष यह है कि इससे अन्य सांख्यिकीय गणनाओं को करने में सुविधा नहीं होती है।

उदाहरणार्थ, नीची दी गई 15 बच्चों की ऊँचाई पर विचार करें–

ऊँचाई (समी. में) 143, 156, 140, 148, 150, 149, 142, 148, 144, 150, 152, 148, 149, 141, और 145

उपर्युक्त आँकड़ों को देखकर बच्चों की ऊँचाई के संबंध में कुछ भी नहीं कहा जा सकता है। परन्तु इन आँकड़ों को आरोही (बढ़ते क्रम) में सजाने पर एक विशेष ऊँचाई तक के बच्चों की संख्या आसानी से बताई जा सकती है–

ऊँचाई (सेमी. में) 140, 141, 142, 143, 144, 145, 148, 148, 148, 149, 149, 150, 150, 152, 156

अब सरसरी तौर पर देखकर ये कहा जा सकता है कि बच्चों की लम्बाई 140 सेमी. से 156 सेमी. तक विचरित करती है। तीन बच्चों की लम्बाई 148 सेमी. से कम और 148 सेमी. अधिक लम्बाई वाले बच्चों की संख्या समान है। इसी प्रकार एक विशेष ऊँचाई तक के बच्चों की संख्या तुरन्त बताई जा सकती है।

2. **आवृत्ति व्यवस्था–**

व्यवस्थापन की इस विधि में प्राप्तांकों का व्यवस्थापन आवृत्तियों के आधार पर किया जाता है। इस क्रिया से प्राप्तांकों की प्रकृति अधिक स्पष्ट हो जाती है। यह विधि साधारण व्यवस्था विधि से श्रेष्ठ है, परन्तु इसका प्रयोग भी तभी किया जाना चाहिए जब प्राप्तांकों की संख्या कम हो। सामान्यतया यह व्यवस्था से उस समय अधिक श्रेष्ठ है जब कुछ प्राप्तांकों की आवृत्ति बार–बार हुई हो।

3. **आवृत्ति वितरण–**

किसी प्राप्तांक के बार–बार आने की प्रवृत्ति को आवृत्ति कहते हैं। इन आवृत्तियों को सुविधानुसार भिन्न–भिन्न वर्गो में वितरित या प्रदर्शित करने की विधि को आवृत्ति वितरण कहते हैं।

मिनियम किंग एवं बेचर के शब्दों में ''प्राप्त प्रदत्त के व्यवस्थापन की प्रक्रिया को आवृत्ति वितरण कहा जाता है।''

2.5 आँकड़ों का प्रस्तुतीकरण एवं वितरण (आवृत्ति वितरण)

आवृत्ति वितरण तालिका बनाने की विधि–विभिन्न श्रेणियों में आवृत्ति वितरण बनाने की विधियों का वर्णन नीचे दिया गया है–

खंण्डित श्रेणी में–एक खण्डित श्रेणी वह है, जिसमें व्यक्तिगत मूल्य एक–दूसरे से निश्चित मात्रा में भिन्न होते हैं। इस श्रेणी में केवल पदों की पुनरावृत्ति की संख्या गिनते हैं। इस संख्या श्रेणी को आवृत्ति कहा जाता है। प्राप्तांकों की आवृत्ति को गिनने के लिए मिलान चिन्ह का प्रयोग किया जाता है। प्रत्येक वर्ग में आने वाले एक पद के लिए एक तिरछी रेखा, इस वर्ग के सामने रखी जाती है। पाँचवे पद के लिए पिछली चार रेखाओं को काटती हुई एक रेखा खींची जाती है।

उदाहरण–1 एक कक्षा के 25 विद्यार्थियों के गणित के प्राप्तांक निम्नांकित हैं–
15, 20, 25, 30, 20, 25, 30, 30, 40, 45, 50, 40, 45, 35, 30, 25, 10, 20, 30, 20, 40, 50, 30, 25, 40
दिए गए आंकड़ों की सहायता से एक विच्छिन्न आकृति वितरण की रचना कीजिए।

हल :

आवृत्ति अंक	मिलान चिन्ह	आवृत्ति
10	|	1
15	|	1
20	||||	4
25	||||	4
30	|	6
35	|	1
40	||||	4
45	||	2
50	||	2
	कुल	25

अखण्डित श्रेणी में आवृत्ति वितरणः– अखण्डित श्रेणी में आवृत्ति वितरण की रचना करने से पहले निम्न बिन्दुओं की जानकारी आवश्यक है।

1. **प्रसार** (Range) :-आंकड़ों में उच्चतम अंक तथा न्यूनतम अंक के अन्तर को प्रसार कहते हैं।
   जैसे – यदि प्रेक्षण में आंकड़े 10, 15, 8, 11, 5 12, 10, 7, 20, 13, 15 हों तो
   परिसर = अधिकतम अंक – न्यूनतम अंक
   = 20 – 5 = 15
2. **वर्गान्तर और उनकी संख्या** (Class Interval):-प्रसार ज्ञात करने के पश्चात वर्गान्तरों की संख्या ज्ञात की हाती है। वर्गान्तरों की संख्या प्रायः कितनी होनी चाहिए इसके लिए कोई निर्धारित सिद्धन्त व नियम नहीं हैं। परन्तु वर्गान्तर न ही बहुत साधारण तथा 5 से लेकर 20 तक हो सकती है, पन्तु परिणामों की शुद्धता को देखते हुए वर्गान्तरों की संख्या 10 से 15 तक रखना ही अनेक विद्वान उचित मानते हैं। वर्गान्तर बनाने की प्रमुख दो विधियां हैं। जो निम्नलिखित हैं:–

(i):-अपवर्जी या अतिव्यापी विधि (Overlapping method)0 से 99 तक के अंकों को हम इस प्रकार वर्गीकृत कर सकते हैं–
(क) 0-10, 10-20, 20-30, 30-40, 40-50, 50-60, 60-70, 70-80, 80-90, 90-100

यहां 10 वर्ग अन्तरालों में 0 से 100 तक के अंकों को विभाजित किया गया है। वर्ग अन्तराल 0–10 निम्न सीमा 0 और उच्चसीमा 10 हैं।

यहां किसी वर्ग अंतराल की उच्चसीमा बाद वाले अंतराल की निम्नसीमा के बराबर है। इसलिए जिस विद्यार्थी ने 20 अंक प्राप्त किया है वह 0–20 तथा 20–40 दोंनों में गिना जा सकता है। लेकिन एक अंक को एक ही वर्ग में गिनता है। इसलिए वर्ग अंतराल 0–20 में 0 से बड़े या बराबर, लेकिन 20 से छोटे, 20–40 में 20 से बड़े या बराबर लेकिन 40 से छोटे अंकों को लेने पर यह कठिनाई दूर हो जाती है। अपवर्ती विधि में वर्ग अंतराल की लम्बाई = उच्चसीमा निम्न सीमा अतः वर्ग अंतराल 0– 10 की लंबाई = 10–0–10

(ii)समावेशी या अनतिव्यापी विधि (Nonover lapping method):-0 से 99 तक के अंकों को हम निम्नांकित प्रकार से भी वर्गीकृत कर सकते हैं–

(क) 0 से 9 तक (0–9), से 19 तक (10–19), 20 से 29 तक (20–29), 30 से 39 तक, 70 से 79 तक, 80 से 89 तक तथा 90 से 99 तक।

यहां 0 से 99 तक को 10 वर्गों या वर्ग अंतरालों में बांटा गया है। प्रत्येक वर्ग में 10 अलग–अलग अंक हो सकते हैं। 0 से 9 तक के वर्ग में 0,1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8 और 9 हो सकते हैं। वर्ग 0–9 की निम्न सीमा 0 और उच्च या उपरी सीमा 9 है। इसी प्रकार 10 से 19 की निम्न सीमा 10 और उच्च या उपरिसीमा 19 हे।

(ख) 0–19, 20–39, 40–59, 60–79, 80–99 यहां 0 से 99 को 5 वर्गों में बांटा गया है। प्रत्येक वर्ग में 20 अलग–अलग अंक हो सकते हैं। वर्ग 0–19 की निम्न सीमास 0 और उच्च या उपरिसीमा 19 है। यहां किसी भी वर्ग की अंतराल की उच्च सीमा उसके बाद वाले वर्ग अंतराल की निम्नसीमा से अलग है। यहां वर्गों के बीच रिक्ति है, जो यहां 1 है।

2. समावेशी विधि में वर्ग अंतराल की लंबाई (वर्ग–आयाम):–

वर्ग विस्तार = (उच्च सीमा– निम्नसीमा) + 1 (रिक्ति) के बराबर है। इसलिए 0–19 वर्ग अंतराल की लंबाई = (19-0) + 1 (19 + 1) 20 है।

साधारणतः प्रत्येक वर्ग अंतराल की लंबाई प्रत्येक वर्ग अंतराल के लिए बराबर ली जाती है। वर्गान्तरों को आरोही या अवरोही किसी भी क्रम में लिखा जा सकता है।

1. वास्तविक उपरीसीमा, वास्तविक निम्न सीमाः–

यदि वितरण समावेशी विधि में हो तो उसे अपवर्जी विधि में बदला जा सकता है। उपदाहरण के लिए वितरण–

0–9, 10–19, 20–29 इत्यादि। यहां वर्गों के बीच की रिक्ति 1 है। रिक्ति का आधा = 0.5, यदि आंकड़े पूर्णांक हों तो इस राशि को निम्न सीमा में घटाकर तथा उच्चसीमा में जोड़कर वर्ग अंतराल निम्न प्रकार से लेते हैं–

–0.5– 9.5, 9.5– 19.5, 19.5–29.5 इत्यादि।

उपर्युक्त वर्ग अंतराल अपवर्जी विधि में हैं। इससे वर्ग अंतरालों की बारबारताएं नहीं बदलती हैं। लेकिन किसी वर्ग अंतराल की निम्न सीमा और उच्च सीमा बदल जाती हैं। इन परिवर्तित सीमाओं को क्रमशः वास्तविक निम्न सीमा और वास्तविक उच्च सीमा कहा जाता है।

अतः वितरण 3–8, 9–14, 15–20 इत्यादि होने पर, वर्ग अंतराल 9–14 की वास्तविक निम्न सीमा = 8.5 और वास्तविक उच्च सीमा 14.5 होंगी।

स्पष्टतः अपवर्जी विधि में दिए गए वर्ग अंतरालों के लिए निम्न सीमा और वास्तविक निम्न सीमा समान हैं। इसी प्रकार उच्च सीमा और वास्तविक उच्च सीमा भी समान होंगी।

3. आवृत्तियों को चिन्हों द्वारा प्रदर्शित करनाः—

सभी प्राप्तांकों के वर्गान्तर बना लेने के बाद वर्गान्तारों सामने आवृत्तियों के चिन्हों द्वारा प्रदर्शित करते हैं। किसी वर्गान्तर के सामने यदि एक आवृत्ति हैं तो एक अंकदण्ड (I) लगायेंगे, दो हैं तो दो अंकदण्ड लगाऐंगे (II) तीन हैं तो (III) चार हैं तो (IIII) अंकदण्ड लगायेंगे, लेकिन पांच के लिए चार अंकदण्डों को काटकर पांच अंकदण्ड का चिन्ह (IIII) लगाएंगे। काटने के लिए IIII, IIII आदि कोई भी विधि अपनाई जा सकती है।

आवृत्ति तालिका बनाने में, दिए गए आंकड़ों के प्रथम समंक को पढ़कर देखेंगे कि व किस वर्गान्तर में आता है। जिस वर्गान्तर में अंक आता हो, उसके सामने एक अंकदण्ड लगा दीजिए। इसी प्रकार से सभी प्राप्तांकों को पढ़कर अंकदण्ड संबंधित वर्गान्तर के सामने लगा देंगे।

4. अंकदण्डों (टैली मार्क) को आवृत्तियों में परिवर्तित करनाः—

वर्गान्तरों के सामने टैली मार्क को लगाने के पश्चात टैली मार्क को जोड़कर आवृत्ति वाले स्तम्भ में जोड़ने से प्राप्त संख्या को संबंधित वर्गानतर के सामने लिखते हैं। इसी प्रकर से सभी वर्गान्तरों के सामने के टैली मार्क को अंकों में परिवर्तित कर देते हैं। अन्त में आवृत्तियों का योग लिख देते हैं। आवृत्ति वितरण तालिका की कुल आवृत्तियों का योग प्राप्तांकों के योग के बराबर होता है।

उदाहरण— 2ः— निम्नलिखित अवयवस्थित प्राप्तांक का आवृत्ति वितरण बनाइए—

42	45	36	35	30	31	40
65	60	75	70	38	39	41
79	39	35	80	79	72	69
55	51	51	50	55	59	69
55	42	72	71	67	69	45
62	60	59	58	82		

हलः— न्यूनतम अंक— 30

उच्चतम अंक— 80

प्रसार = उच्चतम अंक— न्यूनतम अंक

= 80—30 =50

वर्गान्तर का आकार = प्रसार / वर्गानतरों की संख्या =50/10=5

वर्गान्तरों की सख्या = 50/5 +1

= 10 + 1 = 11

आवृत्ति वितरण तालिका (आरोही क्रम में व्यवस्थित) :—

वर्ग अंतराल C.I.	टैली मार्क (अंकदण्ड)	आवृत्ति (f)
80-84	||	2
75-80	|||	3
70-75	||||	4
65-70	||||	5
69-65	|||	3

55-60	||||	6
50-55	||	2
45-50	||	2
40-45	||||	5
35-40	|||||	6
30-35	||	2
		N = 40

आवृत्ति वितरण तालिका (आरोही क्रम में व्यवस्थित)

वर्ग अंतराल C.I.	टैली मार्क (अंकदण्ड)	आवृत्ति (f)
30-35	||	2
35-40	|||||	6
40-45	||||	5
45-50	||	2
50-55	||	2
55-60	|||||	6
60-65	|||	3
65-70	||||	5
70-75	||||	4
75-80	|||	3
80-85	||	2
		N = 40

उपरोक्त दोनों ही आवृत्ति वितरण तालिका अपवर्जी विधि से निर्मित है। उपरोक्त आंकड़ों को दो अन्य विधियां यथा समावेशी तथा शुद्ध, वर्गीकृत श्रृंखला द्वारा भी प्रस्तुत किया जा सकता है।

समावेशी विधि

C.I.	f
80-84	2
75-79	3
70-74	4
65-69	5
60-64	3
55-59	6
50-54	2
45-49	2
40-44	5
35-39	6
30-34	2
	N = 40

शुद्ध वर्गीकृत श्रृंखला

C.I.	f
79.5-84.5	2
74.5-79.5	3
69.5-74.5	4
64.5-69.5	5
59.5-64.5	3
54.5-59.5	6
49.5-54.5	2
44.5-49.5	2
39.5-44.5	5
34.5-39.5	6
29.5-34.5	2
	N = 40

5. वर्गान्तर का मध्य बिन्दु या वर्ग चिन्हः–

किसी वर्ग अंतराल का वर्ग चिन्ह, उस अंतराल का मध्य बिन्दु होता है। इस प्रकार
मध्य बिन्दु या वर्ग चिन्ह = उच्च सीमा + निम्न सीमा / 2 (अपवर्जी विधि के लिए)

= वास्तविक उच्चसीमा + वास्तविक निम्नसीमा / 2

जैसे अपवर्जी विधि में वर्ग अंतराल 20–40 का

वर्ग चिन्ह = 20+40 / 2 = 60 / 2 = 30

समावेषी विधि में 20–40 का वर्ग चिन्ह = 19.5+40.5 / 2

= 60 / 2 = 30

मध्य बिन्दुओं की सहायता से आवृत्ति वितरण तालिका बनानाः–

उदाहरणः– 3 निम्नलिखित मध्य बिन्दुओं से आवृत्ति वितरण बनाइए–

मध्य बिन्दुः– 42 37 32 27 22 17 12

सूत्रः–X± मध्य बिन्दु का अन्तर / 2

जबकि X= मध्य बिन्दु

हल– 42– 37= 5

उपर्युक्त मध्य बिन्दुओं में प्रत्येक के बीच 5 का अन्तर है। इसलिए वर्गान्तर का आकार भी 5 हुआ। वर्गान्तर के आकार में 2 से भाग देकर, जो संख्या प्राप्त हो उसे मध्य बिन्दु से घटाने पर वर्गान्तर की निम्नतम सीमा प्राप्त होगी तथा मध्य बिन्दु में जोड़ने से वर्गान्तर की उच्चतम सीमा प्रापत होगी।

उपरोक्त उदाहरण में मध्य बिन्दु 4–2 के वर्गान्तर की निम्नतम सीमा=

42– 5 / 2 = 42– 2.5 = 39.5

तथा उच्चतम सीमा = 42 + 5 / 2 = 42 +2.5 = 44.5

इसी प्रकार अन्य वर्गान्तरों की निम्नतम तथा उच्चतम सीमा ज्ञात कर लेते हैं। इस प्रकार जो श्रृंखला प्राप्त होती है। उसे शुद्ध वर्गीकरण श्रृंखला कहते हैं। इस श्रृंखला की सहायता से अपवर्जी तथा समावेषी श्रृंखला भी बना सकते हैं।

मध्य बिन्दु	शुद्ध वर्गीकृत श्रृंखला	अपवर्जी श्रृंखला	समावेशी श्रृंखला
42	2.5 39.5-44.5	40-45	40-44
37	2.5 34.5-39.5	35-40	35-39
32	2.5 29.5-34.5	30-35	30-34
27	2.5 24.5-29.5	25-30	25-29
22	2.5 19.5-24.5	20-25	20-24
17	2.5 14.5-19.5	15-20	15-19
12	2.5 9.5-14.5	10-15	9-14

6.संचयी बारंबारता (Cumulative frequency) :-

उदाहरण – 4 :

वर्ग अन्तराल	20-30	30-40	40-50	50-60	60-70	70-80	80-90	90-100
बारंबारता	2	1	1	0	3	8	10	5

उपरोक्त उदाहरण में यदि हम जानना चाहें कि 30 से कम, 40 से कम, 50 से कम इत्यादि अंक कितने विद्यार्थियों ने प्राप्त किए थे तो बारंबारता सारणी में एक स्तम्भ और जोड़ना होगा जिसमें किसी वर्ग के सामने उसकी संगत बारंबारता और पहले के वर्गों की बारंबारताओं का योगफल लिख दिया जाता है जिसे उस वर्ग अन्तराल की संचयी बारंबारता कहा जाता है।

वर्ग अंतराल C.I.	बारंबारता f	संचयी बारंबारता c.f.
20-30	2	2
30-40	1	3 (अर्थात 2+1)
40-50	1	4 (अर्थात 2+1+1)
50-60	0	4 (अर्थात 2+1+1+1+0)
60-70	3	7 (अर्थात 2+1+1+1+0+3)
70-80	8	15 (अर्थात 2+1+1+0+3+8)
80-90	10	25 (अर्थात 2+1+1+0+3+8+10)
90-100	5	30 (अर्थात 2+1+1+0+3+8+10+5)
	N = 30	

2.6 द्विचर आवृत्ति वितरणः–

इसके अन्तर्गत दो चरों से सम्बन्धित प्राप्तांकों को संयुक्त रूप में व्यवस्थित किया जाता है। दो चरों के प्राप्तांकों को क्रमशः X तथा Y कहा जाता है। X चर के अधिकतम तथा न्यून्यतम प्राप्तांकों के आधार पर वर्गान्तर निर्मित करते हैं जिनको स्तम्भ के रूप में प्रदर्शित करते हैं। Y चर के भी अधिकतम तथा न्यूनतम प्राप्तांकों के आधार पर वर्गान्तर निर्मित करते हैं, जिनको बांयी ओर पंक्ति के रूप में प्रदर्शित करते हैं। प्रथम व्यक्ति के X चर के प्राप्तांक तथा Y चर के प्राप्तांक दोनों को ध्यान में रखते हुए एक टैली चिन्ह अंकित करते हैं। इसी प्रकार क्रमशः सभी व्यक्तियों के X तथा Y चर के आधार पर टैली चिन्हों को अंकित किया जाता है। तत्पश्चात् सभी टैली चिन्हों का योग कर प्रत्येक प्रकोष्ठ की आवृत्ति को प्रदर्शित करते हैं। इस प्रकार तैयार द्वि–चर आवृत्ति वितरण को प्रकीर्णन चित्र कहा जाता है, जिसके आधार पर प्रोडेक्ट मोमेन्ट विधि द्वारा सहसम्बन्ध गुणांक की गणना की जाती ळें

छात्रों का क्रमांक	बुद्धि लब्धि प्राप्तांक (X चर)	उपलब्धि प्रेरणा प्राप्तांक (Y चर)
1	101	56
2	87	43
3	102	60
4	92	46
5	90	45
6	115	65
7	112	62
8	107	60
9	126	अधिकतम अंक – 68
10	116	62
11	105	57
12	120	62
13	124	67
14	107	67
15	128	52
16	101	68
17	115	64
18	95	65
19	98	50
20	86 – न्यूनतम प्राप्तांक	58
21	112	60
22	118	62
23	106	60
24	99	53
25	119	56
26	102	63
27	95	58
28	104	51
29	107	54
30	114	55
31	120	57
32	98	60
33	102	52
34	108	55
35	111	55
36	122	58
37	अधिकतम अंक – 128	न्यूनतम अंक – 41
38	109	69
39	122	65
40	89	43
41	98	52
42	108	58

43	105	55
44	92	60
45	90	61
46	89	55
47	110	49
48	111	48
49	115	49
50	106	44

उदाहरण :

निम्नलिखित 50 छात्रों के बुद्धि लब्धि प्राप्तांक (X चर) तथा उपलब्धि प्रेरणा प्राप्तांक (X चर) दिये गये हैं। द्वि–चर आवृत्ति वितरण प्रस्तुत करें।

द्वि–चर आवृत्ति वितरण के चरण

1. सर्वप्रथम X चर तथा Y चर पर के प्राप्तांकों का अधिकतम अंक तथा न्यूनतम प्राप्तांक ज्ञात किया गया।
2. X चर अर्थात् बुद्धि लब्धि के न्यूनतम प्राप्तांक 86 तथा अधिकतम 128 प्राप्तांक के आधार पर वर्ग अन्तराल 5 मानते हुए वर्गान्तर निर्मित किये गये। प्रथम वर्गान्तर इस प्रकार निर्मित किया गया (85–89) जिसमें न्यूनतम प्राप्तांक 86 सम्मिलित हो तथा अन्तिम वर्गान्तर (125–129) इस प्रकार का रखा गया जिसमें अधिकमत प्राप्तांक 128 स्थित हो।
3. Y चर अर्थात उपलब्धि प्रोरणा के न्यूनतम प्राप्तांक 41 तथा अधिकतम प्राप्तांक 68 के आधार पर 40–44 से 65–69 तक 5 का समान अन्तराल रखते हुए वर्गान्तर निर्मित किये गये।
4. X चर के वर्गान्तरों को स्तम्भ के रूप में तथा Y चर के प्राप्तांकों को बांयी ओर पंक्ति के रूप में व्यवस्थित किया गया।
5. प्रथम छात्र के X चर अर्थात बुद्धि लब्धि के प्राप्तांक 101 तथा Y चर अर्थात् उपलबिध प्रेरणा प्राप्तांक 56 को ध्यान में रखते हुए 100–104 वर्गान्तर व 55–59 वर्गान्तर के मध्य एक टैली चिन्ह अंकित किया गया। इसी प्रकार दोनों प्राप्तांकों के आधार पर टैली चिन्हों को अंकित किया गया। तत्पश्चात् सभी प्रकोष्ठ के टैली चिन्हों का योग कर आवृत्तियों के रूप में लिखा गया है।

   इस प्रकार निम्नलिखित रूप में प्रकीर्णन चित्र निर्मित होता है –

बुद्धिलब्धि (X चर)

	वर्गान्तर (C.I.)	80-89	90-94	95-99	100-104	105-109	110-114	115-119	120-124	125-129	f(y)
उपलब्धि प्रेरणा (Y चर)	65-69							II (2)	II (2)	III (3)	7
	60-64		II (2)		II (2)	II (2)	II (2)	III (3)	III (3)		14
	55-59	I (1)		I (1)	III (3)	IIIII I (6)	II (2)				13
	50-54			IIIII (5)	I (1)	I (1)					7
	45-49		II (2)				II (2)	I (1)			5
	40-44	III (3)				I (1)					4
	f(x)	4	4	6	6	10	6	6	5	3	50

प्रकीर्णन चित्र

उपर्युक्त प्रकीर्णन चित्र द्वि–चर आवृत्ति वितरण को प्रदर्शित करता है।

अभ्यास – प्रश्न 'क'

1. **यदि किसी आवृत्ति वितरण का अधिकतम अंक 80 तथा न्यूनतम अंक 25 है तो उसका प्रसार होगा –**
   (अ) 55 (ब) 105
   (स) 2000 (द) इनमें से कोई नहीं
2. **वर्ग–अन्तराल 10–19 की वास्तविक निम्न सीमा होगी –**
   (अ) 10 (ब) 9.5
   (स) 19 (द) 19.5

2.7 आंकड़ों का आलेखीय निरूपण

आप अनुभव करते होंगे कि आंख दिमाग से जल्दी काम करती है। किसी चीज को समझने या समझाने में बातों से ज्यादा चित्र अपयोगी होता है। इसलिए कहा जाता है कि एक चित्र हजार शब्दों के समान है।

जनता के ज्ञान के लिए सरकारी विभाग समाज या देश संबंधी विभिन्न तथ्यों जैसे– जनसंख्या, खाद्य उत्पादन आदि का विवरण चित्रों के सहारे दैनिक पत्रिका या सरकारी प्रकाशनों में देता है। इससे लोगों का ध्यान आकर्षित होता है और चित्र को एक नजर देखते ही वे तथ्यों को आसानी से समझ जाते हैं। इस प्रकार तुलनात्मक विषयों को प्रदर्शित करने के लिए चित्रों की सहायता ली जाती है। इनमें कुछ हैं– दंड आलेख, आयचित्र, बारंबारता वक्र, बारंबारता बजहुभुज, चित्रालेख, वृत्तचार्ट, संचयी बारंबारता वक्र आदि।

2.8 आंकड़ों के आलेखीय निरूपण के प्रकार–

आंकड़ों को प्रस्तुत करने के मानक आलेखीय ढंग निम्नांकित हैं–

1. दण्ड चित्र या दण्डालेख
2. बारंबारता आयत (हिस्टोग्राम)
3. बारंबारता बहुभुज
4. संचयी बारंबारता वक्र (ओजाइव)

2.8.1 आलेख (रेखाचित्र) बनाने की रीतिः–

आलेख बनाते समय कुछ प्रमुख नियमों पर विशेष ध्यान देना चाहिए। ये नियम कुछ इस प्रकार हैं–

1. स्वतंत्र चल राशि (Independent Variable)को X-अक्ष पर तथा परतंत्र चल राशि (Dependent Variable)को Y-अच पर प्रदर्शित करना चाहिए।
2. X-अक्ष Y-अक्ष की अपेक्षा बड़ी होनी चाहिए।
3. एक विशेष प्रदत्त सामग्री के लिए वही रेखाचित्र बनाना चाहिए जो उसके सही अर्थ को स्पष्ट कर सके।
4. रेखा चित्र नामांकित होना चाहिए तथा उस पर उसका सही–सही पैमाना बना होना चाहिए।
5. रेखाचित्र आकर्षक होना चाहिए।
6. रेखाचित्र पैमाने के अनुसार बना हुआ होना चाहिए अर्थात् रेखाचित्र की माप सही होनी चाहिए।

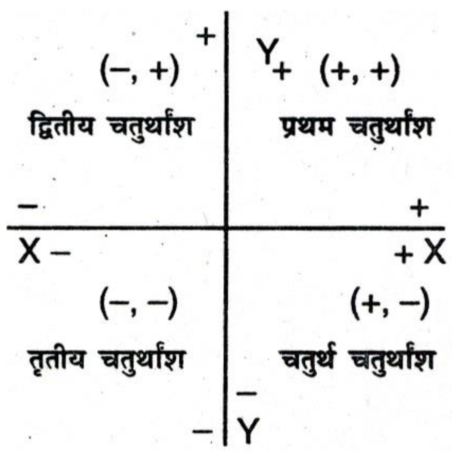

(चित्रः– कार्तीय चिन्ह परिपाटी को दर्शाता चित्र)

मनोविज्ञान और शिक्षा में प्रयुक्त सांख्यिकी में बहु या प्रथम पाद का ही प्रयोग किया जाता है। अर्थात् घनात्मक मूल्य वाले क्षेत्र का ही प्रयोग किया जाता है। ग्राफ का पैमाना मानते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि Y-अक्ष की अपेक्षा X-अक्ष अवश्य बड़ा होना चाहिए। विद्वानों के अनुसार ऊंचाई तथा लम्बाई के मध्य 3:4 का अनुपात होना चाहिए। इससे बनने वाली आवृत्ति आकर्षक एवं प्रभावशाली होगी।

2.8.2 बारंबारता आयत (हिस्टोग्राम):–

सिस्पसन और काफ्का (1965) के अनुसार सांख्यिकी में स्तम्भाकृति का तात्पर्य उस ग्राफ से है जिसमें आवृत्तियों को खड़े हुए आयतों के द्वारा प्रदर्शित किया जाता है।
बारंबारता आयत बनाते समय निम्नलिखित पदों को ध्यान में रखना चाहिएः–

पद 1ः– दो सीधी रेखाएं एक–दूसरे के लम्बवत् खींचनी चाहिए। इनमें से कोटि अक्ष ग्राफ कागज के बाएं सिरे की ओर तथा भुजाक्ष ग्राफ कागज की तली पर खींचनी चाहिए।

पद 2ः– कोटि अक्ष अर्थात् Y-अक्ष पर तथा भुजाक्ष अर्थात् X-अक्ष पर अंकित करें। 0 वहां पर अंकित करें या लिखें, जहां दोनों रेखाएं परस्पर काटती हैं।

पद 3ः– इसके पश्चात् पदः Y-अक्ष पर आवृत्ति वितरण अंक अर्थात् वर्गान्तर एक निश्चित दूरी के अन्तर पर लिखने चाहिए। इस कार्य के लिए वर्गान्तर की यदि शुद्ध सीमाएं ली जाएं तो अति उत्तम होगा।

पद 4ः– कोटि अक्ष पर आवृत्तियां अंकित करनी चाहिए। अक्ष का मापक ऐसा निर्धारण कारना चाहिए कि अधिकतम आवृत्तियों की रेखा की ऊंचाई आयत चित्र की ऊंचाई का 75 प्रतिशत हो।

पद 5ः– इसके पश्चात् आयत खींचने चाहिए। इस प्रकार सभी वर्गान्तरों के आयत आपस में एक–दूसरे से जुड़े रहते हैं। यदि वर्गान्तर समावेशी हैं तो पहले उन्हें अपवर्जी बना लेना चाहिए। बारंबारता आयत चित्र का क्षेत्रफल समस्त आवृत्तियों का प्रतिनिधित्व करता है।

उदाहरण– 5 निम्न बारंबारता बंटन का बारंबारता आयत (आयत चित्र) बनाएं

वर्ग अन्तराल	35-40	30-35	25-30	20-25	15-20	10-15	5-10
बारंबारता	2	3	5	6	4	3	2

हलः बारंबारता आयत बनाने के लिए X-अक्ष पर वर्ग अंतराल की सीमाएं पहले की तरह निश्चित कर लेते हैं।

Y-अक्ष पर बारंबारताएं 1 से 6 तक अंकित कर लेते हैं।

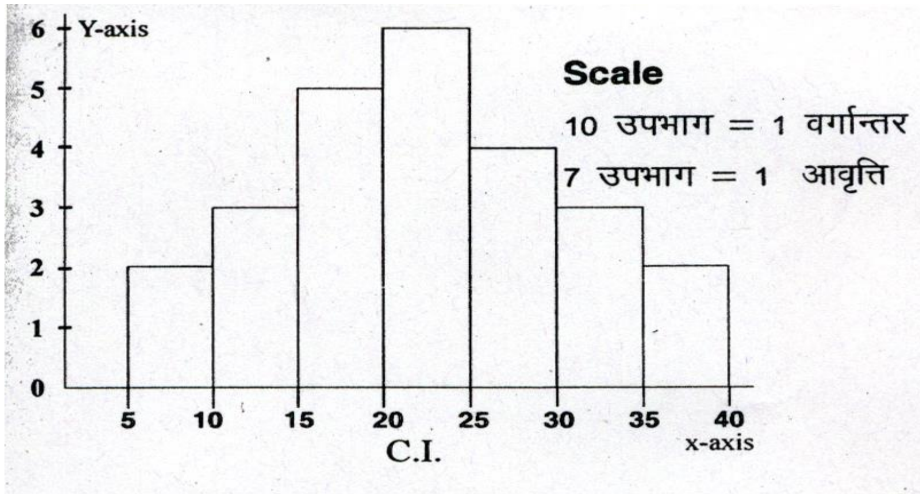

(चित्रः वर्गान्तर की आवृत्तियों को प्रदर्शित करता आयत चित्र)

2.8.3 दंड चित्र या दण्डालेख (Bar Diagram) :-

असतत प्रवृत्ति के चर को बारंबारता आयत द्वारा नहीं बनाया जा सकता क्योंकि वर्गों का विस्तार तुलनीय नहीं होता है। इस प्रकार के चरों को बारंबारता आयत से मिलता जुलता एक साधारण रखोचित्र जिसे दंड चित्र कहते हैं। द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है।

सांख्यिकीय आंकड़ों की आपेक्षिक स्थिति को दर्शाने के लिए यह एक सरल आलेख है। दंड आलेख में विन्यस्त आंकड़े को उदग्र या क्षैतिज दंडों से दिखाया जाता हैं, दंडों की चौड़ई बराबर होती है और उनकी लंबाई आंकड़ों की महत्ता के समानुपाती होती है। दंडों की चौड़ाई और दो लगातार दंडों के बीच की दूरी कुछ भी ली जा सकती है। परन्तु दंड आलेख को आकर्षक बनाने के लिए लगातार दंडों के बीच की दूरी बराबर ली जाती है।

उदाहरण– 6: निम्नलिखित समंकों के आधार पर विभिन्न जाति की कार्यकाजी महिलाओं की व्यावसायिक समस्याओं का दंड–चित्र बनाइये –

कार्यकाजी महिलाओं की जाति	वैश्य	ब्राह्मण	कायस्थ	क्षत्रिय	दलित	पिछड़ी जाति
व्यावसायिक समस्या औसत	40	43	33	35	48	49

इन आंकड़ों को एक दंड आलेख द्वारा प्रदर्शित कीजिए।

हल– जाति को X- अक्ष पर तथा औसत को Y- अक्ष पर प्रदर्शित किया गया है। X- अक्ष तथा Y- अक्ष में 5:4 का अनुपात रखा गया है। सभी स्तम्भों को एक–दूसरे से समान दूरी पर बनाया गया है।

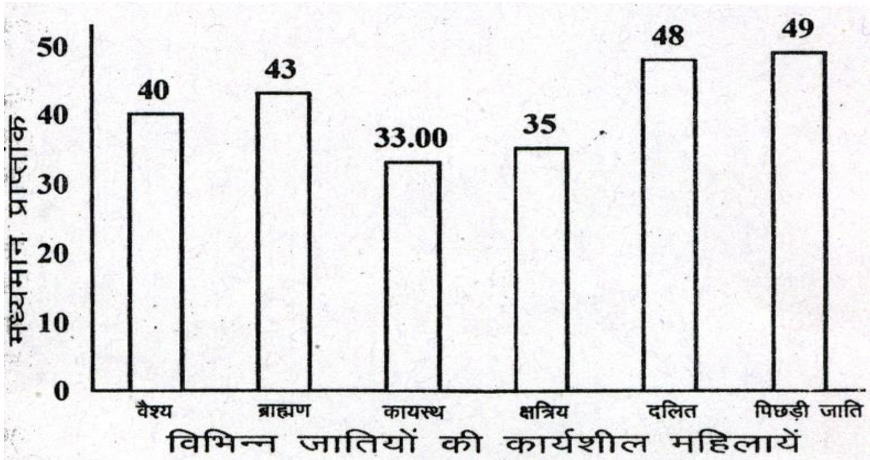

यदि एक साथ दो चरों का प्रयोग किया जाए तब भी दंड आलेख प्रभावशाली होते हैं। उदाहरण के लिए किसी शहर में पुरूष एवं स्त्रियों की संख्या दर्शानी हो तो एक ही ग्राफ पेपर पर विभिन्न रंग या छायांकन द्वारा दर्शाया जा सकता है। पुरूष तथा स्त्रियों के लिए दो दंड विभिनन रंगों में होंगे।

2.8.4 बरंबारता बहुभुज (Frequency Polygon):-

बरंबारता बहुभुज का अर्थ उस रेखाचित्र से है जिसमें बारंबारता को अनेक भुजाओं द्वारा प्रदर्शित किया जाता है।

बरंबारता बहुभुज द्वारा अनेक चल राशियों (Variables)को प्रदर्शित किया जा सकता है। इसे वर्गान्तरों के मध्य बिन्दुओं पर बनाया जाता है। आंकड़ों का तुलनात्मक विवरण प्रस्तुत करने के लिए बारंबारता बहुभुज का ही निर्माण करते हैं।

बरंबारता बहुभुज बनाने के लिए चरों के मूल्य X- अक्ष पर और बारंबारता ग्राफ पेपर के Y- अक्ष पर लिए जाते हैं। बारंबारता बहुभुज बनाने के लिए वर्गान्तरों के मध्य बिन्दु उनके मध्य बिन्दु दिखाए जाते हैं। यहां एक–एक मध्य बिन्दु सबसे नीचे वाले अन्तराल से पहले और सबसे ऊपर वाले अन्तराल के बाद भी अंकित करने होते हैं। अब एक–एक मध्य बिन्दु को लेकर उनके ठीक ऊपर संबंधित बारंबारताएं दिखाने के लिए बिन्दु अंकित किए जाते हैं। दो अतिरिक्त मध्य बिन्दुओं पर बारंबारता शून्य होती हैं इसलिए इन बारंबारताओं को X- अक्ष पर ही दर्शाया जाता है। अब साथ–साथ अंकित हुए दो–दो बिन्दुओं को सरल रेखाओं द्वारा मिलाया जाता है।

उदाहरण– 7:– नीचे दी हुई व्यवस्थित अंक सामग्री से आवृत्ति बहुभुज बनाइऐ।

C.I.	5-9	10-14	15-19	20-24	25-29	30-34	35-39
f	2	4	10	7	2	4	3

हल :

वर्गान्तर (C.I.)	बारंबारता (f)	मध्य बिन्दु
40-44 (बढ़ा हुआ C.I.)	0	42
35-39	3	37
30-34	4	32
25-29	2	27
20-24	7	22
15-19	10	17
10-14	4	12
5-9	2	7
0-4 (बढ़ा हुआ C.I.)	0	2

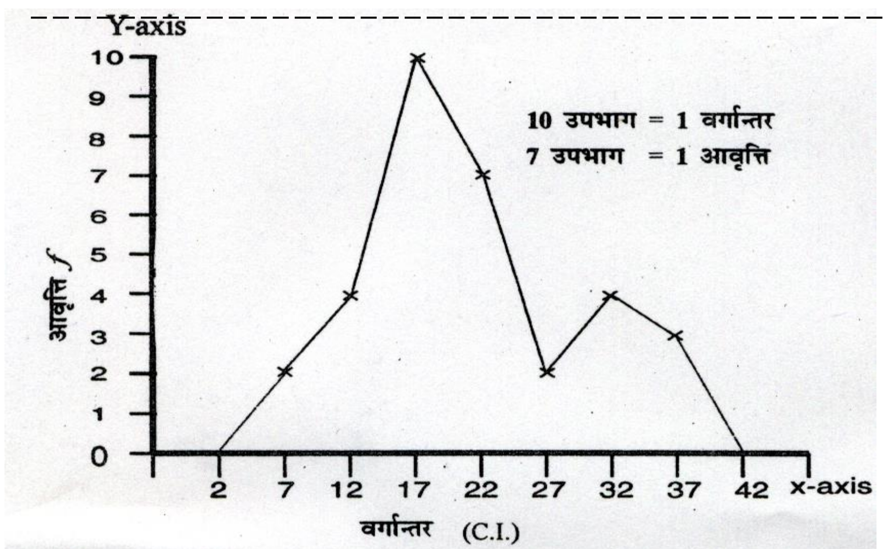

(चित्र : वर्गान्तर की आवृत्तियों को प्रदर्शित करता आवृत्ति बहुभुज)

2.8.5 संचयी प्रतिशत बारंबारता वक्र (ओगाइव):–

संचयी प्रतिशत वक्र के अन्तर्गत संचयी आवृत्तियों को प्रतिशत में परिवर्तित किया जाता है तथा उन्हें वर्गान्तरों के उच्चतम सीमांकों पर प्रदर्शित करके रेखाचित्र बनाया जाता है। संचयी प्रतिशत बारंबारता वक्र बनाते समय सबसे पहले दिए हुए व्यवस्थित अंकों के वर्गान्तरों को शुद्ध वर्गान्तरों

में परिवर्तित कर लेते हैं। फिर बारंबारताओं से संचयी बारंबारताओं को ज्ञात कर लेते हैं। फिर इन संचयी बारंबारताओं को सूत्र 100×Cf/N द्वारा प्रतिशत संचयी बारंबारता में परिवर्तित किया जाता है।

वर्गान्तरों और बारंबारताओं को परिवर्तित करने के पश्चात् कोई पैमाना मानबर वर्गान्तरों को X- अक्ष पर तथा संचयी बारंबारता को Y- अक्ष पर प्रदर्शित कर देते हैं। फिर वर्गान्तरों के उच्चतम सीमांक पर संचयी प्रतिशत बारंबारताओं को अंकित कर देते हैं।

उदाहरण– 8:– निम्नलिखित समंकों का संचयी बारंबारता वक्र बनाइए।

समंक (C.I.)	बरंबारता (f)
35-39	2
30-34	4
25-29	8
20-24	5
15-19	3
10-14	2
5-9	1
	N = 25

हल :

समंक C.I.	बारंबारता f	शुद्ध वगीकृत श्रृंखला	संचयी आवृत्तियों c.f.	प्रतिशत संचयी आवृत्ति
35-39	2	34.5-39.5	25	100
30-34	4	29.5-34.5	23	92
25-29	8	24.5-29.5	19	76
20-24	5	19.5-24.5	11	44
15-19	3	14.5-19.5	6	24
10-14	2	9.5-14.5	3	12
5-9	1	4.5-9.5	1	4
	N = 25			

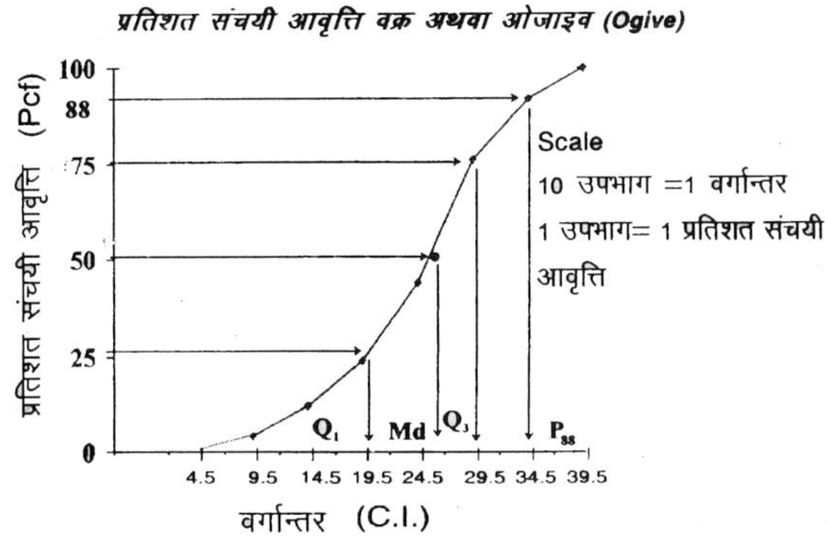

(संचयी प्रतिशत बारंबारता वक्र या ओगाइव)

अभ्यास – प्रश्न 'ख'

1. **वह रेखाचित्र जिसमें बारंबारता का अनेक भुजाओं द्वारा प्रदर्शित किया जाता है, कहलाता है –**
   (अ) दंड चित्र (ब) आयत चित्र
   (स) आवृत्ति चित्र (द) इनमें से कोई नहीं
2. **निम्नलिखित में से किस रेखाचित्र में से स्तम्भाकृतियों के बीच बराबर दूरी रखी जाती है –**
   (अ) दंड चित्र (ब) आयत चित्र
   (स) दोनों (द) इनमें से कोई नहीं

2.9 सार–संक्षेप

सांख्यिकी प्रदत्तों को स्पष्ट तथा सजीव बनाने के लिए अध्ययनकर्ता रेखाचित्रण को अपनाता है। सांख्यिकी में एकत्रित किए गए तथ्य तथा अंक प्रायः शुष्क एवं जटिल होते हैं। इन अंकों को उपयोगी बनाने के लिए आवश्यक है कि इन्हें चित्रों के रूप में प्रदर्शित किया जाए। यह ग्राफ केवल आंकड़ों के समझाने में ही सहायक नहीं होते, बल्कि इनकी सहायता से निष्कर्ष निकालने में भी सुविधा रहती हैं। अतः प्रदत्तों को सजीव बनाने, उनके विश्लेषण तथा अध्ययन के लिए रेखाचित्र की आवश्यकता पड़ती हैं।
गुणात्मक आंकड़े दंड चित्र या दंड आलेख द्वारा प्रस्तुत किए जा सकते हैं, जबकि संख्यात्मक आंकड़े बारंबारता किए जा सकते हैं, जबकि संख्यात्मक आंकड़े बारंबारता, आयत, बारंबारता बहुभुज या संचयी बारंबारता वक्र या ओजाइव द्वारा प्रस्तुत किए जाते हैं।

2.10 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न–

1. आंकड़ों के आलेखीय निरूपण से क्या समझते हैं ?इसके महत्व को समझाइए।
2. निम्नलिखित प्रदत्तों से बारंबारता आयत (हिस्टोग्राम) बनाइए–

C.I.	45-49	40-44	35-39	30-34	25-29	20-24	15-19	10-14	5-9
f	2	3	6	8	10	7	5	5	3

3. नीचे दी गई व्यवस्थित अंक सामग्री से बारंबारता आयत तथा बारंबारता बहुभुज बनाइए

C.I.	2-3	4-5	6-7	8-9	10-11	12-13	14-15	16-17	18-19
f	5	7	9	12	15	11	8	5	3

4. नीचे दी गई व्यवस्थित अंक सामग्री से बारंबारता बहुभुज तथा संचयी बारंबारता वक्र बनाइए

C.I.	21-22	19-20	17-18	15-16	13-14	11-12	9-10	7-8	5-6
f	2	2	4	6	8	5	4	3	2

2.11 पारिभाषिक शब्दावली

- आवृत्ति (Frequency distribution):-किसी प्राप्तांक के बार–बार आने की प्रवृत्ति को आवृत्ति कहते हैं। इन आवृत्तियों को सुविधानुसार भिन्न–भिन्न वर्गों में वितरित या प्रदर्शित करने की विधि को आवृत्ति वितरण कहते हैं।
- प्रसार (Range):-आंकड़ों में उच्चतम अंक तथा न्यूनतम अंक के अन्तर को प्रसार कहते हैं।
- मध्य बिन्दु या चिन्ह (Mid Point):-किसी वर्ग अन्तराल की उच्च सीमा तथा निम्न सीमा के योग का आधा उस वर्ग अंतराल का मध्य बिन्दु या वर्ग चिन्ह कहलाता है।
- संचयी बारंबारता (Cumulative Frequency):-किसी वर्ग अंतराल के सामने उसकी संगत बारंबारता और पहले के वर्गों की बारंबारताओं का योगफल संचयी बारंबारता कहलाता है।
- आलेख (रेखाचित्र)–Graph दो या दो से अधिक चल राशियों को ग्राफ पर प्रदर्शित करने को रेखाचित्र या आलेख कहा जाता है।
- बारंबारता आयत या आयत चित्र या स्तम्भाकृति (Histogram of Column Diagram):-बारंबारता आयत से तात्पर्य उस ग्राफ से है जिसमें आवृत्तियों को खड़े हुए आयतों के द्वारा प्रदर्शित किया जाता है।
- आवृत्ति बहुभुज या बारंबारता बहुभुज (Frequency Palygon):-बहुभुज का अर्थ उस रेखाचित्र से है जिसमें अनेक भुजाएं होती हैं। आवृत्ति बहुभुज का अर्थ उस रेखाचित्र से है जिसमें आवृत्ति को अनेक भुजाओं द्वारा प्रदर्शित किया जाता है।
- संचयी बारंबारता वक्र (Cumulative Frequency curve or Ogive):-जब संचयी आवृत्तियों को वर्गान्तरों की उच्च सीमा पर प्रदर्शित करके रेखाचित्र बनाया जाये तो जो भी रेखाचित्र बनेगा वह संचयी आवृत्ति वक्र कहलाएगा।

2.12 सन्दर्भ ग्रन्थ

- Garrett, H.E. (1956), Elementary Statistics, Longmans, Green & Co., New York.
- Guilford, J.P. (1965), Funcamental Statistics in Psychology & Education, McGraw Hill Book Company, New Yorkk.
- Lindgren, B.W. (1975), Basic Ideas of Statistics, Macmillan Publishing Co. Inc., New York.
- भाटिया, तारेश, आधुनिक मनोवैज्ञानिक सांख्यिकी, लावण्य प्रकाशन, उरई
- श्रीवास्तव, डी.एन., सांख्यिकी एवं मापन
- अस्थाना, विपिन, शिक्षा और मनोविज्ञान में सांख्यिकी

2.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न – 'क'		अभ्यास प्रश्न – 'ख'	
1.	अ	1.	स
2.	ब	2.	अ

इकाई 3– केन्द्रीय प्रवृत्ति के माप, माप के प्रकार – मध्यमान, मध्यांक एवं बहुलांक की विशेषताएँ एवं गणना

इकाई संरचना

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापों के अर्थ
3.4 मध्यमान
- 3.4.1 अव्यवस्थित आँकड़ों के मध्यमान
- 3.4.2 व्यवस्थित आँकड़ों के मध्यमान
- 3.4.3 मध्यमान की विशेषताएँ तथा इसका उपयोग
- 3.4.4 मध्यमान की सीमाएँ

3.5 मध्यांक
- 3.5.1 अव्यवस्थित आँकड़ों के मध्यांक
- 3.5.2 व्यवस्थित आँकड़ो के मध्यांक
- 3.5.3 मध्यांक की विशेषताएँ तथा इसका उपयोग
- 3.5.4 मध्यांक की सीमाएँ

3.6 बहुलांक
- 3.6.1 अव्यवस्थित आँकड़ों के बहुलांक
- 3.6.2 व्यवस्थित आँकड़ों के बहुलांक
- 3.6.3 बहुलांक की विशेताषताएँ तथा इसका उपयोग
- 3.6.4 बहुलांक की सीमाएँ

3.7 सार – संक्षेप
3.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न
3.9 पारिभाषिक शब्दावली
3.10 संदर्भ – ग्रन्थ
3.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

3.1 प्रस्तावना–

पिछली इकाई में आपने सांख्यिकीय प्रदत्तों को आवृत्ति वितरण में प्रस्तुत करना तथा उन्हें विभिन्न ग्राफीय चित्रों निरूपित करना सीखा।

प्रस्तुत इकाई में आप जान पायेंगे कि किसी शोध या घटना से सम्बन्धित आंकड़ों का विश्लेषण करने हेतु किन महत्वपूर्ण वर्णनात्मक सांख्यिकी का प्रयोग किया जाता है। प्राप्त प्रदत्तों का जो केन्द्रीय झुकाव होता है उसे मापने हेतु सांख्यिकी में माध्य, मध्यांक तथा बहुलांक का प्रयोग किया जाता है। इन मापों का प्रयोग आँकड़ों के विश्लेषण में हमारी सहायता करता है। केन्द्रीय प्रवृत्ति के माप सम्पूर्ण वर्ग के गुणों को संक्षिप्त रूप से प्रदर्शित करता है। इस इकाई में केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापों की जैसे मध्यमान, मध्यांक, तथा बहुलांक के परिकलन की विधि पर चर्चा की गई है। इसके अतिरिक्त इन मापों की विशेषताओं तथा सीमाओं पर भी प्रकाश डाला गया है।

3.2 उद्देश्य–

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आप इस योग्य हो जाएँगें कि आप –

- केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापों के अर्थ स्पष्ट कर सकेंगे,
- अवर्गीकृत तथा वर्गीकृत दोनों प्रकार के आँकड़ों के संदर्भ में मध्यमान की गणना कर सकेंगे तथा उसकी व्याख्या कर सकेंगे,
- अवर्गीकृत तथा वर्गीकृत दोनों प्रकार के आँकड़ों के संदर्भ में मध्यांक की गणना कर सकेंगे तथा उसकी व्याख्या कर सकेंगे,
- अवर्गीकृत तथा वर्गीकृत दोनों प्रकार के आँकड़ों के संदर्भ में बहुलांक की गणना कर सकेंगे तथा उसकी व्याख्या कर सकेंगे
- मध्यमान, मध्यांक तथा बहुलांक की विशेषताओं तथा सीमाओं का वर्णन कर सकेंगे।

3.3 केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापों के अर्थ–

केन्द्रीय प्रवृत्ति का अर्थ उस मान से है जिसके चारों ओर समूह के सभी अंक छाये रहते हैं। साधारण शब्दों में केन्द्रीय प्रवृत्तियों को हम माध्य (Average) कह सकते हैं किन्तु व्यवहार में केन्द्रीय प्रवृत्तियाँ औसत या माध्य से कहीं अधिक वैज्ञानिक तथा व्यावहारिक होती हैं। केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापों से हमें माध्य का ज्ञान तो होता ही है साथ ही साथ दो या अधिक समूहों की तुलना तथा प्राथमिक ज्ञान प्राप्त करने में यह माप उपयोगी है। उदाहरण के लिए, विद्यालय में पढ़ने वाले विद्यार्थियों की मानसिक या शारीरिक योग्यताओं की तुलना, भिन्न–भिन्न रोगों से हुई मृत्यु दर की तुलना आदि। इस प्रकार केन्द्रीय प्रवृत्ति सम्पूर्ण वर्ग के गुणों को संक्षिप्त रूप से प्रदर्शित करती है।

केन्द्रीय प्रवृत्ति के तीन माप हैं– मध्यमान, मध्यांक, और बहुलांक। इन तीनों मापों में कितनी समानता होगी, यह मुख्यतः आवृत्ति वितरण की प्रकृति पर निर्भर करता है।

3.4 मध्यमान–

यूल और केण्डाल (Yull & Kendal) के शब्दों में, ''किसी आवृत्ति वितरण की अवस्थिति या स्थिति के माप मध्यमान कहलाते हैं।''

किसी अंक सामग्री का मध्यमान ज्ञात करने के लिए उसके समस्त अंकों के योगफल को उन अंकों की संख्या से भाग देते हैं। साधारणतः अंकगणितीय मध्यमान को ही मध्यमान कहते हैं। मध्यमान का संकेत चिन्ह 'M' है।

$$\text{मध्यमान } M = \frac{\text{समस्त समूह प्रदत्तों का योग}}{\text{समूह के इकाइयों की संख्या}}$$

$$\text{मध्यमान } M = \frac{\Sigma X}{N}$$

जहाँ ΣX = समस्त समूह प्रदत्तों का योग

N = समूह के इकाइयों की संख्या

3.4.1 अव्यवस्थित आँकड़ों के मध्यमान ज्ञात करना–

अवर्गीकृत आँकड़ों का मध्यमान ज्ञात करने के लिए निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग किया जाता है।

मध्यमान $M = \frac{\Sigma X}{N}$

जहाँ, M = मध्यमान

Σ = योग

X = प्राप्तांक

N = प्राप्तांकों की संख्या

उदाहरण 1 – किसी परीक्षण के प्रापतांक 8, 10, 12, 14, 06 हैं तो प्राप्तांकों का मध्यमान ज्ञात कीजिए।

मध्यमान $M = \frac{\Sigma X}{N}$

= 8 + 10 + 12 + 14 + 06

= 50 / 5 = 10 (उत्तर)

उदाहरण 2 – एक मनोवैज्ञानिक परीक्षण में छात्रों को निम्न प्राप्तांक प्राप्त हुए। मध्यमान की गणना कीजिए। 25, 36, 18, 30, 29, 49, 41, 16, 26, 27

मध्यमान $M = \frac{\Sigma X}{N}$

= 25 + 36 + 18 + 30 + 29 + 49 + 41 + 16 + 26 + 27 / 10

= 297 / 10 = 29.7 (उत्तर)

3.4.2 व्यवस्थित आँकड़ों का मध्यमान ज्ञात करना–

व्यवस्थित आँकड़ों के संदर्भ में दो अवस्थाएँ हो सकती हैं–

1. जब प्राप्तांक तथा उनकी बारम्बारताएँ दी गई हों।
2. जब आँकड़ों को वर्ग अंतरालों में बाँटा गया हो और प्रत्येक वर्ग अंतराल की बारंम्बारता भी दी गई हों। दूसरी अवस्था में माध्य या तो लंबी विधि द्वारा या छोटी विधि द्वारा ज्ञात कर सकते हैं। छोटी विधि अपनाने की अवस्था में कल्पित माध्य लेना पड़ेगा।

(क) मध्यमान ज्ञात करना यदि प्राप्तांक तथा उनकी बारंम्बारताएँ दी गई हों–

उदाहरण–3 निम्नलिखित दत्तों का माध्य ज्ञात कीजिए–

प्राप्तांक	13	15	16	20	24	25	30	40
बारम्बारताएँ	2	4	3	3	5	3	6	4

इसके लिए निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग करते हैं –

$$M = \frac{\Sigma fX}{N}$$

जहाँ, M = मध्यमान

Σ = योग

f = आवृत्तियां

fx = प्राप्तांक तथा आवृत्तियों का गुणनफल

N = आवृत्तियों का योग

प्राप्तांक (X)	f	fx
13	2	26
15	4	60
16	3	48
20	3	60
24	5	120
25	3	75
30	6	180
40	4	160
	N = 30	Σfx= 729

$$M = \frac{\Sigma fX}{N} = \frac{729}{30}$$

= 24.3 (उत्तर)

(ख) वर्गीकृत बारंबारता बंटन के आधार पर मध्यमान की गणना करना–

वर्गीकृत बारंम्बारता बंटन के मध्यमान की गणना हेतु निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग करते हैं–

$$\text{मध्यमान } (M) = \frac{\Sigma fX}{N}$$

जहाँ, f = आवृत्तियां

x = मध्य बिन्दु (Mid point)

fx = आवृत्तियों और मध्य बिन्दुओं का गुणनफल

N = आवृत्तियों का योग

उदाहरण–4 निम्नलिखित बारंम्बारता बंटन का मध्यमान ज्ञात कीजिए–

वर्ग अन्तराल	10-15	15-19	20-24	25-29	30-34	35-39	40-44
बारम्बारता	3	5	10	14	6	4	8

हल :

C.I.	f	x (मध्य बिन्दु)	fx
40-44	8	42	336
35-39	4	37	148
30-34	6	32	192
25-29	14	27	108
20-24	10	22	220
15-19	5	17	85
10-14	3	12	36
	N = 50		Σfx= 1125

मध्यमान $M = \frac{\Sigma f X}{N}$

$= 1125 / 50 = 22.5$ (उत्तर)

(ग) कल्पित मध्यमान विधि द्वारा मध्यमान का परिकलन–

यह मध्यमान परिकलन की संक्षिप्त विधि है। इस विधि में हम मध्य बिन्दुओं तथा उनके संगत बारंम्बारता के लंबे गुणनफल करने की लंबी प्रक्रिया से बच जाते हैं।

इस विधि के विभिन्न चरण निम्नलिखित हैं–?

1. सर्वप्रथम दिए गए आँकड़ों को सारणीबद्ध रूप में व्यवस्थित कर कल्पित मध्यमान ज्ञात किया जाता है। इसके लिए वह वर्ग अंतराल मालूम करें जो बंटन के लगभग मध्य में स्थित हो। इस वर्ग अंतराल का मध्य बिन्दु ही कल्पित मध्यमान होता है। यदि ऐसे दो वर्ग अंतराल हों तो ऐसी अवस्था में उस वर्ग अंतराल को चुनें जिसकी बारंबारताएँ अधिक हों।
2. कल्पित मध्यमान ज्ञात करने के पश्चात् विचलन 'd' ज्ञात किया जाता है। इसके लिए जिस वर्ग अन्तराल में कल्पित मध्यमान मानते हैं उसके सामने 'डी' वाले स्तम्भ में 0 रख देते हैं। वितरण के जिस ओर मध्य बिन्दुओं का मान बढ़ता है उधर विचलन क्रमशः +1, +2, +3, +4, ... आदि होता है और वितरण के जिस ओर मध्य बिन्दुओं का मान घटता है उधर विचलन क्रमशः –1, –2, –3, –4, ... होता है।
3. 'fd' ज्ञात करने के लिए प्रत्येक वर्ग – अन्तराल के सामने की आवृत्तियों का विचलन से गुणा करते हैं और गुणनफल को 'fd' स्तम्भ में लिखते है।
4. f' वाले तथा 'fd' वाले स्तम्भ का योग करके Σf या N तथा Σfd ज्ञात करते हैं।
5. इसके पश्चात् मध्यमान ज्ञात करने के लिए निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग करते हैं।

$$\text{मध्यमान } (M) = AM + \frac{\Sigma fd}{N} \times i$$

जहाँ, AM = कल्पित मध्यमान

f = बारंबारता

d = कल्पित माध्य से विचलन वर्ग–अंतराल की दूरी के रूप में

i = वर्ग–अन्तराल का आकार (लंबाई)

N = आवृत्तियों का योग

उदाहरण 5 निम्नलिखित बारंबारता बंटन का मध्यमान ज्ञात कीजिए–

वर्ग अन्तराल	10-14	15-19	20-24	25-29	30-34
बारंबारता	2	8	6	12	7

हल :

वर्ग अन्तराल (C.I.)	मध्य बिन्दु (x)	आवृत्ति (f)	विचलन (d)	fd
30-34	32	7	+2	14
25-29	27	12	+1	12
20-24	22	6	0	0
15-19	17	8	-1	-8
10-14	12	2	-2	-4
		N = 35		Σfx = 14

टिप्पणी –A.M. ज्ञात करने के लिए वर्ग अन्तराल की सही सीमाओं का उपयोग किया गया है। यहाँ पर कल्पित मध्यमान 22 है जो वर्ग–अन्तराल 20–24 का मध्य बिन्दु है। अतः इस वर्ग–अन्तराल का विचलन, यानी 'd' शून्य होगा। इससे ऊपर के वर्ग–अन्तराल क्रमशः +1, +2 होंगें जैसे – वर्ग अन्तराल 22–25 का विचलन = 27-22 / 5 = 1 हुआ। कल्पित मध्यमान से नीचे के वर्ग–अन्तराल का विचलन, के रूप में 'd'-1, -2 लिखा जायेगा। जैसे, वर्ग–अन्तराल 15–19 का विचलन = 17–22 / 5 = –1 है, इसी प्रकार आगे सभी वर्ग अन्तरालों के विचलन ज्ञात किए गए हैं।

अब, मध्यमान (M)= AM + $\frac{\Sigma f d}{N} \times i$

= 22 + 14 / 35 × 5

= 22 + 2

= 24 (उत्तर)

उदाहरण 6 निम्न व्यवस्थित अंक सामग्री का संक्षिप्त विधि द्वारा मध्यमान ज्ञात कीजिए–

वर्ग अन्तराल	110-119	120-129	130-139	140-149	150-159	160-169
बारंबारता	18	24	36	54	23	15

हल :

वर्ग अन्तराल (C.I.)	मध्य बिन्दु (x)	आवृत्ति (f)	विचलन (d)	fd
160-169	164.5	15	+2	+30
150-159	154.5	23	+1	+23
140-149	144.5	54	0	0
130-139	134.5	36	-1	-36
120-129	124.5	24	-2	-48
110-119	114.5	18	-3	-54
		N = 170		Σfx = -85

प्रश्न में, A.M. = 114.5, Σfx = - 85, N = 170, i= 10

अतः मध्यमान (M) $= \text{AM} + \frac{\Sigma fX}{N} \times$

$= 144.5 + \frac{(-85)}{170} \times 10$

= 144.5 - 5

= 139.5 (उत्तर)

3.4.3 मध्यमान की विशेषताएँ–

1. मध्यमान के परिकलन में सभी मापों अथवा प्रेक्षणों का उपयोग किया जाता है। वितरण का प्रत्येक प्राप्तांक मध्यमान की स्थिति को प्रभावित करता है।
2. मध्यमान सभी प्राप्तांकों के संतुलन बिन्दु या गुरूत्व केन्द्र को दर्शाता है। किसी भी प्रतिदर्श में सभी माप मध्यमान के दोनों ओर पूर्ण रूप से संतुलित होते हैं।
3. किसी दिए गए वितरण के छोरों पर स्थित प्राप्तांक मध्यमान के मान को सर्वाधिक प्रभावित करता है।
4. मध्यमान की उच्च विश्वसनीयता तथा आनुमानिक सांख्यिकी में उपयोगिता के कारण इसे प्राथमिकता दी जाती है।
5. मध्यमान दिए गए समूह के सभी सदस्यों के औसत निष्पादन का द्योतक है।
6. मध्यमान का उपयोग यह जानने के लिए किया जाता है कि विभिन्न प्राप्तांक केन्द्रीय मान से किस प्रकार भिन्न है।
7. दिये हुए वितरण के सभी प्राप्तांकों में एक निश्चित राशि जोड़ने अथवा घटाने से मध्यमान का मान भी क्रमशः निश्चित राशि के बराबर बढ़ अथवा घट जाएगा।

8. दिये हुए वितरण के सभी प्राप्तांकों को एक निश्चित राशि से गुणा करने पर मध्यमान का मान भी निश्चित राशि के गुणनफल के बराबर हो जाएगा।

शैक्षिक अवस्थाएँ तथा मध्यमान का उपयोग–

दिए गए आँकड़ों के लिए मध्यमान का उपयोग करना चाहिए यदि–

1. सबसे अधिक विश्वसनीय केन्द्रीय प्रवृत्ति का पता लगाना हो।
2. वितरण सामान्य हो अर्थात् जब दी हुई अंक ऋंखला के समस्त अंक समान रूप से वितरित हों।
3. वितरण के प्रत्येक अंक को महत्व देना हो।
4. अन्य सांख्यिकीय मूल्यों जैसे– बहुलांक, प्रामाणिक विचलन, सहसंबंध गुणांक आदि की गणना करनी हो।
5. समूह के निष्पादनों की सही तथा शुद्ध तुलना की जानी हो।

3.4.4 मध्यमान की सीमाएँ–

मध्यमान का प्रयोग निम्नलिखित स्थितियों में नहीं करते हैं–

1. जब कुछ प्रेक्षण अन्य प्रेक्षणों की तुलना में बहुत बड़े अथवा छोटे हों तो बंटन का मध्यमान भ्रामक सिद्ध हो सकता है।
2. जब दिया हुआ अंक वितरण अपूर्ण या मुक्त छोरों वाला हो तब भी मध्यमान का प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

अभ्यास प्रश्न – क

1. **यदि तीन संख्याओं को योग 54 है, तो उसका माध्य .... होगा।**
2. **एक विद्यार्थी के तीन विषयों का औसत अंक 20 है। यदि एक विषय में 18, दूसरे विषय में 22 अंक हों तो तीसरे विषय में .... अंक होंगे।**
3. **अंकों के कुल योग में अंकों की संख्या से भाग देने पर प्राप्त मान .... कहलाता है।**

3.5 मध्यांक –

मध्यांक से आशय उस बिन्दु या अंक से है जो क्रम में व्यवस्थित समस्त बंटन को दो समान भागों में बाँट दे। मध्यांक के दोनों ओर वितरण के आधे–आधे प्रदत्त होते हैं

गिलफोर्ड (1958) के अनुसार, ''किसी मापनी पर मध्यांक वह बिन्दु है जिसके ऊपर आधे प्रतिशत मामले आते हैं तथा नीचे शेष आधे प्रतिशत मामले आते हैं।''

मध्यांक एक बिन्दु होता है, कोई प्राप्तांक या विशेष माप नहीं, अर्थात् मध्यांक पर किसी के प्राप्तांक हों यह आवश्यक नहीं। इसका संकेत चिन्ह Md है।

3.5.1 अव्यवस्थित आँकड़ों का मध्यांक–

अव्यवस्थित आँकड़ों के मध्यांक ज्ञात करने के लिए निम्न सूत्र का प्रयोग किया जा सकता है–

$$\text{मध्यांक (Md)} = \left(\frac{N+1}{2}\right)^{th} term$$

जहां, N = प्राप्तांकों की संख्या

Md = मध्यांक

अव्यवस्थित आँकड़ों के मध्यांक निम्न चरणों में ज्ञात करते हैं–

1. अव्यवस्थित आँकड़ों को सर्वप्रथम आरोही या अवरोही क्रम में व्यवस्थित करते हैं।
2. 'N' अर्थात् मदों की संख्या ज्ञात करके उसमें 1 जोड़ देते हैं और कुल जोड़ को 2 से विभाजित कर भागफल ज्ञात कर लेते हैं।
3. भाग देने से प्राप्त संख्या वाला पद या स्थान मध्यांक होगा। प्राप्त संख्या वाला पद किसी ओर से गिन लेते हैं।

उदाहरण 7.निम्न अव्यवस्थित आँकड़ों का मध्यांक ज्ञात कीजिए–

3, 6, 9, 8, 17, 12, 14

हल– आँकड़ों को आरोही क्रम में लिखने पर

3, 6, 8, 9, 12, 14, 17

प्रश्न में N = 7

$$\text{मध्यांक (Md)} = \left(\frac{N+1}{2}\right)^{th} term$$

$$= \left(\frac{7+1}{2}\right)^{th} term$$

$$= \left(\frac{8}{2}\right)^{th} term\ 4^{th}\ \text{term}$$

क्रम में व्यवस्थित आँकड़ों में चौथा पद 9 है।

अतः अभीष्ट मध्यांक = 9 (उत्तर)

उदाहरण 8 नीचे दिये गये प्राप्तांकों के मध्यांक ज्ञात कीजिए–

12, 18, 18, 15, 23, 19, 17, 16

हल– प्राप्तांकों को अवरोही क्रम में लिखने पर–

23, 19, 18, 18, 17, 16, 15, 12

प्रश्न में N = 8

$$\text{मध्यांक (Md)} = \left(\frac{N+1}{2}\right) \text{ वाँ पद}$$

$$= \left(\frac{8+1}{2}\right) \text{ वाँ पद} = \left(\frac{9}{2}\right)\text{वाँ पद}$$

$$= 4.5 \text{ वाँ पद}$$

4.5 वाँ पद चौथी और पांचवी संख्या का मध्यमान होगा। चौथी संख्या 18 और पांची सख्या 17. का मध्यमान $= \frac{18+17}{2} = \frac{35}{2}$ = 17.5 है।

अतः मध्यांक (Md) = 17.5 (उत्तर)

3.5.2 व्यवस्थित आँकड़ों के मध्यांक–

व्यवस्थित आँकड़ों के मध्यांक ज्ञात करने का सूत्र निम्नलिखित है–

$$\text{मध्यांक (Md)} = L + \left(\frac{N/2 - F}{fm}\right) \times i \text{ or}$$

$$lm + \left(\frac{N/2 - c.f.}{fm}\right) \times i$$

जहां Md = मध्यांक

L या lm = मध्यांक वर्ग की निम्नतम सीमा

N = आवृत्तियों का योग

या fm = मध्यांक वर्ग की आवृत्ति

F या c.f.= मध्यांक वर्ग से ठीक पहले वाले वर्ग (निचली वर्ग) की संचयी आवृत्ति

i = वर्गान्तर का आकार

व्यवस्थित आँकड़ों के मध्यांक निम्न प्रकार से ज्ञात करते हैं–

1. आवृत्ति वितरण तालिका में दी गई आवृत्तियों को संचयी आवृत्तियों में परिवर्तित करते हैं।
2. इसके पश्चात् मध्यांक वर्ग ज्ञात करते हैं। मध्यांक–वर्ग वह वर्ग अन्तराल होगा जिसके संगत की संचयी आवृत्ति $N/2$ से ठीक बड़ी होगी।
3. मध्यांक वर्ग ज्ञात करने के पश्चात् F, L, f तथा i संकेतों के मान ज्ञात करके प्राप्त मानों को मध्यांक के सूत्र में रखकर मध्यांक की गणना कर लेते हैं।

उदाहरण 9 निम्नलिखित बारंबारता बंटन का मध्यांक ज्ञात कीजिए–

वर्ग अंतराल	10-14	15-19	20-24	25-29	30-34	35-39	40-44	45-49
बारंबारता	3	4	2	5	3	6	4	3

हल :

C.F. वर्ग अन्तराल	f बरंबारता	c.f. संचयी आवृत्ति	
45-49	3	30	
40-44	4	27	
35-39	6	23	
30-34	3	17	मध्यांक वर्ग
25-29	5	14	←
20-24	2	9	
15-19	4	7	
10-14	3	3	
	N = 30		

मध्यांक वर्ग वह वर्ग अंतराल होगा जिसके संगत की संचयी बारंबारता $N/2$ से अर्थात् $\frac{30}{2}=15$ से ठीक बड़ी होगी।

अतः $L = 29.5$ (शुद्ध वर्गान्तर की शुद्ध निम्न सीमा)

$N = 30$

$F = 14$

$f = 3$

$i = 5$

इन मानों को सूत्र पर लिखने पर

$$\text{मध्यांक (Md)} = L + \left(\frac{N/2 - F}{f}\right) \times i$$

$$= 29.5 + \left(\frac{30/2 - 14}{3}\right) \times 5$$

$$= 29.5 + \frac{1 \times 5}{3} = 29.5 + 1.67$$

$$= 31.17 \text{ (उत्तर)}$$

विशेष परिस्थिति में मध्यांक का परिकलन–

उदाहरण 10 निम्नलिखित बारंबारता बंटन में मध्यांक ज्ञात कीजिए–

वर्ग अंतराल	5-7	8-10	11-13	14-16	17-19	20-22	23-25	26-28
बारंबारता	2	3	5	5	0	7	53	3

उक्त प्रश्न को हम दो तरीकों रूपों में हल कर सकते हैं–

1. सम्प्रत्यात्मक रूप में
2. अनुभवजन्य रूप में।

हल– उपरोक्त प्रश्न में मध्यांक की गणना के लिए निम्नलिखित सूत्र का उपयोग करते हैं।

$$\text{मध्यांक (Md)} = \frac{L + U}{2}$$

Md = मध्यांक

L = अभीष्ट वर्गान्तर की निम्नतम सीमा

U = अभीष्ट वर्गान्तर की उच्चतम सीमा

इस सूत्र का उपयोग तभी किया जाता है, जब आवृत्ति वितरण के ठीक मध्य में एक अन्तराल होता है अर्थात् f का मान एक शून्य के रूप में होता है। उपरोक्त उदाहरण में 17–19 वर्गान्तर की आवृत्ति शून्य दी हुई है अर्थात् आवृत्ति वितरण के ठीक मध्य में एक अन्तराल है। चूँकि क्रम

में व्यवस्थित अंकों के मध्य का अंक ही मध्यांक है। इसीलिए मध्य का वर्गान्तर 17–19 ही अभीष्ट वर्गान्तर है जिसमें L और U का मान लिया गया है।

अतः $L = 16.5$

$U = 19.5$

$$\text{मध्यांक } (Md) = \frac{L+U}{2}$$

$$= \frac{16.5+19.5}{2}$$

$$= \frac{36}{2} = 18 \text{ (उत्तर)}$$

वैकल्पिक रूप में हम उस वर्ग अन्तराल को संशोधित कर लेते हैं जिनमें $N/2$ आता है। शून्य बारंबारता वाले वर्ग – अंतराल को ऊपर व नीचे वाले वर्ग अन्तरालों में आधा–आधा बाँट दिया जाता है। वर्ग अन्तराल 17–19 का आधा भाग वर्ग अंतराल 14–16 में मिला दिया जाता है और दूसरा आधा भाग वर्ग अंतराल 20–22 में मिला दिया जाता है। संशोधित वर्ग अन्तराल का आकार 3+1.5 = 4.5 होता है।

$$\text{मध्यांक } (Md) = L + \left(\frac{N/2 - F}{f}\right) \times i$$

$$= 13.5 + \left(\frac{30/2 - 10}{5}\right) \times 4.5$$

$$= 13.5 + \frac{5}{5} \times 4.5$$

$$= 13.5 + 4.5$$

$$= 18 \text{ (उत्तर)}$$

3.5.3 मध्यांक की विशेषताएँ–

1. मध्यांक आँकड़ों के उस केन्द्रीय बिन्दु को बताती है जिसके ऊपर और नीचे आधे–आधे प्राप्तांक स्थित होते हैं।
2. किसी वितरण के छोरों के प्राप्तांक मध्यांक के मान को ज्यादा प्रभावित नहीं करते हैं।
3. मध्यांक की मानक त्रुटि मध्यमान की मानक त्रुटि से अधिक परन्तु बहुलांक की मानक त्रुटि से कम होती है।
4. मध्यांक की गणना क्रमीय स्तर के लिए अधिक उपयुक्त है।

शैक्षिक अवस्थाएँ तथा मध्यांक का उपयोग–

मध्यांक का प्रयोग निम्नलिखित अवस्थितियों में किया जाता है–

1. जब दिया गया बंटन अपूर्ण हो।
2. जब अंक सामग्री का वास्तविक मध्य बिन्दु ज्ञात करना हो।
3. जब वितरण असामान्य हो।
4. जब अपेक्षाकृत कम शुद्ध केन्द्रीय प्रवृत्ति के मान की आवश्यकता हो।

5. जब बहुलांक ज्ञात करना हो।
6. जब ऋंखला के आरंभ के तथा अंत के अंक मध्यमान को प्रभावित करते हों तो ऐसी स्थिति में मध्यांक निकालना चाहिए।

3.5.4 मध्यांक की सीमाएँ–

1. मध्यांक का मान समस्त प्रक्षणों पर आधारित नहीं होता है और उनके संख्यात्मक मानों की उपेक्षा करता है।
2. इसका उपयोग बंटन के गुरूत्व केन्द्र के रूप में नहीं किया जा सकता।
1. इसका उपयोग आनुमानिक सांख्यिकीय विश्लेषण के लिए भी नहीं हो सकता है।

अभ्यास प्रश्न–ख

1. **किसी मापनी पर वह बिन्दु जिसके ऊपर आधे प्रतिशत केसेज आते हैं तथा नीचे शेष आधे प्रतिशत केसेज आते हैं .... कहलाता है।**
2. **वितरण 2, 5, 9, 8, 16, 12, 13 का मध्यांक .... होगा।**
3. **सही/गलत बतायें –**
   अ. यदि किसी वितरण का कोई प्राप्तांक बदल जाय तो उसका मध्यमान भी बदल जायेगा।
   ब. यदि किसी वितरण के किसी एक घोर का प्राप्तांक बदल जाय तो उसका मध्यांक नहीं बदलेगा।

1. किसी मापनी पर वह बिन्दु जिसके ऊपर आधे प्रतिशत केसेज आते हैं तथा नीचे शेष आधे प्रतिशत केसेज आते हैं .... कहलाता है।
2. वितरण 2, 5, 9, 8, 16, 12, 13 का मध्यांक .... होगा।

3. सही/गलत बतायें –

अ. यदि किसी वितरण का कोई प्राप्तांक बदल जाय तो उसका मध्यमान भी बदल जायेगा।
ब. यदि किसी वितरण के किसी एक घोर का प्राप्तांक बदल जाय तो उसका मध्यांक नहीं बदलेगा।

3.6 बहुलांक–

अव्यवस्थित आँकड़ों में बहुलांक वह संख्या है जो सबसे अधिक बार आती है। गिलफोर्ड (1973) के अनुसार, ''किसी वितरण में वह बिन्दु जिसकी आवृत्ति सर्वाधिक हो, बहुलांक कहलाता है।'' इसका संकेत चिन्ह Mo है।

3.6.1 अव्यवस्थित आँकड़ों के बहुलांक–

अव्यवस्थित आँकड़ों में बहुलक वह अकेला माप या प्राप्तांक होता है जो सबसे अधिक बार आता हो।

उदाहरण – 11 10 विद्यार्थियों के प्राप्तांक निम्नांकित हैं–

25, 30, 30, 34, 34, 38, 39, 40, 34, 34,

इस बंटन का बहुलांक ज्ञात कीजिए।

हल– उपर्युक्त प्राप्तांकों में 34 प्राप्तांक सबसे अधिक बार आता है। अतः दिए गए अवर्गीकृत आँकड़ों का बहुलांक 34 हुआ।

प्राप्तांक	25	30	34	38	39	40	
आवृत्ति	1	2	4	1	1	1	N = 10

इस तालिका से स्पष्ट है कि 34 की आवृत्ति 4 बार या सबसे अधिक बार हुई है।

अतः अभीष्ट बहुलांक = 34

3.6.2 व्यवस्थित आँकड़ों के बहुलांक–

व्यवस्थित आँकड़ों का बहुलांक ज्ञात करने के दो सूत्र प्रचलित हैं–

प्रथम सूत्र– बहुलांक (Mo) = 3 × मध्यांक - 2 × मध्यमान

इस सूत्र द्वारा बहुलांक ज्ञात करने के लिए पहले मध्यमान ज्ञात करते हैं फिर मध्यांक। मध्यांक में 3 से गुणा तथा मध्यमान में 2 से गुणा करके मध्यांक से मध्यमान को घटाकर बहुलांक प्राप्त करते हैं।

द्वितीय सूत्र–

$$\text{बहुलांक (Mo)} = L + \left(\frac{f - f_1}{2f - f_1 - f_2}\right) \times i$$

जहाँ, Mo = बहुलांक

L = उस वर्ग अन्तराल की निम्नतम सीमा जिसकी आवृत्ति सबसे अधिक है।

F = उस वर्गान्तर की आवृत्ति जिसमें आवृत्तियों की संख्या सबसे अधिक है।

f_1 = सबसे अधिक आवृत्तियों वाले वर्गान्तर के ठीक नीचे वाले वर्गान्तर की आवृत्ति।

f_2 = सबसे अधिक आवृत्तियों वाले वर्गान्तर के ठीक ऊपर वाले वर्गान्तर की आवृत्ति।

i = वर्गान्तर विस्तार (वर्ग अन्तराल की लंबाई)

उदाहरण–12

निम्नांकित बारंबारता बंटन का बहुलांक ज्ञात कीजिए।

वर्ग अन्तराल	30-39	40-49	50-59	60-69	70-79	80-89	90-99
बारंबारता	7	15	9	7	6	12	4

प्रथम सूत्र द्वारा बहुलांक की गणना के लिए सर्वप्रथम मध्यांक तथा मध्यमान ज्ञात करना होगा। फिर उसके मानों को सूत्र में रखकर बहुलांक की गणना की जाती है।

द्वितीय सूत्र द्वारा बहुलांक की गणना करने के लिए सबसे पहले बहुलांक वर्ग ज्ञात करते हैं। बहुलांक वर्ग वह वर्ग अन्तराल होगा जिसके संगत की आवृत्ति सबसे अधिक हो। फिर सूत्र में दिए गए संकेतों के मान ज्ञात कर सूत्र में रखने पर बहुलांक ज्ञात हो जाता है।

उपरोक्त उदाहरण में सबसे अधिक आवृत्ति वर्ग अन्तराल 40—49 की है जो 15 है। अतः यह वर्ग अन्तराल बहुलांक वर्ग होगा।

अतः $L = 39.5$

$f = 15$

$f_1 = 7$

$f_2 = 9$

$i = 10$

इन मानों को सूत्र में रखने पर

$$Mo = L + \frac{f - f_1}{2f - f_1 - f_2} \times$$

$$= 39.5 + \frac{15-7}{2\times15-7-9} \times 10$$

$$= 39.5 + \frac{8}{30-7-9} \times 10$$

$$= 39.5 + \frac{8}{14} \times 10$$

$$= 39.5 + 5.71$$

$$= 45.21$$ (उत्तर)

नोट– बहुलांक के सूत्रों द्वारा बहुलांक निकालने पर उत्तरों में भिन्नता आ सकती है। अतः भ्रम में नहीं पड़ते हुए किसी भी एक विधि द्वारा बहुलांक की गणना की जा सकती है। अभ्यास के दृष्टिकोण से मध्यमान और मध्यिका ज्ञात करके बहुलांक ज्ञात करना बेहतर है।

3.6.3 बहुलांक की विशेषताएँ–

1. केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापों में बहुलांक सबसे कम शुद्ध और कम विश्वसनीय मान है।
2. बहुलांक की गणना मध्यमान तथा मध्यांक की गणना की अपेक्षा अधिक सरल है।
3. अव्यवस्थित आँकड़ों में बहुलांक की स्थिति निश्चित नहीं होती है। ऐसे आँकड़ों में एक से अधिक बहुलांक होते हैं।
4. केन्द्रीय प्रवृत्ति के माप के रूप में सर्वाधिक प्ररूपी मान की आवश्यकता होने पर बहुलांक का प्रयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए, कक्षा में सर्वाधिक प्रिय बालक, व्यावसायिक पाठ्यक्रमों के विषय में विद्यार्थियों की सर्वाधिक मान्य धारणा, लोकप्रिय फैशन या सम्बन्धित समस्या का अध्ययन करने में।

शैक्षिक अवस्थाएँ और बहुलांक का उपयोग–

बहुलांक का प्रयोग निम्न प्रकार की शैक्षिक अवस्थितियों में किया जा सकता हैं–

1. जब केवल निरीक्षण मात्र से ही केन्द्रीय प्रवृत्ति की गणना करनी हो।
2. जब सबसे कम शुद्ध तथा सबसे कम विश्वसनीय केन्द्रीय प्रवृत्ति के मान की गणना करनी हो।
3. जब आँकड़े पूर्ण न हो या बंटन विषम हों।

3.6.4 बहुलांक की सीमाएँ–

1. बहुलांक अन्य केन्द्रीय मापकों की अपेक्षा कम शुद्ध मान है।
2. छोटे वितरण में बहुलांक का प्रयोग उपयुक्त नहीं होता है।
3. शुद्ध बहुलांक की गणना कठिन होती है।

अभ्यास प्रश्न – ग

1. निम्नलिखित में से बहुलांक का सूचक है –

   (क) मध्य शून्य (ख) मध्य सर्वाधिक शून्य

   (ग) सर्वाधिक आवृत्ति शून्य (घ) इनमें से कोई नहीं

2. दिए गए वितरण 3, 4, 2, 1, 7, 6, 6, 7, 5, 6, 3, 9, 5 का बहुलांक होगा –

   (क) 5 (ख) 6

   (ग) 7 (घ) 9

3. निम्नलिखित में से बहुलांक का सूत्र है –

   (क) 3 × मध्यांक – 2 × मध्यमान (ख) मध्यांक × मध्यमान

   (ग) 2 × मध्यांक – 3 × मध्यमान (घ) मध्यमान – मध्यांक

3.7 सार–संक्षेप–

इस इकाई में केन्द्रीय प्रवृत्ति के तीनों मापों तथा अव्यवस्थित एवं व्यवस्थित दोनों प्रकार के आँकड़ों के परिकलन की विधियाँ तथा विभिन्न शैक्षिक अवस्थाओं में उनके सापेक्ष महत्व और सीमाओं की चर्चा की गई है। मध्यमान, मध्यांक तथा बहुलांक बहुत सी बातों के आधार पर एक–दूसरे से भिन्न होते हैं। इनका उपयोग करते समय प्रदन्तों की प्रकृति, मापन पैमाने तथा मापन के उद्देश्यों को ध्यान में रखने की आवश्यकता होती है। मध्यमान इन सबमें अधिक परिशुद्ध विश्वसनीय तथा स्थायी माप है। यदि बंटन विषम हों या विकृत हों तो मध्यमान की जगह मध्यांक सर्वाधिक वांछनीय माप हो सकता है। परन्तु यदि प्रदतों को देखने मात्र से ही कोई निर्णय लेना हो तो बहुलांक ही सर्वाधिक उचित माप है। अंततः यह कहा जा सकता है कि इनमें से किसी को भी सभी अवस्थाओं के लिए उचित या अनुचित नहीं समझा जा सकता है। इनका उपयोग आवश्यकता तथा संदर्भ के अनुसार किया जाना चाहिए।

3.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न–

1. मध्यमान, मध्यांक तथा बहुलांक की परिभाषा दीजिए तथा इनकी विशेषताओं और सीमाओं का वर्णन कीजिए।
2. निम्नलिखित अवस्थितियों में केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापकों में से किस मापक का प्रयोग करेंगे।

   (क) कक्षा के विद्यार्थियों की औसत ऊँचाई ज्ञात करने में?

   (ख) किसी विद्यालय के कक्षा X के विद्यार्थियों के गणित के प्राप्तांकों के मध्य का अंक ज्ञात करने में?

   (ग) कक्षा के सर्वाधिक प्रिय छात्र/छात्रा का पता लगाने में?

3. नीचे दी गई अव्यवस्थित अंक सामग्री का मध्यमान तथा मध्यांक ज्ञात करें–

   18, 28, 26, 15, 45, 40, 29, 41, 54, 44

4. निम्नलिखित अव्यवस्थित अंक सामग्री का बहुलांक ज्ञात कीजिए–

   5, 8, 9, 10, 11, 11, 12, 13, 15, 11, 9

5. निम्नलिखित बारंबारता बंटन का मध्यमान, मध्यांक तथा बहुलांक ज्ञात कीजिए–

वर्ग अंतराल	10-14	15-19	20-24	25-29	30-34	35-39	40-44
बारंबारता	4	6	8	14	10	5	3

6. निम्नलिखित बंटन का मध्यांक ज्ञात कीजिए–

वर्ग अंतराल	5-9	10-14	15-19	20-24	25-29	30-34	35-39
बारंबारता	4	7	11	19	24	23	14

7. निम्न व्यवस्थित अंक सामग्री का मध्यमान, मध्यांक तथा बहुलांक ज्ञात कीजिए–

प्राप्तांक	16	17	18	19	20	21	22	23	24	25
आवृत्ति	1	2	4	5	8	10	8	6	4	2

3.9 पारिभाषिक शब्दावली–

मध्यमान–सभी मापों के योग को उनकी कुल संख्या से भाग देने पर प्राप्त मूल्य माध्य कहलाता है।

मध्यांक–मापन पैमाने पर मध्यांक वह बिन्दु है जिसके नीचे तथा ऊपर ठीक 50–50 प्रतिशत प्राप्तांक हों।

बहुलांक– बहुलांक मान वह मूल्य है, जो वितरण में सबसे अधिक बार आता है।

केन्द्रीय प्रवृत्ति– केन्द्रीय प्रवृत्ति का मापन एक ऐसा मूल्य होता है, जो कि सम्पूर्ण अंक श्रृंखला का प्रतिनिधित्व करता है।

3.10 संदर्भ ग्रन्थ–

1- Garrett, H.E. (1978) : "Statistics in Psychology and Education," Vakils, Feffer and Simons Pvt. Ltd., Mumbai.

2- Guilford, J.P. (1965) : "Fundamental Statistics in Psychology and Education", McGraw Hill Book Company, New York.

3- Walker, H.A. & Lev, J. (1965): "Elementary Statistics Methods", Oxford & IBH Publishing Co., Kolkata.

4- Hannagan, T.J. (1982): "Mastering Statistics" The Macmillan Press Ltd., New York.

5- तारेश भाटिया (2003) आधुनिक मनोवैज्ञानिक सांख्यिकी – लावण्य प्रकाशन उरई (उ.प्र.)

3.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर–

अभ्यास प्रश्न – क

1. 18 2. 20 3. मध्यमान

अभ्यास प्रश्न – ख

1. मध्यांक 2. 9 3. (i) सही (ii) सही

अभ्यास प्रश्न – ग

1. ग 2. ख 3. क

इकाई 4 विचलनशीलता का संप्रत्यय, प्रसार, मध्यमान विचलन, चतुर्थक विचलन, प्रामाणिक विचलन एवं प्रसरण, विचरण गुणांक

इकाई संरचना

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 विचलनशीलता का अर्थ
4.4 विचलन मापों के प्रकार
4.5 प्रसार विचलन
4.6 चतुर्थक विचलन की अवधारणा
4.6.1 चतुर्थक विचलन का परिकलन
4.6.2 चतुर्थक विचलन की व्याख्या
4.7 मध्यक विचलन की अवधारणा
4.7.1 मध्यक विचलन का परिकलन
4.7.2 मध्यक विचलन की व्याख्या
4.8 प्रामाणिक या मानक विचलन की अवधारणा
4.8.1 प्रामाणिक या मानक विचलन का परिकलन
4.8.2 प्रामाणिक या मानक विचलन की व्याख्या
4.9 प्रसरण एवं प्रसरण गुणांक
4.10 सार–संक्षेप
4.11 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न
4.12 पारिभाषिक शब्दावली
4.13 संदर्भ–ग्रन्थ
4.14 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

4.1 प्रस्तावना–

केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापों के द्वारा व्यक्तियों के गुणों या व्यक्तिगत भिन्नता का मूल्यांकन किया जाता है अर्थात् ये हमें वितरण की केन्द्रीय प्रवृत्ति का आभास तो देती हैं परन्तु वितरण के स्वभाव का ज्ञान नहीं देती हैं। विचलन के मापों की सहायता से विभिन्न समूहों का शुद्ध वर्णन तथा तुलना की जाती है। इसके द्वारा किसी समूह की समजातीयता तथा विषमजातीयता ज्ञात की जाती है।

इस इकाई में आप विचलनशीलता के अर्थ तथा उसके विभिन्न प्रकारों का अध्ययन करेंगे। इसके अलावा चतुर्थक विचलन, मध्यक विचलन तथा मानक विचलन की अवधारणा से परिचित होने के साथ–साथ उनके परिकलन तथा प्राप्त मानों की व्याख्या से भी परिचित होंगे।

4.2 उद्देश्य–

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आप इस योग्य हो जाऐंगे कि आपः–

1. विचलनशीलता के अर्थ को स्पष्ट कर सकेंगे,
2. विचलन मापों के प्रकारों के बारे में बता सकेंगे,

3. चतुर्थक विचलन को परिभाषित कर सकेंगे तथा उसके परिकलन के साथ–साथ प्राप्त परिणाम की व्याख्या कर सकेंगे,
4. मध्यक विचलन को परिभाषित कर सकेंगे तथा उसके परिकलन के साथ–साथ प्राप्त परिणाम की व्याख्या कर सकेंगे,
5. मानक विचलन को परिभाषित कर सकेंगे तथा उसके परिकलन के साथ–साथ प्राप्त परिणाम की व्याख्या भी कर सकेंगे।

4.3 विचलनशीलता के अर्थ–

केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापनों से संख्यात्मक प्रदत्तों की केवल एक विशेषता का ही ज्ञान प्राप्त होता है। इन मापनों से इस बात की जानकारी नहीं हो पाती हैं कि इन विशेष मूल्य के चारों ओर अंकों का फैलाव क्या है तथा यह फैलाव किस प्रकार का है? हमें इस बात का भी ज्ञान नहीं हो पाता है कि समूह की प्रकृति क्या है? वह समजातीय है अथवा विषमजातीय है। कोई भी दो समूह लगभग समान केन्द्रीय प्रवृत्ति का मापन रख सकते हैं। परन्तु फिर भी उनकी बनावट में अन्तर हो सकता है।

उदाहरण के लिए एक परीक्षण पर कक्षा IX की बालिकाओं का प्राप्तांक 38.0 है तथा कक्षा IX के ही बालकों का मध्यमान प्राप्तांक 38.3 है। मध्यमान मूल्यों को देखने से स्पष्ट है कि दोनों समूह इस परीक्षण में लगभग समान हैं, परन्तु बालिकाओं के समूह में उच्चतम तथा निम्नतम अंक क्रमशः 42 तथा 14 हैं, जबकि बालकों के समूह में उच्चतम अंक 42 तथा निम्नतम अंक 36 है। अतः बालिकाओं के समूह के अंकों का विस्तार 42–14= 28 है जबकि बालकों के समूह के अंकों का विस्तार 42–36 = 6 है। अंक विस्तारों में यह अन्तर स्पष्ट करता है कि बालिकाओं का समूह अधिक विचलन रखता है, जबकि बालकों का समूह कम विचलन रखता है। इस प्रकार बालिकाओं का समूह विषमजातीय कहा जाएगा तथा बालकों का समूह समजातीय कहा जाएगा। यदि एक समूह समजातीय है, तो यह लगभग समान योग्यता वाले व्यक्तियों से निर्मित है। इस समूह के अधिकांश मूल्य एक ही मापन के चारों ओर फैले होंगे तथा इसका अंक विस्तार कम होगा।

उपर्युक्त उदाहरण से स्पष्ट है कि केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापन की सहायता से हम अंक समूह के संबंध में पूर्ण ज्ञान उस समय तक प्राप्त नहीं कर सकते हैं, जब तक हमें एक अन्य महत्वपूर्ण मापन विचलनशीलता के संबंध में ज्ञान न हो।

गैरेट (1973) के अनुसार, ''विचलनशीलता का अर्थ प्राप्तांकों का वितरण या फैलाव से है, यह फैलाव प्राप्तांकों की केन्द्रीय प्रवृत्ति के चारों ओर होता है।''

लिंडक्यूस्ट (1950) के अनुसार, ''विचलनशीलता वह सीमा है, जिसमें प्राप्तांक अपने मध्यमान के ऊपर और नीचे की ओर वितरीत या विचलित रहते हैं।''

4.4 विचलन मापों के प्रकार –

विचलन मान को ज्ञात करने की निम्नलिखित चार विधियाँ या माप हैं जिनका प्रयोग शिक्षा और मनोविज्ञान के क्षेत्रों में होता हैं–

1. प्रसार (Range)
2. चतुर्थक विचलन (Quartile Deviation)
3. मध्यक विचलन (Mean Deviation)
4. मानक विचलन (Standard Deviation)

4.5 प्रसार (Range) –

प्रसार विचलन वितरण का विचलन ज्ञात करने की सबसे सरल विधि है। इस विधि के अन्तर्गत वितरण की सबसे छोटी तथा सबसे बड़ी संख्या ज्ञात करके उनके अन्तर को ज्ञात कर लेते हैं। यह अन्तर ही प्रसार विचलन होता है।

गैरेट के अनुसार, ''प्रसार उच्चतम तथा निम्नतम प्राप्तांकों के मध्य का अन्तराल है।''

इसका संकेत – चिन्ह R है।

प्रसार की गणना का सूत्र

R= अधिकतम अंक – न्यूनतम अंक

उदाहरण–1 निम्नलिखित आँकड़ों का प्रसार ज्ञात कीजिए–

5, 8, 11, 14, 17, 19, 16, 24,

हल : प्रश्न में, अधिकतम अंक 24, न्यूनतम अंक = 5

अतः R = अधिकतम अंक–न्यूनतम अंक

= 24 – 5 = 19

प्रसार की विशेषताएँ–

1. प्रसार विचलनशीलता का सबसे सरल मापन हैं।
2. यह केवल उच्चतम तथा निम्नतम मूल्यों की ही गणना करता है।
3. प्रसार पर प्रतिदर्श परिवर्तन का प्रभाव पड़ता है।
4. प्रसार की गणना बहुत सरल है। बहुधा इसका प्रयोग आवृत्ति वितरण बनाने में किया जाता है।
5. प्रसार का प्रयोग केवल वर्णनात्मक स्तर तक ही किया जाता है, निष्कर्षात्मक कार्यो में इसका उपयोग नहीं हैं।

प्रसार का उपयोग–

प्रसार की गणना निम्नलिखित स्थितियों में की जानी चाहिए–

1. जब अंक बहुत फैले हों तथा विचलन के अन्य मापनों की गणना संभव न हो।
2. जब किसी वितरण के विचलन का सरलता और अति शीघ्रता से पता लगाना हो।
3. जब विचलनशीलता के एक अनुमानित मापन की गणना करनी हो।
4. जब केवल सीमान्त मूल्यों का अन्तर ज्ञात करना हो।

प्रसार की सीमाएँ–

1. चूँकि प्रसार में सीमान्त मूल्यों को महत्व दिया जाता है इसलिए प्रसार कम विश्वसनीय विचलन माप है।
2. यह एक प्रतिनिधित्वपूर्ण मापन नहीं है, क्योंकि यह समस्त मूल्यों पर आधारित नहीं होता है।
3. प्रसार से दो समूहों की तुलना का केवल अपूर्ण ज्ञान प्राप्त होता है।

4.6 चतुर्थक विचलन की अवधारणा–

प्रसार दो सीमान्त मूल्यों पर आधारित होता है, अर्थात् प्रसार मापने के पैमाने पर वह दूरी अथवा अन्तराल है जिसके अन्तर्गत शत–प्रतिशत प्राप्तांक समा जाते है। परन्तु विचलनशीलता के कुछ माप ऐसे भी हैं जो इन दो सीमान्त मूल्यों से स्वतंत्र अथवा निराश्रित हैं। इनमें सर्व सामान्य माप चतुर्थक विचलन है जो उस अन्तराल पर आधारित होता है जिसमें किसी बंटन के बीच के 50% प्राप्तांक आते हैं।

चतुर्थक मापने के पैमाने पर बिन्दु है, जो बंटन की समस्त बारंबारताओं को चार समान भागों में बाँट देता है। चतुर्थक विचलन Q किसी भी अंक ऋंखला के प्रथम चतुर्थांश Q_1 तथा तृतीय चतुर्थांश Q_3 के मध्य के अन्तर का आधा होता है। इसी कारण इसे अर्द्ध–अन्तर–चतुर्थक विचलन भी कहा जाता है। विचलनशीलता का यह मापन इस सिद्धान्त पर आधारित है कि चूँकि मध्यांक मान अंक ऋंखला को दो बराबर भागों में बाँटता है जिसके एक ओर समस्त छोटे मूल्य तथा दूसरी ओर सभी बड़े मूल्य होते हैं। प्रथम चतुर्थांश Q_1 छोटे मूल्यों वाले आधे भाग का मध्यमान तथा तृतीय चतुर्थांश Q_3 बड़े मूल्यों वाले आधे भाग का मध्यमान होता है। प्रथम चतुर्थांश Q_1 वह मूल्य होता है जिसके नीचे या जिसके बराबर 75% अंक आते हैं।

गैरेट (1973) के अनुसार, ''चतुर्थांश विचलन या एक आवृत्ति वितरण में 75वें एवं 25वें प्रतिशतांशों के मध्य मापक दूरी का आधा होता है।'' प्रथम चतुर्थांश का अर्थ है 25वाँ प्रतिशतांक या Q_1। इसी प्रकार तृतीय चतुर्थांश का अर्थ है 75वाँ प्रतिशतांक या Q_3।

4.6.1 चतुर्थक विचलन का परिकलन–

अव्यवस्थित अंक सामग्री का चतुर्थांश विचलन–

अव्यवस्थित अंक सामग्री का चतुर्थक विचलन ज्ञात करने के लिए निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग करते हैं–

$$Q = \frac{Q_3 - Q_1}{2}$$

जहाँ $Q_1 = \left(\frac{N+1}{4}\right)\text{th term}$

$$Q_3 = \left(\frac{3(N+1)}{4}\right)\text{th them}$$

जिसमें N = प्राप्तांकों की संख्या

इस प्रकार Q_1 तथा Q_3 की गणना करके Q_3 में से Q_1 घटाकर फिर 2 से भाग देकर चतुर्थक विचलन Q की गणना कर लेते हैं।

<u>उदाहरण</u> 2 : दिए गए अव्यवस्थित आँकड़ों का चतुर्थक विचलन ज्ञात कीजिए–

5, 10, 12, 19, 27, 28, 38, 37, 36, 38, 36

हलः ऊपर दिए आँकड़ों को आरोही क्रम में लिखने पर,

5, 10, 12, 19, 27, 28, 36, 36, 37, 38, 38

Q का ज्ञात करने के लिए सबसे पहले Q_1 तथा Q_3 ज्ञात करना होगा।

$$Q_1 = \left(\frac{N+1}{4}\right)\text{th term}$$

$$= \left(\frac{11+1}{4}\right)\text{th term} = \left(\frac{12}{4}\right)\text{th term}$$

$$= \text{3rd term} = 12$$

$$Q_3 = \left(\frac{3(N+1)}{4}\right)\text{th term}$$

$$= \left(\frac{3(11+1)}{4}\right)\text{th term}$$

$$= \left(\frac{36}{4}\right)\text{th term} = \text{9th term} = 37$$

अतः $Q = \frac{Q_3 - Q_1}{2} = \frac{37-12}{2} = \frac{25}{2} = 12.5$

व्यवस्थित अंक सामग्री से चतुर्थक विचलन की गणना–

व्यवस्थित अंक सामग्री से चतुर्थक विचलन की गणना का सूत्र है–

$$Q = \frac{Q_3 - Q_1}{2}$$

जहाँ, Q= चतुर्थक विचलन

Q_3 =वह प्रतिशतांक जिसके नीचे 75 प्रतिशत (3N/4) आवृत्तियाँ होती हैं

Q_1 = वह प्रतिशतांक जिसके नीचे 25 प्रतिशत (N/4) आवृत्तियाँ होती हैं

इसी प्रकार, Q_2 = वह प्रतिशतांक जिसके नीचे 50 प्रतिशत (N/2) आवृत्तियाँ होती हैं। Q_3 मध्यांक भी कहलाता है।

Q_1 तथा Q_2 निकालने का सूत्र–

$$Q_1 = L + \left(\frac{N/4 - F}{f}\right) \times i$$

$$Q_3 = L + \left(\frac{3N/4 - F}{f}\right) \times i$$

जहाँ, L = उस वर्गान्तर की निम्नतम सीमा जिसमें Q_1 या Q_3 पड़ते हैं।

N = आवृत्तियों का कुल योग

F = उस वर्गान्तर तक की संचयी आवृत्ति जिसमें Q_1 या Q_3 हैं।

f = जिस वर्गान्तर में Q_1 या Q_3 हैं, उस वर्गान्तर की आवृत्ति

i = वर्गान्तर का आकार

उदाहरण–3 दी गई व्यवस्थित अंक सामग्री का चतुर्थक विचलन ज्ञात कीजिए–

वर्ग अन्तराल (C.I.)	10-14	15-19	20-24	25-29	30-34	35-39	40-44	45-49	50-54
आवृत्ति (f)	2	5	7	11	5	1	2	2	1

हल :

C.I.	f	c.f.
50-54	1	36
45-49	2	35
40-44	2	33
35-39	1	31
30-34	5	30
25-29	11	25
20-24	7	14
15-19	5	7
10-14	2	2
	N = 36	

प्रश्न में, निकालने के लिए हमें N/4 = $\frac{36}{4} = 9$ केस लेने हैं, तथा Q_3 निकलने के लिए हमें $3N/4 \frac{3\times36}{4} = \frac{108}{4} = 27$ केसों को लेना है।

संचयी आवृत्ति वाले स्तम्भ को देखने से पता चलता है कि 9 संमंक 20–24 वाले वर्ग अन्तराल में आएंगें जिसकी वास्तविक सीमाएं 19.5 – 24.5 है। अतः का स्थान 19.5 – 24.5 वाले वर्ग अन्तराल में होगा। का मान इस प्रकार निकाला जाएगा–

$$Q_1 = L + \left(\frac{N/4 - F}{f}\right) \times i$$

$$= 19.5 + \frac{9 - 7}{7} \times 5$$

$$= 19.5 + \frac{2}{7} \times 5$$

$$= 19.5 + \frac{10}{7} = 19.5 + 1.43$$

$= 20.93$

Q_3 की गणना करने के लिए संचयी आवृत्ति 27 वर्ग–अंतराल 30–34 में पड़ेगी जिसकी असली सीमाएँ 29.5 – 34.5 है। अतः Q_3 वर्ग अन्तराल 29.5 – 34.5 में होगा और इसका मूल्य इस प्रकार निकाला जाएगा।

$$Q_3 = L + \left(\frac{3N/4 - F}{f}\right) \times$$

$$= 29.5 + \left(\frac{27 - 25}{5}\right) \times 5$$

$$= 29.5 + \frac{2 \times 5}{5}$$

$$= 29.5 + 2 = 31.5$$

इस प्रकार $Q = \frac{Q_3 - Q_1}{2}$

$$= \frac{31.5 - 20.93}{2}$$

$$= \frac{11.57}{2}$$

$$= 5.78$$

अतः $Q = 5.78$ (उत्तर)

4.6.2 चतुर्थक विचलन की व्याख्या–

चतुर्थक विचलन की विशेषताएँ–

1. चतुर्थक विचलन की गणना करना आसान होता है।
2. इसके मूल्य पर सीमान्त मूल्यों का कम प्रभाव पड़ता है।
3. असमान वर्ग वितरण में इसकी गणना करना संभव है।
4. यह क्रमिक स्तर के प्राप्तांकों के लिए अधिक उपयोगी है।
5. गुण, रचना तथा गणना में इसका संबंध मध्यांक से है।
6. निष्कर्षात्मक सांख्यिकी में चतुर्थक विचलन का कम उपयोग है परन्तु वर्णनात्मक सांख्यिकी में इसका उपयोग अधिक है।

सममित तथा विषम बंटन–

माध्यिका तथा चतुर्थक विचलन की सहायता से बंटन की सममिति तथा वैषम्य के बारे में बतलाया जा सकता है।

कोई बारंबारता बंटन सममित कहलाएगा यदि सभी बारंबारताएँ केन्द्रीय प्रवृत्ति के माप के दोनों ओर सममित रीति से बंटी हुई हों। दूसरे शब्दों में यदि केन्द्रीय प्रवृत्ति के माप के दोनों ओर

समान दूरी वाले बिन्दुओं पर समान बारंबारताएँ हों तो बंटन सममित होगा।

<u>उदाहरण –4</u> निम्नलिखित बारंबारता बंटन के बारे में ज्ञात करें कि बंटन सममित है अथवा नहीं।

समंक	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
बारंबारता	2	3	4	5	6	7	6	5	4	3	2

उपर्युक्त उदाहरण में केन्द्रीय प्रवृत्ति के निरूपक मध्यमान तथा मध्यांक दोनों 6 हैं। 6 के दोनों ओर 1 और 11; 2 और 10; 4 और 8 एवं 5 और 7 की बारंबारताएँ एक समान हैं। अतः यह बंटन पूर्ण रूप से सममित है। एक सममित बंटन के मध्यमान तथा मध्यांक समान होते हैं तथा मध्यांक दोनों चतुर्थकों (Q_1 तथा Q_3) से समान दूरी पर होती हैं।

अर्थात् Q_3– मध्यांक = मध्यांक –Q_1

अथवा 2× मध्यांक $Q_3 - Q_1$

यदि कोई बारंबारता बंटन सममित नहीं है तो सममिती से उसका अलगाव या विचलन, वैषम्य का द्योतक होगा।

यदि वक्र का लंबा सिरा दायीं ओर है तो वक्र धनात्मक विषम वक्र होगा, यदि बायीं ओर है तो ऋणात्मक विषम वक्र होगा। समान वितरण वाले वक्रों की अपेक्षा इस प्रकार के वक्र व्यवहार में बहुत अधिक पाए जाते हैं।

(अ) धनात्मक वैषम्य (ब) ऋणात्मक वैषम्य

धनात्मक वैषम्य वाले वक्र में;

Q_3– मध्यांक > मध्यांक –Q_1

ऋणात्मक वैषम्य वाले वक्र में;

Q_3– मध्यांक < मध्यांक –Q_1

<u>चतुर्थक विचलन के दोष–</u>

1. यह केवल बीच के 50 प्रतिशत प्राप्तांकों के विचलन का ही अध्ययन करता है।
2. इसमें किसी भी प्रकार के औसत की गणना नहीं की जाती है और न ही विचलन ज्ञात किया जाता है।
3. यह एक अविश्वसनीय मापन है।
4. यह सभी मूल्यों पर आधारित नहीं है।

<u>चतुर्थक विचलन के उपयोग–</u>

1. जब केन्द्रीय मापकों में मध्यांक की गणना की गई हो।
2. जब प्राप्तांकों का वितरण सामान्य हो।
3. जब प्रतिदर्श छोटा हो।
4. जब अंक वितरण अपूर्ण हो, अर्थात् उसमें बीच–बीच में गैप हो।
5. जब वितरण के अंकों का फैलाव अधिक हो अथवा सीमान्त प्राप्तांक हों, जो मानक विचलन को अनावश्यक रूप से प्रभावित करते हों।

6. जब मध्य के 50 प्रतिशत पदों का मध्यांक मान पर ही केन्द्रित करने का प्रमुख उद्देश्य हो।

4.7 मध्यक विचलन की अवधारणा (मध्यमान विचलन)

मध्यक विचलन (Average Deviation) को औसत विचलन या मध्यमान विचलन भी कहते हैं। मध्यमान से सभी मूल्यों के विचलनों के औसत को मध्यक विचलन या औसत विचलन कहते हैं। गिलफोर्ड (1973) के अनुसार, ''मध्यमान विचलन, मध्यमान से भिन्न–भिन्न प्राप्तांकों के विचलनों का मध्यमान है। जबकि धन तथा ऋण चिन्हों को ध्यान में न रखा गया हो।''

किसी मापन पैमाने पर केन्द्रीत प्रवृत्ति के माप के दोनों ओर काफी मूल्य बिखने होते हैं। अतः इस बिन्दु से विचलन दोनों दिशाओं में होंगे। दूसरे शब्दों में, विचलन धनात्मक और ऋणात्मक दोनों होंगे।

मध्यमान विचलन के संकेत चिन्ह, AD या MD हैं। मध्यक विचलन मध्यमान या मध्यांक से विचलन का मापक हैं।

मध्यक विचलन (AD या MD) $= \dfrac{\Sigma|X-M|}{N}$

जहाँ ,
X = समंक
M = माध्य
N = समंकों की संख्या

यदि किसी समंक को X से निरूपित किया जाए और माध्य को M से, $(X-M)$ माध्य से किसी समंक के विचलन को निरूपित करता है। यदि माध्य समंक से बड़ा होगा तो विचलन ऋणात्मक होगा। अर्थात् इन विचलनों का बीजगणितीय योग शून्य आएगा, क्योंकि केन्द्र बिन्दु से दोनों ओर के विचलन समान होते हैं। परन्तु इस समस्या से निपटने के लिए इन विचलनों के निरपेक्ष मूल्य ले लिए जाते हैं। इस प्रकार सभी विचलनों को धनात्मक ही माना जाता है।

4.7.1 मध्यक विचलन का परिकलन–

अव्यवस्थित अंक सामग्री से मध्यक विचलन का परिकलन–

उदाहरण 5 निम्न अव्यवस्थित अंक सामग्री का मध्यक विचलन ज्ञात कीजिए।

25, 18, 22, 30, 15, 20, 23, 19, 28, 16

हल– सर्वप्रथम उपर्युक्त अव्यवस्थित अंक सामग्री का मध्यमान ज्ञात करते हैं।

$$M = \frac{\Sigma X}{N} = \frac{25+18+22+30+15+20+23+19+28+16}{10}$$

$$= \frac{25+18+22+30+15+20+23+19+28+16}{10}$$

$$= \frac{216}{10} = 21.6$$

X	X – M	| X – M |
25	+3.4	3.4
18	-3.6	3.6
22	+0.4	0.4
30	+8.4	8.4
15	-6.6	6.6
20	-1.6	1.6
23	+1.4	1.4
19	-2.6	2.6
28	+6.4	6.4
16	-5.6	5.6
216		Σ|X – M| = 40.0

मध्यम विचलन $= \dfrac{\Sigma|X-M|}{N}$

$= \dfrac{40.0}{10} = 4$

व्यवस्थित अंक सामग्री से मध्यक विचलन की गणना–

व्यवस्थित अंक सामग्री का मध्यक विचलन ज्ञात करने का निम्नलिखित सूत्र हैं।

$MD = \dfrac{\Sigma f\,|X-M|}{N}$ जहाँ, f = आवृत्ति

व्यवस्थित अंक सामग्री से मध्यक विचलन ज्ञात करने के लिए सर्वप्रथम दीर्घ अथवा लघु रीति से मध्यमान ज्ञात करते हैं। मध्य बिन्दु का मध्यमान से विचलन ज्ञात करने के लिए मध्य बिन्दु में से मध्यमान को घटाया जाता है। इन विचलनों का निरपेक्ष मान ज्ञात कर लेने पश्चात् उन विचलनों को उनसे संबंधित आवृत्तियों से गुणा करेंगे। अन्त में $\Sigma f\,|X\text{-}M|$ को N से भाग देकर मध्यक विचलन ज्ञात कर लेंगे।

उदाहरण–6 निम्न व्यवस्थित अंक सामग्री का मध्यक विचलन ज्ञात कीजिए जिसमें मध्यमान दीर्घ–विधि से ज्ञात कीजिए–

C.I.	10-19	20-29	30-39	40-49	50-59	60-69
f	3	5	10	12	6	4

हल :

C.I.	f	मध्य बिन्दु (X)	fx	|X-M| या |X¹|	f|X-M| या |fX¹|
10-19	3	14.5	43.5	+26.12	78.36
20-29	5	24.5	122.5	+16.12	80.60
30-39	10	34.5	340.5	+6.12	61.20
40-49	12	44.5	534.0	+3.88	46.56

50-59 60-69	6 4	54.5 64.5	327.0 258.0	+13.88 +23.88	83.28 95.52
	N = 40		Σfx = 1625		Σf|X-M| = 445.52

मध्यमान $(M) = \frac{\Sigma fX}{N} = \frac{1625}{40}$

$= 40.625 = 40.62$

मध्यक विचलन $= \frac{\Sigma f\,|X-M|}{N}$

$= \frac{445.52}{40} = 11.14$ (उत्तर)

उदाहरण–7 नीचे दिए गए प्रदत्तों का मध्यक विचलन ज्ञात कीजिए–

C.I.	90-94	85-89	80-84	75-79	70-74	65-69	60-64	55-59	50-54
f	2	5	8	9	6	3	3	3	1

हल :

C.I.	f	d	fd	मध्य बिन्दु (X)	|X-M| या |X¹|	f|X-M| या |fX¹|
90-94	2	+3	+6	92	16.75	33.50
85-89	5	+2	+10	87	11.75	58.5
80-84	8	+1	+8	82	6.75	54.00
75-79	9	0	0	77	1.75	15.75
70-74	6	-1	-6	72	3.25	19.50
65-69	3	-2	-6	67	8.25	24.75
60-64	3	-3	-9	62	13.25	39.75
55-59	3	-4	-12	57	18.25	54.75
50-54	1	-5	-5	52	23.25	23.25
	N = 40		Σfd=-14			Σf|X¹|=324.00

मध्यमान $(M) = AM + \left(\frac{\Sigma fd}{N}\right) \times i$

यहाँ AM = 77, fd = -14, N = 40 तथा $i = 5$

अतः $M = 77 + \frac{(-14)}{40} \times 5$

$= 77 + \frac{(-70)}{40}$

$= 77 + (-1.75)$

= 77-1.75 = 75.25

मध्यम विचलन $(MD) = \frac{|\Sigma fX'|}{N}$

$= \frac{324}{40} = 8.1$ (उत्तर)

4.7.2 मध्यक विचलन की व्याख्या–

मध्यक विचलन के गुण–

1. यह विचलन का एक ऐसा माप है, जो श्रृंखला के समस्त मूल्यों पर निर्भर करता है।
2. मध्यक विचलन की गणना सीमान्त के अंक से कम प्रभावित होती है।
3. इसकी गणना करना सरल है।
4. इसको सरलता से समझा जा सकता है।
5. सभी मूल्यों पर आधारित होने के कारण इसे प्रतिनिधिपूर्ण मापन कहा जा सकता है।

मध्यक विचलन के दोषः

गणितीय दृष्टिकोण से यह शुद्ध नहीं है, क्योंकि इसमें धन तथा ऋण चिन्हों को महत्व नहीं दिया जाता है। अतः यह एक अनिश्चित माप है।

मध्यक विचलन का उपयोगः

इस मापन की गणना निम्नलिखित स्थितियों में करनी चाहिए–

1. जब मध्यमान से सभी विचलनों को उनके आकार के अनुसार भार प्रदान करना हो।
2. जब वितरण बहुत अधिक विषम हों।
3. जब सीमान्त मूल्य प्रमाप विचलन (S.D.) को प्रभावित करते हों।
4. जब सरलता और शीघ्रता से विचलनशीलता के मापन की गणना करनी हो।
5. जब वितरण के मध्यमान के दोनों ओर के प्राप्तांकों का समान रूप से विचलन ज्ञात करना हो।

4.8 प्रामाणिक विचलन की अवधारणा (Standard Deviation)–

विचलनशीलता के विभिन्न मापों में सबसे अधिक प्रयोग में आने वाला माप प्रामाणिक विचलन है। यह विचलन ज्ञात करने की सर्वोत्तम विधि है। गिलफोर्ड के अनुसार, ''प्रामाणिक विचलन किसी श्रेणी के विभिन्न पदों के समान्तर मध्यक से विचलन के वर्गो के समान्तर मध्यक का वर्गमूल होता है।'' दूसरे शब्दों में, यदि दिए गए प्राप्तांकों के मध्यमान से प्राप्तांकों का विचलन ज्ञात किया जाए (धन तथा ऋण चिन्हों पर बिना ध्यान दिए), प्रत्येक विचलन का वर्ग किया जाए, फिर इन वर्गो को जोड़कर उनकी संख्या से भाग देकर प्राप्त संख्या का वर्गमूल निकालने में जो संख्या प्राप्त होती है वह प्रामाणिक विचलन कहलाता है।

इसका प्रयोग अधिकतर प्रयोगात्मक कार्यो और अनुसंधान में है क्योंकि एक समूह की सम–जातीयता तथा विषम–जातीयता ज्ञात करने का यह एक श्रेष्ठ माप है।

प्रामाणिक विचलन का संकेत–चिन्ह SD अथवा ग्रीक अक्षर सिगमा (σ) है।

4.8.1 प्रामाणिक विचलन का परिकलन–

प्रामाणिक विचलन के परिकलन हेतु व्यवस्थित और अव्यवस्थित वितरण के लिए दो विभिन्न सूत्रों का प्रयोग किया जाता है।

(क) अव्यवस्थित अंक सामग्री का प्रामाणिक विचलन–

अव्यवस्थित अंक सामग्री का प्रामाणिक विचलन ज्ञात करने का निम्नलिखित सूत्र है–

$$S.D. = \sqrt{\frac{\Sigma d^2}{N}} \text{ या } S.D. = \sqrt{\frac{\Sigma (X-M)^2}{N}}$$

जबकि d = मध्यमान से विचलन

Σd^2 = मध्यमान से लिए गए विचलनों के वर्ग का योग

N = प्राप्तांकों की संख्या

उदाहरण–8 नीचे दिए समंकों का मानक विचलन ज्ञात करें–

12, 15, 10, 8, 11, 13, 18, 10, 14, 9

सर्वप्रथम दिए गए प्राप्तांकों का मध्यमान ज्ञात किया जाता है। फिर मध्यमान से प्राप्तांकों का विचलन ज्ञात किया जाता है। विचलन ज्ञात करने के लिए प्राप्तांकों में से मध्यमान को घटा देते हैं या प्राप्तांकों और मध्यमान का अंतर ज्ञात कर लेते हैं। विचलनों का वर्ग करके योग प्राप्त कर लेते हैं। यह योग Σd^2 के बराबर होता है। फिर N का मान ज्ञात करके Σd^2 के मान और N के मान को सूत्र में रखकर S.D. की गणना कर लेते हैं।

समंक– 12, 15, 10, 8, 11, 13, 18, 10, 14, 9 का मध्यमान

$$M = \frac{\Sigma X}{N} = \frac{120}{10} = 12$$

समंक (X)	X - M = d	$(X – M)^2 = d^2$	
12	0	0	इन मूल्यों को सूत्र पर रखने पर
15	3	9	$S.D. = \sqrt{\frac{\Sigma d^2}{N}}$
10	-2	4	$= \sqrt{\frac{84}{10}}$
8	-4	16	$= \sqrt{8.4}$
11	-1	1	= 2.9 (उत्तर)
13	1	1	
18	6	36	
10	-2	4	
14	2	4	
9	-3	9	
ΣX=120		$\Sigma(X-M)^2 = 84$	

उदाहरण 9

दी हुई अव्यवस्थित अंक सामग्री का प्रामाणिक विचलन ज्ञात कीजिए–

10, 14, 15, 18, 18, 25, 25, 35

समंक (X)	X - M = d	d^2
10	10-20=-10	100

14	14-20=-6	36
15	15-20=-5	25
18	18-20=-2	4
18	18-20=-2	4
25	25-20=5	25
25	25-20=5	25
35	35-20=15	225
ΣX=160		$\Sigma d^2 = 444$

मध्यमान $(M) = \frac{\Sigma X}{N} = \frac{160}{8} = 20$

प्रमाणिक विचलन $(S.D.) = \sqrt{\frac{\Sigma d^2}{N}}$

$= \sqrt{\frac{444}{8}} = \sqrt{55.5}$

= 7.45 (उत्तर)

(ख) <u>व्यवस्थित अंक सामग्री का प्रामाणिक विचलन</u>–

व्यवस्थित अंक सामग्री का प्रामाणिक विचलन दो विधियों द्वारा ज्ञात कर सकते हैं।

(क) <u>संक्षिप्त विधि</u>– संक्षिप्त विधि द्वारा प्रामाणिक विचलन ज्ञात करने हेतु निम्नलिखित सूत्रों का प्रयोग कर सकते हैं–

प्रथम सूत्र– $S.D. = \& \sqrt{\frac{\Sigma f d^2}{N} - \left(\frac{\Sigma f d}{N}\right)^2}$

द्वितीय सूत्र– $S.D. = \frac{\&}{N}\sqrt{N\left(\Sigma f d^2\right) - \left(\Sigma f d\right)^2}$

द्वितीय सूत्र प्रथम सूत्र का ही सरलीकृत रूप है।

जहाँ, S.D. = प्रमाणिक विचलन

i = वर्गान्तर का आकार

Σfd^2 = विचलनों के वर्ग एवं आवृत्तियों के गुणनफल का योग

Σfd = आवृत्तियों एवं विचलनों के गुणनफल का योग अथवा आवृत्ति विचलन

N = प्राप्तांकों की संख्या

<u>उदाहरण 10</u> :

दी हुई व्यवस्थित अंक सामग्री का संक्षिप्त विधि द्वारा ( ) प्रामाणिक विचलन ज्ञात कीजिए–

C.I.	0-2	3-5	6-8	9-11	12-14	15-17	18-20
f	1	3	5	7	6	5	3

हल :

C.I.	f	d	fd	fd^2
0-2	1	-3	-3	9
3-5	3	-2	-6	12
6-8	5	-1	-5	5
9-11	7	0	0	0
12-14	6	+1	+6	6
15-17	5	+2	+10	20
18-20	3	+3	+9	27
	N = 30		Σfd = 11	$\Sigma fd^2 = 79$

यहाँ $i = 3, N = 30, \Sigma fd = 11$ एवं $\Sigma fd^2 = 79$

इन मानों को सूत्र में रखने पर,

$$S.D. = \& \sqrt{\frac{\Sigma f d^2}{N} - \left(\frac{\Sigma f d}{N}\right)^2}$$

$$3 \times \sqrt{\frac{79}{30} - \left(\frac{11}{30}\right)^2}$$

$$= 3 \times \sqrt{\frac{79}{30} - \frac{121}{900}}$$

$$= 3 \times \sqrt{2.63 - 0.134}$$

$$= 3 \times \sqrt{2.496}$$

$$= 3 \times 1.58$$

$$= 4.74$$ (उत्तर)

द्वितीय सूत्र द्वारा गणना –

$$\text{S.D.} = \frac{\&}{\text{N}}\sqrt{N\left(\Sigma fd^2\right) - \left(\Sigma fd\right)^2}$$

$$= \frac{3}{10}\sqrt{30 \times 79 - (11)^2}$$

$$= \frac{1}{10}\sqrt{2370 - 121}$$

$$= \frac{1}{10} \times \sqrt{2249}$$

$$= \frac{1}{10} \times 47.4$$

$$= 4.74$$

अतः S.D. = 4.74 (उत्तर)

उदाहरण 11

दी हुई व्यवस्थित अंक सामग्री का संक्षिप्त विधि द्वारा प्रामाणिक विचलन ज्ञात कीजिए–

C.I.	25-34	35-44	45-54	55-64	65-74	75-84
f	2	7	10	12	6	3

हल :

C.I.	f	d	fd	fd^2
75-84	3	+2	+6	12
65-74	6	+1	+6	6
55-64	12	0	0	0
45-54	10	-1	-10	10
35-44	7	-2	-14	28
25-34	2	-3	-6	18
	N = 40		Σfd = 18	$\Sigma fd^2 = 74$

यहाँ i = 10, N = 40, Σfd = 18 , $\Sigma fd^2 = 74$

इन मानों को सूत्र में रखने पर,

$$\text{S.D.} = \&\sqrt{\frac{\Sigma fd^2}{\text{N}} - \left(\frac{\Sigma fd}{\text{N}}\right)^2}$$

$$=10\times\sqrt{\frac{74}{40}-\left(\frac{-18}{40}\right)^2}$$

$$=10\times\sqrt{\frac{74}{40}-\left(\frac{324}{1600}\right)}$$

$$=10\times\sqrt{1.85-0.202}$$

$$=10\times\sqrt{1.648}$$

$$=10\times1.283$$

$$=12.83$$

अतः मानक विचलन = 12.83 (उत्तर)

द्वितीय सूत्र द्वारा गणना–

$$\text{S.D.}=\frac{\&}{\text{N}}\sqrt{N\left(\Sigma f\text{d}^2\right)-\left(\Sigma f\text{d}\right)^2}$$

$$=\frac{10}{4}\times\sqrt{40\times74-(-18)^2}$$

$$=\frac{1}{4}\times\sqrt{2960-324}$$

$$=\frac{1}{4}\times\sqrt{2636}$$

$$=\frac{1}{4}\times51.34$$

= 12.835 (उत्तर)

(ख) दीर्घ विधि द्वारा की गणना–

व्यवस्थित अंक सामग्री का दीर्घ विधि द्वारा प्रामाणिक विचलन ज्ञात करने का निम्नांकित सूत्र है–

$$\text{S.D. या } \sigma=\sqrt{\frac{\Sigma f\text{d}^2}{N}}$$

जहाँ, d = मध्यमान से विचलन

fd^2 = विचलनों के वर्गों का उनसे संबंधित आवृत्तियों से गुणा

N = प्राप्तांकों की संख्या

इस विधि द्वारा प्रामाणिक विचलन ज्ञात करने के लिए पहले दीर्घ विधि द्वारा मध्यमान ज्ञात किया जाता है। मध्यमान ज्ञात करते समय $M = \frac{\Sigma fx}{N}$ सूत्र का प्रयोग किया जाता है।

मध्यमान ज्ञात करने के पश्चात् विचलन की गणना करते हैं। मध्यमान और मध्य बिन्दु का अन्तर d के बराबर होता है। d में f का गुणा करके स्तम्भ के मान प्राप्त करते हैं। फिर fd में d का गुणा कर fd^2 स्तम्भ के मान प्राप्त करते हैं।

अन्त में Σfd^2 और N का मान ज्ञात कर मूल्यों को S.D. के सूत्र में रखकर गणना करते हैं और S.D. का मान ज्ञात कर लेते हैं।

उदाहरण 12

दी हुई व्यवस्थित अंक सामग्री का प्रामाणिक विचलन दीर्घ विधि द्वारा ज्ञात कीजिए–

C.I.	0-2	3-5	6-8	9-11	12-14	15-17	18-20
f	1	3	5	7	6	5	3

हल :

C.I.	f	x	fx	d	d^2	fd^2
18-20	3	19	57	7.9	62.41	187.23
15-17	5	16	80	4.9	24.01	120.05
12-14	6	13	78	1.9	3.61	21.66
9-11	7	10	70	-1.1	1.21	8.47
6-8	5	7	35	-4.1	16.81	84.05
3-5	3	4	12	-7.1	50.41	151.23
0-2	1	1	1	-10.1	102.1	102.01
	N = 30		Σfd = 333			$\Sigma fd^2 = 674.70$

$$(M) = \sqrt{\frac{\Sigma fx}{N}} = \frac{333}{30} = 11.1$$

$$\text{S.D. या } \sigma = \sqrt{\frac{\Sigma fd^2}{N}}$$

$$= \sqrt{\frac{674.70}{30}} = \sqrt{22.49}$$

$= 4.75$ (उत्तर)

4.8.2 प्रामाणिक विचलन (मानक विचलन) की व्याख्या–

प्रामाणिक विचलन के गुण–

1. प्रामाणिक विचलन की गणना सभी मूल्यों पर निर्भर करती है।
2. यह ऋंखला के प्रत्येक अंक की सही स्थिति के लिए संवेदनशील होता है। यदि किसी मूल्य को मध्यमान से दूर हटा दिया जाए, तो प्रामाणिक विचलन बढ़ जाता है।
3. प्रतिदर्श की भिन्नता से प्रामाणिक विचलन बहुत कम प्रभावित होता है।
4. प्रामाणिक विचलन एक स्थिर तथा निश्चित मापन होता है। इसकी गणना प्रत्येक स्थिति में की जा सकती है।
5. प्रामाणिक विचलन बीजगणितीय नियमों का पालन करता है, क्योंकि समस्त ऋंणात्मक विचलन वर्ग करने से घनात्मक हो जाते हैं।
6. यह विचलन कई वर्णनात्मक एवं निष्कर्षात्मक सांख्यिकी की गणना का आधार होता है।
7. समूहों की समजातीयता और विषम जातीयता के अध्ययन में तथा शोध कार्यो में शुद्ध और श्रेष्ठ विचलन माप के रूप से इसका उपयोग किया जाता है।

प्रामाणिक विचलन की सीमाएँ–

1. प्रामाणिक विचलन को समझना कठिन होता है।
2. इसकी गण्ना करने में कठिन प्रक्रिया को अपनाना पड़ता है।
3. इसमें अति सीमान्त मूल्यों को अधिक महत्व प्राप्त होता है। अतः जब श्रृंखला में सीमान्त पद होते है, तो प्रामाणिक विचलन का मान बढ़ जाता है।

प्रामाणिक विचलन का उपयोग–

प्रामाणिक विचलन का उपयोग निम्नलिखित स्थिति में करना चाहिए–

1. जब विचलनशीलता के सर्वाधिक स्थिर मापन को ज्ञात करना हो।
2. जब केन्द्रीय मापकों में मध्यमान की गणना की गई हो।
3. जब दो समूहों में समजातीयता की तुलना करनी हो।
4. जब वितरण के सीमान्त प्राप्तांकों को महत्व देना हो।
5. जब सहसंबंध तथा मानक त्रुटि की गणना करनी हो।
6. जब किसी अंक ऋंखला में किसी अंक विशेष की स्थिति ज्ञात करनी हो, तो प्रामाणिक विचलन विधि से गणना की जानी चाहिए।

4.9 प्रसरण एवं प्रसरण गुणांक –

प्रसरण से तात्पर्य प्रमाणिक विचलन के वर्ग से है। प्रसरण को V या σ^2 से भी सूचित करते हैं। प्रसरण $(V) = \sigma^2$ या $V = \Sigma(X-M)^2 / N$

प्रदत्त के मध्यमान तथा प्रामाणिक विचलन के आधार पर प्रसरण गुणांक की गणना की जाती है। गिल्फोर्ड के अनुसार ''प्रसरण गुणांक प्रामाणिक विचलन तथा सम्बन्धित मध्यमान का अनुपात है। प्रायः इस अनुपात को 100 से गुणा किया जाता है।'' वितरण के प्रामाणिक विचलन में उसके मध्यमान से भाग देकर प्राप्त भागफल में 100 को गुणा कर प्रसरण गुणांक प्राप्त करते हैं। प्रसरण गुणांक की आवश्यकता दो अथवा दो से अधिक समूहों के मध्य विचलन के आधार

पर तुलना करने के लिये होती है। प्रसरण गुणांक के आधार पर दो समूह के मध्य तुलना निम्नलिखित दो स्थितियों में अधिक उपयोगी होती है –

(क) जबकि दो समूहों की इकाई समान न हो।

(ख) जबकि दो समूहों के मध्यमान समान न हों, किन्तु इकाई समान हों।

(क) मापन की इकाई भिन्न–भिन्न प्रकार की होती है, जैसे वजन अथवा भार का मापन ग्राम, किलोग्राम अथवा पौण्ड में किया जाता है। ऊँचाई अथवा लम्बाई का मापन सेण्टीमीटर, इंच अथवा फीट में किया जाता है। यदि दो वितरणों की अलग–अलग इकाई पर आधारित विशेषताओं के मध्य स्थित विचलन का तुलनात्मक अध्ययन करना होता है, तब प्रसरण गुणांक की गणना कर उपयुक्त तुलना की जा सकती है।

उदाहरण – 12 वर्ष के बालकों के समूह की लम्बाई का मध्यमान 120 सेमी. है तथा लम्बाई का प्रामाणिक विचलन 10 सेमी. है। इसी प्रकार इन बालकों के भार का मध्यमान 30 किलोग्राम तथा भार का प्रामाणिक विचलन 3.50 है। बालकों के समूह की लम्बाई तथा उनके भार के मध्य स्थित विचलन का तुलनात्मक अध्ययन करें।

बालकों के समूह की लम्बाई का प्रसरण गुणांक = प्रामाणिक विचलन / मध्यमान×100

$= 10 / 120 \times 100$

$= 8.33$

बालकों के समूह के भार का प्रसरण गुणांक = प्रामाणिक विचलन / मध्यमान×100

$= 3.50 / 30 \times 100$

$= 11.67$

स्पष्ट है कि बालकों के समूह की लम्बाई का प्रसरण गुणांक कम है जबकि उनके भार का प्रसरण गुणांक अधिक है। अतः लम्बाई की अपेक्षा भार की सापेक्ष विचलनशीलता अधिक है।

(ख) दो समूह के मापन की इकाई समान होने पर तथा मध्यमान के समान न होने पर भी प्रसरण गुणांक के आधार पर तुलना की जाती है।

उदाहरण –

मानसिक योग्यता स्तर का छात्र तथा छात्राओं के समूह पर अध्ययन कर निम्नलिखित मध्यमान तथा प्रामाणिक विचलन ज्ञात हुआ। दो समूहों के मध्य विचलनशीलता का अध्ययन करें।

समूह	छात्र	छात्रा
मध्यमान (Mean)	39.50	42.92
प्रामाणिक विचलन (S.D.)	4.50	6.08

छात्रों की मानसिक योग्यता या प्रसरण गुणांक = प्रामाणिक विचलन / मध्यमान × 100

$= 4.50 / 39.50 \times 100$

$= 11.39$

छात्राओं की मानसिक योग्यता या प्रसरण गुणांक=प्रामाणिक विचलन / मध्यमान×100

= 6.08 / 42.92 × 100

= 11.165

= 14.17

छात्र तथा छात्राओं के मानसिक योग्यता स्तर के प्रसरण गुणांक का तुलनात्मक अध्ययन करने से स्पष्ट है कि छात्रों के मानसिक योग्यता प्राप्तांकों के मध्य विचलन कम है, जबकि छात्राओं के मानसिक योग्यता प्राप्तांकों के मध्य तुलनात्मक रूप में अधिक विचलनशीलता है।

अभ्यास प्रश्न

1. **वितरण 8, 12, 17, 24, 11, 16, 28 का प्रसार होगा –**
   (अ) 8 (ब) 28
   (स) 20 (द) 24
2. **सूत्र $Q = Q_3 - Q_1/2$ के द्वारा ज्ञात किया जाता है –**
   (अ) प्रसार (ब) चतुर्थक विचलन
   (स) औसत विचलन (द) मानक विचलन
3. **चिन्ह "σ" से सूचित किया जाता है –**
   (अ) औसत विचलन को (ब) चतुर्थक विलचन को
   (स) मानक विलचन को (द) इनमें से किसी को नहीं

4.10 सार संक्षेप–

- वह गुण जो उस सीमा का सूचक है अर्थात् यह बताता हो कि किस सीमा तक किसी विचर के विभिन्न मूल्य केन्द्रीय मूल्य के चारों ओर फैले हुए हैं, विचलनशीलता कहलाती है।
- विचलनशीलता का माप मापन की पैमाने पर एक दूरी है।
- सामान्य रूप से प्रयोग में लाए जाने वाले विचलनशीलता के माप हैं– प्रसार, चतुर्थक विचलन, मध्यक विचलन तथा मानक विचलन (प्रामाणिक विचलन)।
- उच्च स्तरीय सांख्यिकीय परिकलनों में प्रामाणिक विचलन की आवश्यकता पड़ती है।
- विचलनशीलता के किसी विशेष माप को परिकलित करने से पूर्व यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि वही सांख्यक उस अवस्था के लिए उपयुक्त माप है।

4.11 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न–

1. विचलन मापकों से आप क्या समझते हैं? उदाहरण सहित समझाइए तथा इनके विभिन्न प्रकारों का वर्णन कीजिए।
2. निम्न अव्यवस्थित अंक सामग्री का प्रामाणिक विचलन तथा मध्यमान विचलन ज्ञात कीजिए।

   क. 10, 14, 15, 18, 25, 25, 35

ख. 5, 8, 9, 10, 12, 3, 5, 8, 10, 10

निम्न अव्यवस्थित अंक सामग्री का मध्यमान विचलन ज्ञात कीजिए।

20, 25, 20, 18, 21, 23, 24, 22, 23, 24

2 निम्न अव्यवस्थित अंकों का चतुर्थक विचलन ज्ञात कीजिए।

पद संख्या	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
प्राप्तांक	5	10	12	19	27	28	35	36	36	38	38

3 निम्नलिखित आवृत्ति–वितरण का मध्यमान विचलन ज्ञात कीजिए।

वर्ग अन्तराल	0-10	10-20	20-30	30-40	40-52
आवृत्ति	5	8	15	16	6

4 निम्नलिखित व्यवस्थित अंक सामग्री का चतुर्थक विचलन ज्ञात कीजिए।

वर्ग अन्तराल	35-36	33-34	31-32	29-30	27-28	25-26	23-24	21-22
आवृत्ति	1	2	5	7	6	5	2	2

5 नीचे दिए गए प्रदत्तों का चतुर्थक विचलन तथा प्रामाणिक विचलन ज्ञात कीजिए।

वर्ग अन्तराल	90-94	85-89	80-84	75-79	70-74	65-69	60-64	55-59	50-54
आवृत्ति	2	5	8	9	6	3	3	3	1

6 निम्नलिखित बारंबारता बंटन का मध्यक विचलन, चतुर्थक विचलन तथा प्रामाणिक विचलन परिकलित कीजिए।

C.I.	10-14	15-19	20-24	25-29	30-34	35-39	40-44
f	4	6	8	14	10	5	3

4.12 पारिभाषिक शब्दावली

- **विचलनशीलता–**विचलनशीलता का अर्थ प्राप्तांकों का केन्द्रीय प्रवृत्ति के चारों ओर फैलाव या वितरण से है।
- **प्रसार विचलन–** अधिकतम अंक या मान तथा न्यूनतम अंक के अन्तर को प्रसार कहते हैं।
- **चतुर्थक या चतुर्थांश विचलन–**चतुर्थक विचलन किसी भी अंक श्रृंखला के प्रथम चतुर्थांश तथा तृतीय चतुर्थांश के मध्य के अन्तर का आधा होता है।
- **मध्यक विचलन–**मध्यमान विचलन, यह मध्यमान से भिन्न–भिन्न प्राप्तांकों के विचलनों का मध्यमान है जबकि धन तथा ऋण चिन्हों को ध्यान में न रखा गया हो।
- **प्रामाणिक विचलन–**दिए गए प्राप्तांकों के मध्यमान से प्राप्तांकों के विचलनों के वर्गो के मध्यमान का वर्गमूल ही प्रामाणिक विचलन है।
- **प्रसरण –**प्रामाणिक विचलन का वर्ग प्रसरण कहलाता है।

4.13 सन्दर्भ ग्रन्थ

1- Garrett, H.E. (1956) : Elementary Statistics Langmans, Green & Co., New York.
2- Blommers, P. and Lindquist, E.F. (1959) : Elementary Statistical Methods, Houghton Mifflin Company, Boston.
3- Lindergreen, B.w. (1975) : Basic Ideas of Statistics, Macmillan Publishing Co. Inc., New York.
4- Wine, R.L. (1976), Beginning Statistics, Winthrop Publishers Inc., Massachusetts.
5- Bhatia, Taresh (2003), Aadhunik Manovaigyanik Sankhyiki.
6- भाटिया, तारेश, आधुनिक मनोवैज्ञानिक सांख्यिकी, लावण्य प्रकाशन, उरई
7- श्रीवास्तव, डी.एन., सांख्यिकी एवं मापन
8- अस्थाना, विपिन, शिक्षा और मनोविज्ञान में सांख्यिकी

4.14 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. स
2. ब
3- स

इकाई–5 प्रसामान्य वितरण :प्रसम्भाव्यता का संप्रत्यय,प्रसामान्य सम्भाव्य वक्र की विशेषताएँ, विषमता एवं कुकुदता,प्रसामान्य सम्भाव्यता वक्र के अनुप्रयोग

इकाई संरचना–

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 सामान्य संभाव्यता वक्र का अर्थ
5.4 सामान्य वक्र की विशेषताएं
5.5 जेड – प्राप्तांक
5.6 प्रसामान्य वक्र के अन्तर्गत क्षेत्रों की तालिका/सारणी
5.7 प्रसामान्य संभावना वक्र के स्थिरांकों में सम्बन्ध
5.8 सामान्य संभावना वक्र से विचलन
5.8.1 विषमता
5.8.1.1 ऋणात्मक विषमता
5.8.1.2 धनात्मक विषमता
5.8.2 ककुदता या कुर्टोसिस
5.9 सामान्य संभाव्यता वक्र के उपयोग
5.9.1 अनुप्रयोग – 1
5.9.2 अनुप्रयोग – 2
5.9.3 अनुप्रयोग – 3
5.9.4 अनुप्रयोग – 4
5.9.5 अनुप्रयोग – 5
5.10 सारांश
5.11 शब्दावली
5.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
5.13 संदर्भ ग्रन्थ सूची
5.14 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना–

पिछली इकाई में आपने सांख्यिकी विषय की मूलभूत अवधारणों, प्रदत्तों के आवृत्ति वितरण में प्रस्तुतीकरण, केन्द्रीय प्रवृत्ति के विभिन्न मापों तथा केन्द्रीय प्रवृत्ति से विचलनों की जानकारी प्राप्त की।

प्रस्तुत इकाई में वैसे प्रदत्तों एवं उनके वितरणों की चर्चा की जायेगी जो सामान्य रूप से वितरित होते हैं तथा जिनके आधार पर एक घंटीनुमा वक्र तैयार होता है जिसे सामान्य संभाव्यता वक्र कहते हैं। इस इकाई में आप सामान्य संभाव्यता वक्र का अर्थ, उसकी विशेषता, सामान्यता से विचलन की माप (विषमता एवं ककुदता), सामान्य वक्र के अनुप्रयोग आदि के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

इस इकाई के अध्ययन से आपको यह लाभ होगा कि आप किसी वितरण की सामान्यता की जाँच कर सकेंगे तथा इसके विभिन्न सूत्रों का अनुप्रयोग इस पर आधारित समस्या का समाधान करने हेतु कर सकेंगे।

5.2 उद्देश्य–

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप इस योग्य हो जायेंगे कि आप–

- सामान्य संभाव्यता वक्र की विशेषताएं बता सकें।
- सामान्य वक्र तालिका को देखने एवं इसका इस्तेमाल करने में सक्षम हो सकें।
- विषमता एवं ककुदता को परिभाषित कर सकें तथा उनमें अन्तर बता सकें।
- सामान्य वक्र के विभिन्न अनुप्रयोगों पर आधारित प्रश्नों को हल कर सकें।

5.3 सामान्य संभाव्यता वक्र का अर्थ –

सामान्य संभाव्यता वक्र को सामान्य वक्र भी कहा जाता है। इसका विकास 'त्रुटि के नियम' के आधार पर हुआ है। इस वक्र के जन्मदाता ए.डी–मुवरे (1667–1754) कहे जाते हैं। वे एक फ्रेंच गणितज्ञ थे। अपने जीवन का 66 वर्ष उन्होंने इग्लैण्ड में बिताया और यहीं पर जुआ के खेल में 'संयोग' की घटना की व्याख्या सामान्य संभाव्यता के आधार पर की। खगोलविद लैपलेस तथा गौस ने भी भौतिक विज्ञान में निरीक्षण सम्बन्धी त्रुटियों की व्याख्या सामान्यता के आधार पर की तथा त्रुटियों का सामान्य वक्र बनाया। चाहे जुए के खेल में संयोग की घटना हो या ग्रहों के निरीक्षण में त्रुटियों की घटना, इसके आधार पर इन गणितज्ञों ने प्रकृति की विभिन्न विशेषताओं की व्याख्या सामान्य वितरण के आधार पर करने का प्रयास किया। सामान्य वितरण की विशेषता यह होती हैं कि वितरण के मध्य में सर्वाधिक प्राप्तांक होते हैं तथा क्रमशः दोनों किनारों पर घटते जाते हैं। इसी सामान्य वितरण के आधार पर जो वक्र बनता है उसे सामान्य वितरण वक्र या सामान्य सम्भाव्यता वक्र या सामान्य वक्र कहते हैं। यह वक्र सममित होता है तथा इसकी ऊँचाई मध्य में सर्वाधिक होती हैं। दोनों किनारों की ओर इसकी ऊँचाई घटती जाती है, परन्तु आधार रेखा को स्पर्श नहीं करती।

भौतिक विज्ञान, जीव–विज्ञान, खगोलशास्त्र, समाजशास्त्र, शिक्षाशास्त्र, मनोविज्ञान, योग एवं चिकित्सा आदि के क्षेत्रों में जो प्रदत्त प्राप्त होते हैं उनमें सामान्य वितरण की विशेषता होती है। यदि हम व्यक्तियों की बुद्धि, समायोजन, चिन्ता, सांवेगिकता, तनाव, कार्य संतुष्टि आदि का मापन करें तो इनमें वैयक्तिक भिन्नता का दर्शन होता है और एक विशाल समूह की उपर्युक्त विशेषताओं को मापने पर पता चलता है कि व्यक्तियों में ये विशेषताएँ सामान्य रूप से वितरित होती हैं। ये शीलगुण अधिकांश व्यक्तियों में औसत स्तर पर विद्यमान होते हैं जबकि बहुत कम व्यक्तियों में औसत से अधिक या औसत से कम शीलगुण विद्यमान होते हैं। यानी, विभिन्न शीलगुणों/विशेषताओं में से किसी भी गुण का अध्ययन करने पर एक सामान्य वितरण वक्र निर्मित होता है जिसके आधार पर समूह की उस विशेषता की व्याख्या की जा सकती हैं।

सामान्य वितरण के आंकड़े इस प्रकार के होते हैं कि इनके आधार पर बनाया गया वक्र घण्टी के आकार का दिखाई पड़ता है। इसके मध्य में अधिकतम प्राप्तांक होता है और दोनों किनारे पर प्राप्तांकों की संख्या कम होती जाती हैं। इस वक्र के मध्य एक खड़ी रेखा खींची जाय तो वक्र दो बराबर भागों में विभक्त हो जायेगा तथा इस रेखा के दोनों ओर कुल प्राप्तांकों के 50–50 प्रतिशत प्राप्तांक अवस्थित होंगे। किसी सामान्य वितरण के मध्यमान, मध्यांक और

बहुलांक समान होते हैं और वे सामान्य वक्र के मध्य में एक ही बिन्दु पर स्थित होते हैं। प्राप्तांकों का फैलाव भी दोनों ओर समान रूप से होता है। आधार रेखा को प्रामाणिक विचलन द्वारा मापा जाता है। इसे निम्न चित्र से प्रदर्शित किया गया है–

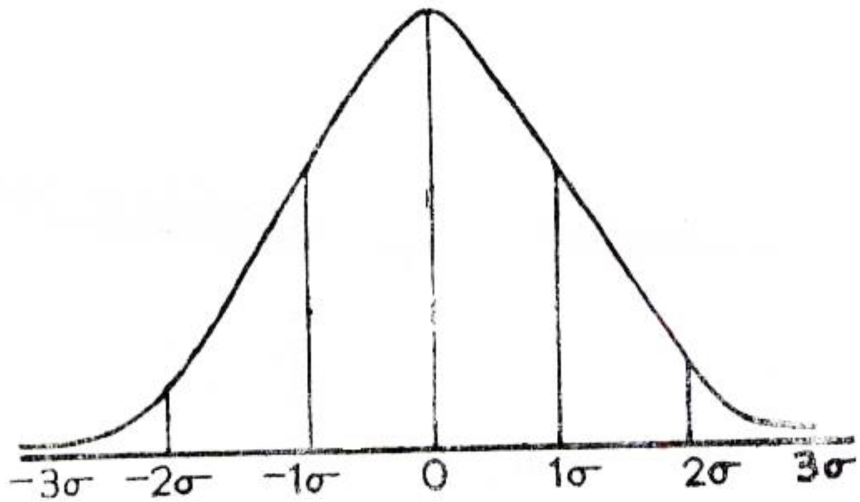

5.4 सामान्य वक्र की विशेषताएं–

सामान्य वक्र की निम्नलिखित विशेषताएं होती हैं जिनके आलोक में विभिन्न घटनाओं की व्याख्या की जाती है–

1. सामान्य वक्र का आविर्भाव संभाव्यता के सांख्यिकीय सिद्धान्त से हुआ है। यह एक सैद्धान्तिक कल्पना है।
2. यह सममित वक्र होता है। यदि इसे दो भागों में मोड़ दिया जाय तो दोनों भाग एक–दूसरे को पूरी तरह ढक लेते हैं यानी, वक्र की ऊँचाई मध्य–बिन्दु के दोनों तरफ केन्द्र से समान दूरी पर समान होती हैं।
3. सामान्य वितरण का मध्यमान, मध्यांक एवं बहुलांक समान होता है तथा तीनों ही सामान्य वक्र के मध्य में पड़ता है जहाँ वक्र की ऊँचाई अधिकतम होती हैं।
4. सामान्य वक्र का फैलाव अनन्त, सीमाहीन होता है, परन्तु माध्य से जैसे–जैसे दूरी बढ़ती जाती है, वक्र क्षैतिज रेखा (x–अक्ष) के करीब आता जाता है। लेकिन सैद्धान्तिक रूप से वह x–अक्ष को कभी नहीं छू पाता।
5. वक्र की आधार रेखा (x–अक्ष) को z प्राप्तांक द्वारा मापा जाता है जिसे σ–इकाई भी कहते हैं। z प्राप्तांक का माध्य शून्य तथा मानक विचलन 1 होता है।
6. चूँकि सामान्य वक्र का माध्य शून्य और मानक विचलन 1 होता है, अतः इसमें समस्त प्रतिदर्श सांख्यिकी सही ढंग से समाहित हो जाती हैं।
7. सामान्य वक्र का फैलाव $M \pm 3\sigma$ होता है। इस सीमा के अन्तर्गत किसी वितरण के सारे केसेज आ जाते हैं।
8. सामान्य वक्र वैसे तो क्षैतिज रेखा को नहीं छूता, परन्तु, माध्य से $\pm 1.96\,\sigma$ के अन्तर्गत 95% केसेज तथा माध्य से $\pm 2.58\sigma$ के अन्तर्गत लगभग 99% केसेज आ जाते हैं।

9. सामान्य वक्र की ऊँचाई केन्द्र–बिन्दु के दोनों ही ओर समान दूरी पर समान होती है। इसकी ऊँचाई का न्यूनतम मान कभी भी शून्य नहीं होता, परन्तु अधिकतम मान 0.3989 होता है।
10. सामान्य वक्र के दोनों ही ओर मध्य–बिन्दु से समान दूरी पर या एक दी हुई सीमा के भीतर पड़ने वाले केसेज का प्रतिशत समान होता है।
11. सामान्य वक्र का विषमता गुणांक शून्य होता है। यानी, वक्र में किसी प्रकार की विषमता नहीं पाई जाती, वह पूर्णतः संतुलित व सममित होता है।
12. सामान्य वक्र न ही अधिक चपटा होता है, न ही अधिक नुकीला। इसकी ऊँचाई औसत होती है तथा इसका ककुदता गुणांक 0.263 होता है।
13. सामान्य वक्र के मध्यमान से 1σ ऊपर तथा 1σ नीचे ($\pm$ 1σ तक) वक्र की आकृति अवतल होती है तथा इसके पश्चात् उत्तल में परिवर्तित होती है।
14. सामान्य वक्र के अन्तर्गत विचलनों के विभिन्न मापकों के मध्य एक निश्चित सम्बन्ध होता है। प्रथम चतुर्थांक (Q_1) तथा तृतीय चतुर्थांक (Q_3) का मध्यमान से अन्तर समान होता है जिसे चतुर्थक विचलन या सम्भाव्य त्रुटि कहा जाता है।

5.5 जेड–प्राप्तांक–

Z-प्राप्तांक मानक प्राप्तांकों के कई प्रकारों में से एक है जिसका माध्य तथा मानक विचलन निर्दिष्ट होता है। यह वितरण के माध्य से प्राप्ताकों की दूरी मानक विचलन की इकाई में बतलाता है। इसे σ– प्राप्तांक भी कहा जाता है। Z-प्राप्तांक की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसका माध्य हमेशा शून्य तथा मानक विचलन हमेशा एक होता है। यानी, Z-प्राप्तांक में $M = 0$ तथा $\sigma = 1$ होता है। Z-प्राप्तांक यह बतलाता है कि वितरण का कोई भी प्राप्तांक माध्य से मानक विचलन की कितनी इकाई ऊपर है या नीचे है।

किसी दिए हुए माध्य तथा मानक विचलन के लिए किसी प्राप्तांक का

$Z = \frac{X - M}{\sigma}$ होता है

जहाँ

Z = जेड प्राप्तांक

X - प्राप्तांक

M – माध्य

σ - मानक विचलन

इसे एक उदाहरण द्वारा समझा जा सकता है। मान लिया जाय कि किसी वितरण का माध्य 25 तथा मानक विचलन 5 है। अब यदि हम यह पता लगाना चाहें कि प्राप्तांक 30 तथा 20 माध्य से कितना इकाई ऊपर या नीचे है, तो हम Z-प्राप्तांक का सहारा इस प्रकार लेगें –

प्राप्तांक 30 के लिए,

$$Z = \frac{30 - 25}{5} = \frac{5}{5} = 1$$

ठीक इसी प्रकार प्राप्तांक 20 के लिए,

$$Z = \frac{20-25}{5} = \frac{5}{5} = -1$$

इस प्रकार स्पष्ट है कि प्राप्तांक 30 इस वितरण में माध्य से + 1σ इकाई ऊपर है तथा प्राप्तांक 2.0 इसी वितरण में -1 σ इकाई नीचे है (माध्य से)।

यदि इस प्राप्तांक 25 का इसी वितरण में Z–मूल्य निकालना चाहे तो यह शून्य होगा क्योंकि

यहाँ, $$Z = \frac{25-25}{5} = \frac{0}{5} = 0$$

सामान्य वक्र के सम्पूर्ण क्षेत्र को 10,000 मानते हुए इसे अलग–अलग Z प्राप्तांक के आधार पर बांटा गया है जिसकी एक तालिका (तालिका –2 जो इस इकाई के अन्त में है) भी बनायी गई है। इस तालिका के आधार पर कुछ महत्वपूर्ण मान इस प्रकार हैं –

M + 1σ = 34.13 % केसेज or, $\frac{3413}{10,000}$ या .3413 इकाई क्षेत्र में माध्य से दायें।

M - 1σ = 34.13 % केसेज or, $\frac{3413}{10,000}$ या .3413 इकाई क्षेत्र में माध्य से बायें।

इस तरह, M $\pm$ 1σ = 68.26% केसेज मध्य का।

पुनः, M - 2σ = 47.72% केसेज or, $\frac{4772}{10,000}$ या .4772 इकाई क्षेत्र में माध्य से दायें।

M + 2σ = 47.72% केसेज or, 4772 इकाई क्षेत्र में माध्य से बायें।

इस तरह, M $\pm$ 2σ = 95.44% केसेज माध्य से बराबर–बराबर दूरी बायें व दायें।

तथा M + 3σ = 49.865% केसेज or, $\frac{4986.5}{10,000}$ या .49865 इकाई क्षेत्र में माध्य से दायें।

M - 3σ = 49.865% केसेज or, 49865 इकाई क्षेत्र में माध्य से बायें।

इस तरह M $\pm$ 3σ = 99.73% केसेज (लगभग वक्रका सम्पूर्ण क्षेत्र)

सामान्य वक्र के दोनों छोरों पर यानी, $+3\sigma$ तथा -3σ के बाद में आने वाले केसेज को छोड़ दिया जाता है क्योंकि व्यावहारिक दृष्टिकोण से वक्र को यहां पर समाप्त माना जाता है तथा वे केसेज सामान्य वितरण के पूरे क्षेत्र, यानी 10,000 का सिर्फ 0.27 प्रतिशत ही बच जाते हैं जिस पर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया जाता है। नीचे के ग्राफ से यह बात अधिक स्पष्ट होती है –

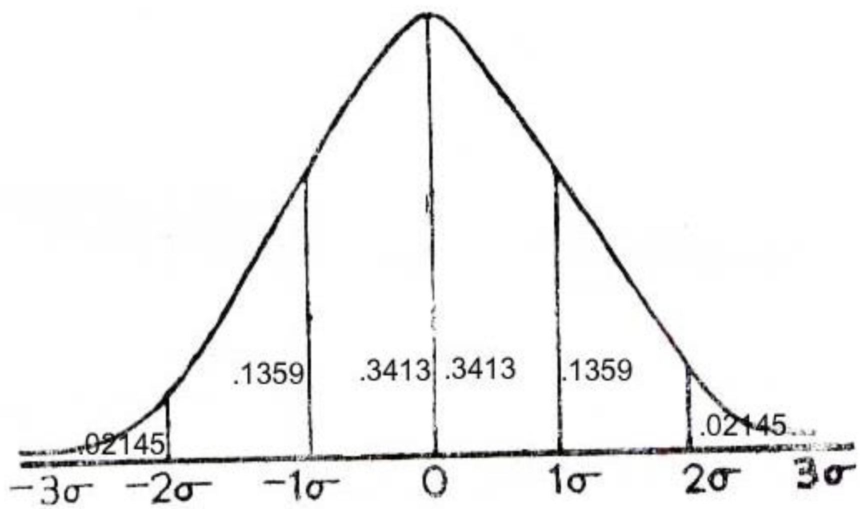

यहाँ सामान्य वक्र के क्षेत्र को अनुपात में दिखाया गया है। इसका बांया भाग =.3413 +.1359 +.02145 = दायां भाग। सम्पूर्ण क्षेत्र = 2x बायां भाग या 2x दायां भाग = .9973. परन्तु इसे पूरा 1 होना चाहिए। ऐसा इसलिए नहीं होता है क्योंकि वक्र के दोनों छोरों पर के क्षेत्र, ($\pm 3\sigma$ के बाद का क्षेत्र है) जो कि .0027 के बराबर है, को नगण्य समझकर छोड़ दिया जाता है। इस तरह से स्पष्ट है कि सामान्य विवरण में $M\pm1\sigma$ के बीच लगभग दो–तिहाई (68.26 प्रतिशत) केसेज होते हैं, $M\pm2\sigma$ के बीच लगभग 95 प्रतिशत केसेज तथा $M\pm3\sigma$ के बीच लगभग 99.7 प्रतिशत केसेज होते हैं।

Z - score का प्रयोग सार्थकता की जांच में भी किया जाता है। Z - score का यह एक बहुत ही प्रमुख प्रयोग है। माध्य से $\pm$ 1.96σके बाद सामान्य वितरण में 05 प्रतिशत केसेज आते हैं तथा $\pm$2.58σके बाद 1 प्रतिशत केसेज आते हैं क्योंकि Z-Table में 1.96σका मूल्य 47.50 है तथा 2.58 σका मूल्य 49.51 है। अतः यदि Z - प्राप्तांक $\pm$1.96 से लेकर $\pm$ 2.58 के बीच में हो तो उसे .05 या 5 प्रतिशत पर सार्थक माना जाता है। परन्तु Z - प्राप्तांक $\pm$2.58 से ज्यादा है तो उसे 01 प्रतिशत पर सार्थक माना जाता है।

कभी–कभी सामान्य वितरण वक्र में माध्य से 25 प्रतिशत ऊपर तथा 25 प्रतिशत नीचे के प्राप्तांक को जानने की आवश्यकता हो जाती है। अतः ऐसी स्थिति में मानक विचलन की जगह चतुर्थका विचलन (Q) का प्रयोग करके सामान्य वितरण के क्षेत्र को दिखाया जा कसता है जिसे सामान्य वक्र के संदर्भ में संभाव्य त्रुटि (PE) कहते हैं। σका आकार संभाव्य त्रुटि से बड़ा होता है क्योंकि M $\pm$ 1σके बीच जहां 68.26 प्रतिशत केसेज आते हैं वहीं M $\pm$ 1 PE के बीच सिर्फ 50 प्रतिशत केसेज ही आते हैं। दूसरी ओर, सामान्य वितरण के 99.7 प्रतिशत केसेज जहां M

$\pm$ 3σके अन्तर्गत आते हैं वहीं संभाव्य त्रुटि केस में इस मान के लिए M $\pm$ 4.5 PE की आवश्यकता पड़ती है।

$$PE = 0.6745\sigma$$

या σ = 1.4826 P.E. होता हैं

संभाव्य त्रुटि तथा मानक त्रुटि की विभिन्न इकाइयों के अन्तर्गत सामान्य वितरण के क्षेत्र का विभाजन निश्चित एवं स्थिर रहता है, अतः इन दोनों को सामान्य वितरण का स्थिरांक भी कहा जाता है।

5.6 प्रसामान्य वक्र के अन्तर्गत क्षेत्रों की तालिका या सारणी

इस इकाई के अन्त में दी हुई तालिका – 2 प्रसामान्य वक्र के अन्तर्गत सम्पूर्ण क्षेत्र के आंशिक भागों को दर्शाता है। यहाँ दूरी की माप σ'इकाईयों' के आधार पर किया गया है, अर्थात् मध्यमान और भुजाएँ जो मध्यमान से विभिन्न दूरियों पर खड़ी की गई हैं, उनके बीच प्रसामान्य वितरण के संपूर्ण क्षेत्र का कितना अंश या भाग पड़ेगा, यह तालिका द्वारा ज्ञात किया जाता है। गणना की सुगमता के लिए वक्र के अन्तर्गत संपर्ण क्षेत्र को 10,000 मान लिया गया।

तालिका –2 को देखने से स्पष्ट होता है कि पहले 'कालम' में $\frac{x}{\sigma}$ दिया हुआ है। यहाँ प्रसामान्य वितरण के आधार रेखा पर मध्यमान से या उद्गम से σ इकाई की दूरी दी गई है। यह ज्ञात हो चुका है कि x = X - M। यह किसी प्राप्तांक का मध्यमान से विचलन को बताता है। अब यदि x को वितरण के प्रमाणिक विचलन से भाग दिया जाय तो मध्यमान से विचलन को इकाई के रूप में प्रकट किया जाता है। इसे 'सिग्मा' प्राप्तांक या 'प्रामाणिक प्राप्तांक' कहते हैं।

'कालम के शीर्ष में 'σ की सौवें' में मध्यमान से दूरियों को दिया गया है। अब यदि यह ज्ञात करना है कि प्रसामान्य वितरण में मध्यमान और इससे 1σ की दूरी पर खड़ी की गई भुजा में कितने 'केसेज' पड़ेंगे तो 'कालम' में नीचे तब तक देखना होगा, जब तक 1.0 नहीं पहुंच जाय और दूसरे कालम में दाई ओर क्षैतिज दिशा में .00 के नीचे देखना होगा। यहां 3413 दिया हुआ है। इसका यह अर्थ हुआ कि मध्यमान और इससे 1σ के बीच प्रसामान्य वितरण के कुल 10,000 केसेज में से 3413 अर्थात् 34.13 या 34 केसेज पड़ेंगे। मान लिया जाय हमें यह ज्ञात करना है कि मध्यमान और 1.63σ के बीच प्रसामान्य वितरण के सम्पूर्ण क्षेत्र में से कितने केसेज पड़ेंगे। अब हमें टेबुल–2 में $\frac{x}{\sigma}$ के नीचे तब तक देखना है जब तक 1.0 नहीं पहुंच जाय और फिर ठीक इसके सामने दाईं ओर कॉलम में क्षैतिज दिशा में .03 के नीचे देखना होगा। तब ही हमें माध्य और 1.63σ के बीच के केसेज की संख्या मालूम पड़ेगी जो यहाँ 4,484 है। अतः, हम कह सकते हैं कि प्रसामान्य वितरण या वक्र के सम्पूर्ण क्षेत्र के 10,000 केसेज में से 4,484 केसेज मध्यमान और 1.63σ के बीच पड़ेंगे।

अब तक हम लोगों ने 'प्रसामान्य वक्र' में मध्यमान और इससे 'धनात्मक दिशा' में σ इकाई की दूरी को देखा है। चूंकि, प्रसामान्य वक्र दोनों पक्षों से ही सममित है, अतः टेबुल–2 में दी हुई σ दूरियां मध्यमान से 'धनात्मक' तथा 'ऋणात्मक दोनों दिशाओं में समान रूप से लागू होंगी।

प्रसामान्य वक्र के कुल क्षेत्र का आधा भाग जो मध्यमान से बाईं ओर है, वह मध्यमान से σ इकाई की दूरियों की ऋणात्मक दिशा और दूसरा आधा भाग जो मध्यमान से दाईं ओर है, वह मध्यमान से σ इकाई दूरियों को धनात्मक दिशा में दर्शाता है। उदाहरण के लिए, यदि हमें यह मालूम करना है कि मध्यमान और – 1.63σ के बीच प्रसामान्य वितरण के कितने केसेज पड़ेंगे तो टेबुल–2 में $\frac{x}{\sigma}$ के कॉलम में नीचे 1.6 तक देखना होगा और फिर बाईं ओर क्षैतिज दिशा में 0.03 के बीच देखना है और तब मालूम पड़ेगा कि प्रसामान्य वक्र के संपूर्ण क्षेत्र के कुल 10,000 केसेज मे से 4,484 केसेज मध्यमान और – 1.63σ के नीचे ऋणात्मक दिशा में होंगे।
प्रायोगिक उद्देश्य से यह मान लिया गया है कि प्रसामान्य वक्र का अन्त या समापन मध्यमान से –3σ और + 3σ दूरियों पर होता है। हालांकि, प्रसामान्य वक्र आधार रेखा से वास्तव में नहीं मिलता है।

(क) टेबुल–2 को देखने से स्पष्ट होता है कि प्रसामान्य वक्र में मध्यमान से +3σ और – 3σ दूरियों के बीच प्रसामान्य वितरण के संपूर्ण क्षेत्र के 10,000 केसेज में से 9973 या 99.73 प्रतिशत केसेज पड़ेंगे, अर्थात 4.986.5 केसज मध्यमान से नीचे ऋणात्मक दिशा में मध्य और – 3σ के बीच और 4,986.5 केसेज धनात्मक दिशा में मध्य और +3σ के बीच पड़ेंगे। वितरण के कुल केसेज का .27 या 1 प्रतिशत $\pm$ 3σ के बाहर होता है जिसकी उपेक्षा बहुत बड़े प्रतिदर्श के अलावा दूसरे प्रतिदर्श में करने पर कोई महत्वपूर्ण प्रभाव नहीं पड़ता।

(ख) मध्यमान से m2σ अर्थात M और –2σ तथा M और + 2σ के बीच क्रमशः ऋणात्मक और धनात्मक दिशाओं में 4,772 केसेज पड़ेंगे, अर्थात् M और – 2σ के बीच ऋणात्मक दिशा में 4,772 केसेज तथा M और + 2σ के बीच धनात्मक दिशा में 4,772 केसेज पड़ेंगे। कुल मिलाकर प्रसामान्य वक्र के संपूर्ण क्षेत्र के कुल 10,000 केसेज में से 9,544 या 95.44 प्रतिशत केसेज मध्यमान और $\pm$2σ के बीच पड़ेंगे (टेबुल–2 देखें)।

(ग) मध्यमान से m1σ अर्थात M और – 1σ तथा M+1σ के बीच क्रमशः ऋणात्मक और धनात्मक दिशाओं में 3413 केसेज पड़ेंगे अर्थात् M और – 1σ के बीच ऋणात्मक दिशा में 3413 केसेज पड़ेंगे तथा M और +1σ के बीच धनात्मक दिशा में 3413 केसेज पड़ेंगे। कुल मिलाकर प्रसामान्य वक्र के संपूर्ण क्षेत्र के कुल 10,000 केसेज में से 6,826 या 68.26 प्रतिशत केसेज मध्यमान और m1σ के बीच पड़ेंगे (टेबुल–2 देखें)।

5.7 प्रसामान्य संभावना वक्र के स्थिरांकों में संबंध

प्रसामान्य संभावना वक्र में मध्यमान, मध्यांक और बहुलांक सभी वितरण के ठीक मध्य–बिंदु पर पड़ते हैं और संख्यागत दृष्टि से समान होते हैं। चूंकि, प्रसामान्य वक्र दोनों तरफ से सममित है, इसलिए केन्द्रीय प्रवृत्ति के सभी मापक वितरण के मध्य यानी बीचों बीच में एक ही बिंदु पर पड़ेंगे।

परिवर्तनीयता या विचलनशीलता के मापकों में प्रसामान्य वक्र के संपूर्ण क्षेत्र के 'खास स्थिर भिन्न अंक' निहित होते हैं जिन्हें टेबुल से पढ़ा जा सकता है। जैसा कि ऊपर (क), (ख)

और (ग) में बताया गया है कि $Mm1\sigma$ के बीच प्रसामान्य वक्र के संपूर्ण क्षेत्र का दो–तिहाई (2/3) भाग, यानी, 68.26 प्रतिशत केसेज निहित है। $M\pm2\sigma$ के बीच 95 प्रतिशत केसेज तथा $M\pm3\sigma$ के बीच 99.7 प्रतिशत, यानी, करीब 100 प्रतिशत केसेज निहित हैं। दूसरे शब्दों में, यह कह सकते हैं कि संभावना है कि प्रसामान्य वितरण में $M\pm1\sigma$, $M\pm2\sigma$ और $M\pm3\sigma$ के बीच क्रमशः 68.26 प्रतिशत, 95 प्रतिशत तथा 99.7 प्रतिशत केसेज निहित होंगे।

मानक विचलन की जगह Q (चतुर्थक विचलन) को प्रसामान्य वक्र के क्षेत्रफल को निर्धारित करने हेतु माप की इकाई के रूप में उपयोग में लाया जा सकता है। साधारणतया प्रसामान्य वक्र में Q को साधारणतः संभावित त्रुटि कहा जाता है। PE और σ के संबंध को निम्नलिखित ढंग से व्यक्त किया जा सकता है –

(क) संभावित त्रुटि = $.6745\sigma$

(ख) मानक विचलन = $1.4826PE$

अतः स्पष्ट है कि मानक विचलन सदा संभावित त्रुटि से करीब 50 प्रतिशत बड़ा होता है। टेबुल–2 को देखने से स्पष्ट होता है कि $M \pm .6745\sigma$ or $\pm$ 1 PE के बीच 25 प्रतिशत केसेज मध्यमान के ठीक ऊपर और नीचे निहित है। वक्र के इस भाग को कभी–कभी बीच का 50 प्रतिशत कहा जाता है जिसका अत्यधिक महत्व है, क्योंकि यह सामान्य व्यवहार के प्रसार को निर्धारित करता है। उच्च 25 प्रतिशत और निम्न 25 प्रतिशत बीच के प्रसार की तुलना में क्रमशः श्रेष्ठ और कमजोर होते हैं। टेबुल–2 से स्पष्ट होता है कि प्रसामान्य वक्र में मध्यमान और$\pm$ 2 P.E. ($M\pm2$ P.E. or $\pm 1.3490\sigma$) के बीच इसके कुल क्षेत्र के 82.26 प्रतिशत केसेज पड़ते हैं। इसी प्रकार $M\pm3$ P.E. (or $\pm 2.0235\sigma$) और $M\pm4$ P.E. (or $\pm$ 2.6980σ) के बीच क्रमशः 97.70 प्रतिशत और 99.30 प्रतिशत केसेज निहित हैं।

5.8 सामान्य संभाव्यता वक्र से विचलन–

सामान्य वितरण में बहुत से केसेज वितरण केबीच में आते हैं तथा वितरण के दोनों छोरों की ओर बढ़ने पर केसेज धीरे–धीरे कम होते जाते हैं, परन्तु कभी–कभी ऐसा नहीं होता और वितरण का वक्र सामान्य वक्र से बहुत ही भिन्न हो जाता है। दरअसल, सामान्य वितरण भी एक प्रकार का आवृत्ति वितरण ही है, अन्तर सिर्फ इतना है कि सामान्य वितरण में मध्य की आवृति अधिकतम रहती है तथा ऊपर और नीचे की आवृत्ति क्रमशः एक समान रूप से कम होती जाती है।

जैसा कि ऊपर बताया गया, सामान्य वितरण वक्र एक सैद्धान्तिक कल्पना है। सामान्यतः प्राप्त आंकड़ों के आधार पर निर्मित वक्र सामान्य संभाव्यता वक्र के अनुरूप प्राप्त नहीं होता है। उसमें सामान्य वक्र की अपेक्षा कुछ–न–कुछ विचलन प्राप्त होता है। यह विचलन मुख्यतः दो प्रकार का होता है–

1. विषमता
2. ककुदता

5.8.1 विषमता–

विषमता से तात्पर्य सामान्य वक्र में होने वाले अपसरण से है जो किसी जनसंख्या के माध्य और मध्यिका में होने वाले अन्तर से उत्पन्न होता है। सामान्य वक्र में माध्य, मध्यिता तथा बहुलांक वक्र की आधार रेखा के मध्य एक ही बिन्दु पर पड़ते हैं तथा इन तीनों का मान संख्यात्मक रूप से भी बराबर होता है। इसके फलस्वरूप सामान्य वक्र का चित्र काफी संतुलित दीख पड़ता है क्योंकि इसका दायां और बायां भाग समान ढाल वाला और एक दूसरे के बराबर होता है। परन्तु जब वितरण सामान्य न होकर विषम होता है तो माध्य तथा मध्यिका एक ही बिन्दु पर न पड़कर अलग–अलग पड़ते हैं और प्राप्तांकों का केन्द्रीकरण वितरण के बायीं या दायीं ओर पर हो जाता है। सामान्य वक्र में माध्य और मध्यिका दोनों बराबर होते है, इसलिए विषमता शून्य होती है, परन्तु विषम वितरण में माध्य और मध्यिका में अन्तर होता है। यह अन्तर जितना ज्यादा होता है, विषमता उतनी अधिक होती है।

तो स्पष्ट है कि सामान्य वक्र में विषमता तभी उत्पन्न होती है जब आवृति वितरण में माध्य और मध्यिका के मानों का अन्तर बढ़ जाता है तथा इस कारण प्राप्तांकों का केन्द्रीकरण कभी वक्र के बायीं ओर तथा कभी वक्र के दायीं ओर हो जाता है। इसी कारण विषमता के दो प्रकार बताये गये हैं–

(i) ऋणात्मक विषमता तथा

(ii) धनात्मक विषमता

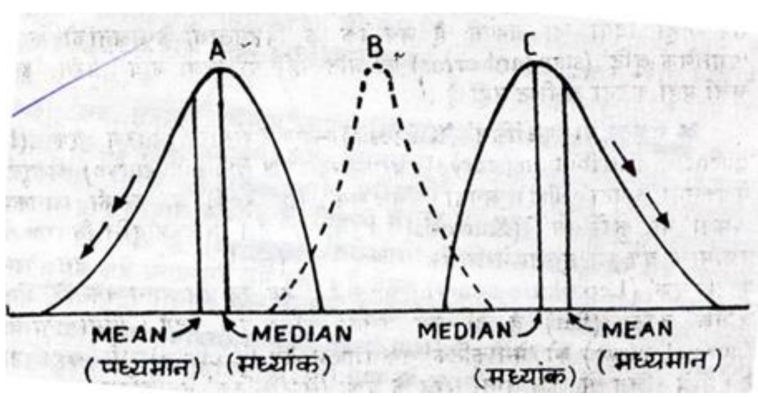

5.8.1.1 ऋणात्मक विषमता–

ऋणात्मक विषमता उसे कहते हें जब वितरण में अधिक प्राप्तांक 'स्केल' की दाई ओर अर्थात् ऊपरी छोर की ओर जमा रहते हैं और धीरे–धीरे बाई ओर यानी निचली छोर की ओर फैलते हैं। इस तरह के वितरण में मध्यमान, मध्यांक की बाई ओर होता है, अर्थात् यहाँ मध्यांक मध्यमान से बड़ा होता है।

5.8.1.2 घनात्मक विषमता–

घनात्मक विषमता में ऋणात्मक विषमता के ठीक विपरित, अधिक प्राप्तांक 'स्केल' की बाई ओर, अर्थात् नीचे की ओर जमा रहते हैं और धीरे–धीरे दाई अर्थात् ऊपरी छोर की ओर फैलते हैं।

इस प्रकार के वितरण में मध्यमान, मध्यांक की दाई ओर होता है, अर्थात् यहाँ मध्यांक, मध्यमान से छोटा होगा।

'विषमता' को इन दो 'सूत्रों' द्वारा ज्ञात किया जा सकता है–

(क) $Sk = \frac{3(\text{माध्य} - \text{मध्यिका})}{\sigma}$

यहाँ – Sk = विषमता, σ = मानक विचलन।

(ख) $Sk = \frac{(P_{99} + P_{10})}{2} - P_{50}$

जहां, SK = विषमता

P_{90} = प्रतिशतता 90

P_{10} = प्रतिशतता 10

P_{50} = प्रतिशतता 50 या मध्यिका

सूत्र 'क' का प्रयोग आवृत्ति वितरण से विषमता निकालने में तथा सूत्र 'ख' का प्रयोग प्रतिशत के आधार पर विषमता को निकालने में किया जाता है।

यदि $Sk = 0$ है तो इसका अर्थ हुआ कि वितरण 'प्रसामान्य' है। एक वितरण में कितनी विषमता होनी चाहिए जिससे कि इसे सार्थक रूप से विषम कहा जा सके, इसका उत्तर तब तक नहीं दिया जा सकता जब तक कि 'विषमताओं के सूचनांकों' के लिए 'मानक त्रुटि' को ज्ञात नहीं कर लिया जाये।

5.8.2 ककुदता या 'कुर्टोसिस'–

एक 'आवृत्ति वितरण वक्र' प्रसामान्य वक्र की तुलना में कितना 'चपटा' अथवा 'शिखरीय' है, इसकी जानकारी ककुदता या कुर्टोसिस' से मिलती है। यदि आवृत्ति वितरण वक्र प्रसामान्य वक्र की तुलना में अधिक शिखरीय है तो उसे लेप्टोकुर्टिक वक्र कहते हैं। जब यह प्रसामान्य वक्र की अपेक्षा अधिक चपटा है तो उसे 'प्लेटी कुर्टिक वक्र' कहेंगे। 'प्रसामान्य वक्र' को 'मेसोकुर्टिक' वक्र भी कहा जाता है। नीचे चित्र में इन तीनों तरह के वक्रों (लेप्टोकुर्टिक– मेसोकुर्टिक तथा प्लेटीकुर्टिक) को दर्शाया गया है।

'लेप्टोकुर्टिक' वक्र – बिंदु रेखा से,

सामान्य वक्र या 'मेसोकुर्टिक वक्र' सीधी रेखा से तथा

लेप्टोकुर्टिक' वक्र – टूटी रेखा से।

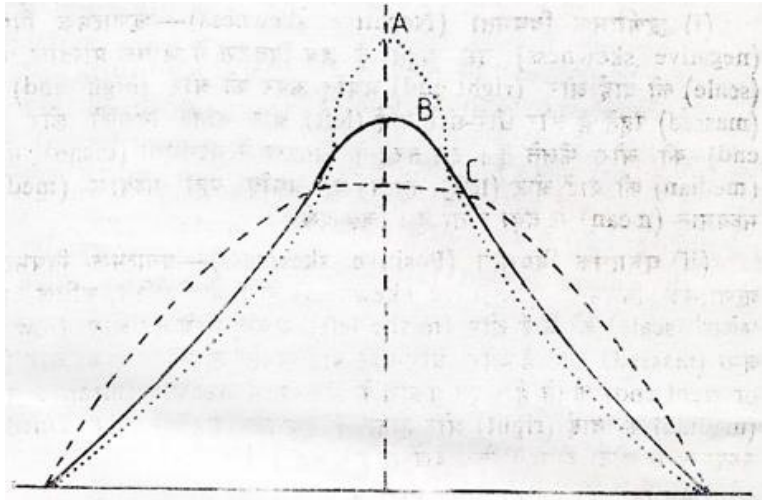

'ककुदता या 'कुर्टोसिस' को नीचे दिये गये 'सूत्र' द्वारा निकाला जा सकता है।

$$Ku = \frac{Q}{(P_{90} + P_{10})}$$ (प्रतिशत के आधार पर वक्रता को निकालना।)

जहां, Ku = ककुदता

Q = चतुर्थक विचलन

P_{90} = प्रतिशतता 90

P_{100} = प्रतिशतता 10

प्रसामान्य वक्र में Ku = .263 होता है।

$$Ku = \frac{.6745}{[1.28-(-1.28)]} = .263$$

टेबुल से ज्ञात होता है कि PE (Q) = .6745σऔर P_{10}= - 1.28σहै। अतः यदि ककुदता .263 से अधिक है तो वितरण को प्लेटीकुर्टिक कहा जायेगा और कम है तो लेप्टोकुर्टिक।

5.9 सामान्य संभाव्यता वक्र के उपयोग–

यदि किसी गुण या विशेषता की माप की जाय और प्राप्त प्रदत्त का स्वरूप सामान्य या लगभग सामान्य हो तो ऐसी स्थिति में सामान्य वक्र के आधार पर किसी जनसंख्या के सम्बन्ध में बहुत–सी जानकारी प्राप्त की जा सकती है। इसके लिए सामान्य वक्र के विभिन्न उपयोगों की जानकारी आवश्यक है। आइये, यहाँ हम लोग सामान्य वक्र के कुछ आवश्यक उपयोगों या अनुप्रयोगों पर विचार करें।

5.9.1 अनुप्रयोग–1

सामान्य वक्र के आधार पर किसी सामान्य वितरण की दी हुई सीमाओं के अन्तर्गत आने वाले केसेज (प्राप्तांकों) का प्रतिशत ज्ञात करना।

यदि किसी सामान्य वितरण में प्राप्तांकों की सीमा मालूम है तो उस सीमा के भीतर आने वाले केसेज का प्रतिशत मालूम किया जा सकता है। उदाहरण स्वरूप, मान लीजिए कि एक सामान्य वितरण का माध्य 12 तथा मानक विचलन 4 है। अब यदि इस वितरण के प्राप्तांक 8 और 16

के बीच आने वाले केसेज (प्राप्तांकों) का प्रतिशत निकालना हो तो इसे आसानी से निम्नांकित तरीके से निकाला जा सकता है–

हम जानते हैं कि –

$Z = \frac{X - M}{\sigma}$ जहाँ, X = प्राप्तांक

M = माध्य

σ = मानक विचलन तथा

Z = जेड प्राप्तांक

यहाँ,

M = 12 तथा σ = 4 है। अब हम पहले प्राप्तांक 8 के लिए फिर प्राप्तांक 16 के लिए z का मान निकालेंगे।

प्राप्तांक 8 के लिए Z :–

$$Z = \frac{8-12}{4} = \frac{-4}{4} = -1.00$$

माध्य से –1σ के बीच कुल 34.13% केसेज आयेंगे (टेबुल–2) इसी प्रकार, प्राप्तांक 16 के लिए Z :-

$$Z = \frac{16-12}{4} = \frac{4}{4} = 1.00$$

माध्य से +1σ के बीच 34.13% केसेज आयेंगे (टेबुल–.2)

यानी, प्राप्तांक 8 और 16 के बीच आने वाले केसेज (प्राप्तांकों) का प्रतिशत होगा (34.13+34.13) = 68.26.

दूसरे शब्दों में, हम कह सकते हैं कि इस वितरण में किसी प्राप्तांक के 8 और 16 के बीच आने की संभावना 100 में लगभग 68 बार है।

इसी तरीके से किसी दिए गए प्राप्तांक के ऊपर या किसी दिए गए प्राप्तांक के नीचे आने वाले केसेज का प्रतिशत भी ज्ञात किया जा सकता है।

5.9.2 अनुप्रयोग–2

किसी सामान्य वितरण में दिये गए प्रतिशत की प्राप्तांक सीमाएं निर्धारित करना

यदि वितरण सामान्य हो तथा हमें यह ज्ञात करना हो किसी दिए हुए प्रतिशत केसेज के ऊपर और नीचे के प्राप्तांक क्या हैं तो इसका पता हम सामान्य वक्र के आधार पर लगा सकते हैं। उदाहरण स्वरूप, मान लीजिए कि किसी सामान्य वक्र का माध्य 16 और मानक विचलन 4 है तो मध्य के 75 प्रतिशत की सीमाएं क्या होंगी?

यहाँ बीच का 75 प्रतिशत केसेज दिया हुआ है। इसका मतलब यह हुआ कि माध्य से 37.5 प्रतिशत ऊपर यानि, धनात्मक दिशा में तथा शेष 37.5 प्रतिशत नीचे यानि ऋणात्मक दिशा में इसका फैलाव है।

अब 37.50 प्रतिशत केसेज माध्य तथा 1.15σ के बीच पड़ता है तथा माध्य से नीचे भी माध्य और −1.15σ के बीच शेष 37.5 प्रतिशत केसेज पड़ता है (टेबुल 2)। इस तरह, यदि इस फैलाव की ऊपरी सीमा X हो तो,

$$Z = \frac{X - M}{\sigma}$$

या, $1.15 = \frac{X - M}{\sigma}$

या, $x = 1.15\sigma + M = 1.15 \times 4 + 16 = 4.60 + 16 = 20.60$

पुनः,

यदि निचली सीमा X' हो तो

$$-1.15 = \frac{X' - 16}{4}$$

$$X' = 16 – 4.60 = 11.40$$

अतः दिए हुए वितरण में 75 प्रतिशत केसेज 20.60 तथा 11.40 के बीच पड़ता है।

उदारहण – 2 किसी वितरण की मध्यिका 150 तथा संभाव्य त्रुटि 17 है। यदि वितरण सामान्य हो तो ऊपरी 20 प्रतिशत तथा निचली 10 प्रतिशत की सीमाएं क्या होगी।

हल : $\sigma = 1.4826\ PE$

$= 1.4826 \times 17 = 25.2042 = 25.20$

चूंकि मध्यिका के ऊपर 50 प्रतिशत कैसेज/प्राप्तांक रहते हैं, अतः अधिकतम 20 प्रतिशत के निचली सीमाऔर मध्यिका के बीच 30 प्रतिशत कैसेज पड़ेंगे। मध्यिका से इस 30 प्रतिशत का फैलाव σ –दूरी में टेबुल–2 के अनुसार .84 होगा।

अब, $Z = \frac{X - M}{\sigma} or, 0.84 = \frac{X - M}{\sigma}$

$$X\text{-}M = .84\sigma = .84 \times 25.20 = 21.17$$

$$X = 21.17 + 150 = 171.17$$

अतः उच्चतम 20 प्रतिशतका निचली सीमा 171.17 होगी तथा ऊपरी सीमा वितरण का अधिकतम प्राप्तांक होगा, चाहे उसका मान जो हो।

पुनः चूंकि मध्यिका के नीचे भी 50 प्रतिशत कैसेज रहता है। अतः निम्नतम 10 प्रतिशत के ऊपरी सीमा तथा मध्यिका के बीच 40 प्रतिशत कैसेज होंगे। इस 40 प्रतिशत का फैलाव σ – दूरी में टेबुल–2 के अनुसार -1.28 होगा।

अब, $-1.28 = \frac{X' - M}{\sigma}$

$X' - M = - 1.28 \times 25.20 = -32.26$

$X' = 150 - 32.26$

$= 117.74$

इस तरह वितरण के निम्नतम 10% का ऊपरी सीमा 117.94 होगा तथा निचली सीमा वितरण का न्यूनतम प्राप्तांक होगा। चाहे उसका मान कुछ भी हो।

5.9.3 अनुप्रयोग –3

दो सामान्य वितरणों की आच्छांदन के सन्दर्भ में तुलना करना।

सामान्य वितरण के आधार पर दो विभिन्न वितरणों, जो आपस में आच्छादित होते हैं, की तुलना की जा सकती है। उदाहरणस्वरूप, मान लीजिए, छात्र तथा छात्राओं के समूह पर एक बुद्धि परीक्षण प्रशासित किया गया। छा़त्रों का मध्यमान 105 तथा प्रमाणिक विचलन 10 प्राप्त हुआ, जबकि छात्राओं का मध्यमान 101 तथा प्रामाणिक विचलन 12 प्राप्त हुआ। छात्र तथा छात्राओं के परिणामों को सामान्य वितरण के रूप में मानते हुए बताइये–

1. छात्रों के मध्यमान से कितने प्रतिशत छात्राओं के बुद्धि–लब्धि प्राप्तांक अधिक हैं?
2. छात्राओं के मध्यमान से कितने प्रतिशत छात्रों के बुद्धि–लब्धि प्राप्तांक कम प्राप्त हुए हैं?

सामान्य वितरण के सूत्र का प्रयोग कर इस समस्या का समाधान निम्नवत् किया जा सकता है।

सर्वप्रथम छात्राओं के मध्यमान तथा छात्रों के मध्यमान के मध्य स्थित प्रतिशत ज्ञात करेंगे। प्राप्त प्रतिशत के छात्राओं के मध्यमान बिन्दु के दांयी ओर के कुल 50 प्रतिशत में से घटाकर उन छात्राओं के प्रतिशत को ज्ञात कर सकते हैं जिनकी बुद्धि–लब्धि छात्रों के मध्यमान से अधिक है।

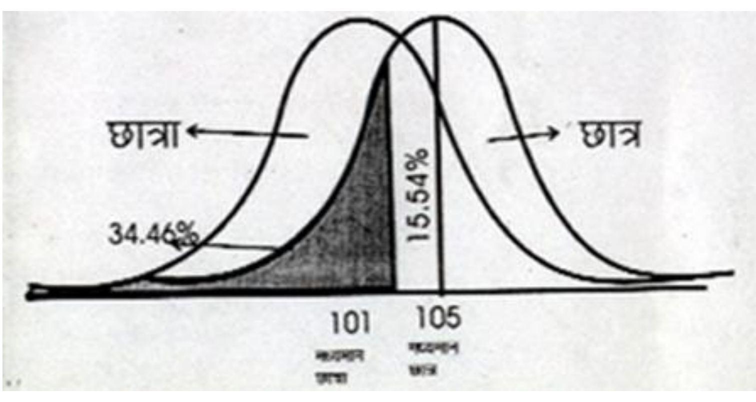

छात्राओं के मध्यमान से छात्रों के मध्यमान तक प्रतिशत ज्ञात करने के लिये जेड Z मूल्य ज्ञात करेंगे–

$$Z = \frac{X - M}{\sigma} = \frac{105 - 101}{12} = \frac{4}{12} = .33$$

0.33 Z मूल्य के आधार पर टेबुल–2 का निरीक्षण करने से स्पष्ट होता है कि छात्राओं के मध्यमान से छात्रों के मध्यमान तक 12.93 प्रतिशत छात्रायें स्थित हैं, अतः छात्रों के मध्यमान से अधिक कुल (50–12.93) 37.07 प्रतिशत छात्रायें स्थित हैं।

इसी प्रकार, छात्रों के मध्यमान से छात्राओं के मध्यमान के मध्य स्थित छात्रों का प्रतिशत ज्ञात करेंगे। बांयी ओर के छात्रों के कुल 50 प्रतिशत में से प्राप्त प्रतिशत को घटाकर उन छात्रों के प्रतिशत को ज्ञात कर सकते हैं, जिनकी बुद्धि–लब्धि छात्राओं के मध्यमान से कम है।

छात्रों के मध्यमान से छात्राओं के मध्यमान तक बुद्धि–लब्धि प्राप्तांक रखने वाले छात्रों का प्रतिशत होगा–

$$Z = \frac{X\text{-}M}{\sigma} = \frac{101-105}{10} = \frac{-4}{10} = .40$$

–0.40 Z मूल्य के आधार पर टेबुल–2 का निरीक्षण करने से स्पष्ट होता है, कि छात्रों के मध्यमान तथा छात्राओं के मध्यमान के मध्य 15.54 प्रतिशत छात्र स्थित हैं, अतः छात्राओं के मध्यमान से कम बुद्धि–लब्धि प्राप्तांक रखने वाले छात्र (50–15.54) 34.46 प्रतिशत हैं।

5.9.4 अनुप्रयोग 4

किसी सामान्य वितरण समूह को विभिन्न उपसमूहों में विभाजित करना।

चूँकि सामान्य वितरण का विस्तार -3σ से $+3\sigma$ तक कुल छः σ दूरियां रहता है, अतः इन छः भागों के आधार पर किसी सामान्य वितरण को जितने भागों में बांटना चाहें, बांट सकते हैं। उदाहरण स्वरूप मान लीजिए कि एक सामान्य वितरण समूह को पाँच उपसमूहों में विभक्त करना है तथा प्रत्येक उप समूह में स्थित प्रतिशत बताना है। यदि विद्यार्थियों की संख्या 500 है, प्रत्येक उपसमूह में कितने विद्यार्थी स्थित होंगे?

सामान्य वितरण वक्र का विस्तार –3 से +3 मानक विचलन के मध्य प्रमुख रूप से होते हैं, अतः सामान्य वितरण वक्र का विस्तार 6 Z मूल्य (सिग्मा दूरी) को माना जाता है। जितने उपसमहों में सामान्य वितरण वक्र को विभाजित करना है, उस संख्या से 6 में भाग दिया जाता है ताकि प्रत्येक उपसमूह का समान विस्तार ज्ञात हो जाये। यदि हमें पाँच उपसमूहों में सामान्य वितरण को विभक्त करना है, तब प्रत्येक उप समूह का विस्तार 6/5 यानी, 1.20 Z मूल्य का होगा। प्रत्येक उपसमूह का विस्तार 1.20 Z मूल्य निर्धारित करते हुए पाँच उपसमूह में सामान्य वितरण वक्र को विभक्त करते हैं। मान लीजिए ये उपसमूह क्रमशः A, B, C, D तथा E है।

उपसमूह A का विस्तार–3 से–1.80 तक यानी, (50–46.41 प्रतिशत) यानी, 3.59 प्रतिशत
उपसमूह B का विस्तार–1.80 से –0.60 तक यानी, (46.41–22.57) यानी, 23.84 प्रतिशत
उपसमूह C का विस्तार–0.60 से +0.60 तक यानी, (22.57+22.57) यानी, 45.14 प्रतिशत
उपसमूह D का विस्तार+0.60 से +1.80 तक यानी, (46.41–22.57) यानी, 23.84 प्रतिशत
उपसमूह E का विस्तार +1.80 से + 3.00 तक यानी, (50–46.41) यानी, 3.59 प्रतिशत

कुल योग 100 प्रतिशत

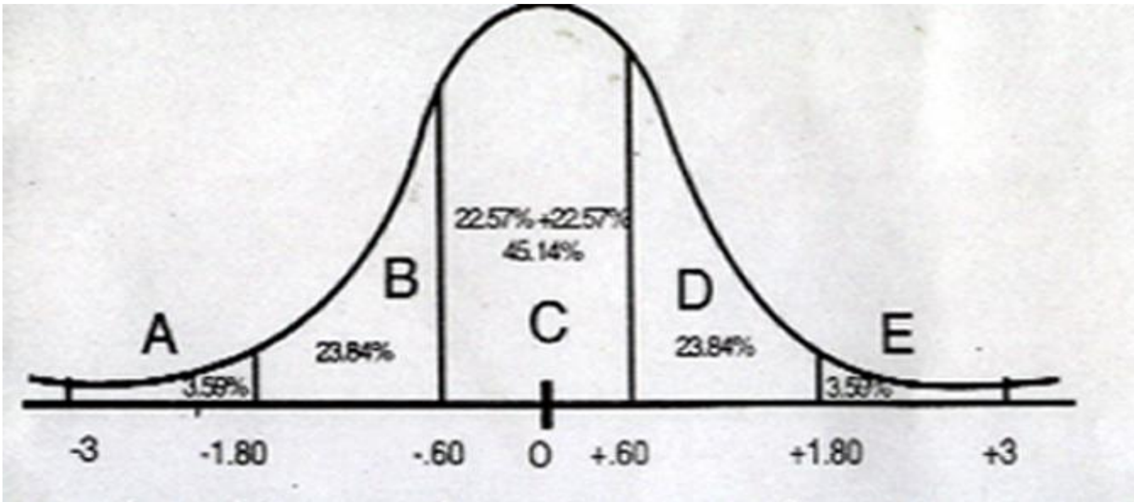

प्रथम उपसमूह का विस्तार निर्धारित करने के लिए बांयी ओर –3 Z मूल्य से 1.20 Z मूल्य को घटाया गया (3–1.20) जो कि –1.80 प्राप्त हुआ। अतः प्रथम उपसमूह A का विस्तार –3 से –1.80 निर्धारित होता है। इसी प्रकार उपसमूह B का विस्तार –1.80 से –0.60 (1.80–1.20) तक निर्धारित किया गया। उपसमूह C का विस्तार –0.60 से +0.60 तक निर्धारित किया गया। उपसमूह D का विस्तार + 0.60 से +1.80 (0.60 +1.20) तक निर्धारित किया गया। उपसमूह E का विस्तार +1.80 से +3 तक निर्धारित हुआ। इस प्रकार प्रत्येक उपसमूह का विस्तार समान रूप से 1.20 मूल्य निर्धारित है।

प्रथम समूह A का प्रतिशत ज्ञात करने के लिए सर्वप्रथम –1.80 Z मूल्य का प्रतिशत टेबुल–2 A से ज्ञात किया गया जो कि 46.41 प्राप्त हुआ। इस प्रकार मध्यमान बिन्दु से बांयी ओर के Z मूल्य –1.80 का प्रतिशत 46.41 हैं, जबकि मध्यमान बिन्दु से बांयी ओर का कुल प्रतिशत 50 है अतः –3 से –1.80 का प्रतिशत 50–46.41 = 3.59 प्रतिशत हुआ। इसी प्रकार उपसमूह B का प्रतिशत ज्ञात करते हैं। Z मूल्य – 0.60 का प्रतिशत टेबुल–2 A द्वारा 22.57 प्रतिशत ज्ञात हुआ, अतः उपसमूह B का प्रतिशत ज्ञात करने के लिए Z मूल्य –1.80 के प्रतिशत 46.41 में से –0.60 Z मूल्य के प्रतिशत 22.57 को घटाकर (46.41–22.57) 23.84 प्रतिशत प्राप्त किया। उपसमूह C का प्रतिशत –0.60 Z मूल्य के प्रतिशत 22.57 तथा +0.60 Z मूल्य के प्रतिशत 22.57 का योग (22.57+22.57) कर 45.14 प्रतिशत निर्धारित किया गया। उपसमूह D का प्रतिशत उपसमूह B के समान ही (46.41–22.57) 23.84 प्रतिशत प्राप्त किया। इसी प्रकार उपसमूह E का प्रतिशत (50–46.41) 3.59 निर्धारित किया गया। यदि सभी उपसमूहों के निर्धारित प्रतिशत का योग किया जाये तब यह योग लगभग 100 प्राप्त होता है।

प्रत्येक उपसमूह का प्रतिशत निर्धारित होने के पश्चात् निम्नलिखित सूत्र द्वारा प्रत्येक उपसमूह में स्थित विद्यार्थियों की संख्या भी ज्ञात कर सकते हैं –

$$\text{विद्यार्थियों की संख्या} = \frac{\text{उपसमूह का प्रतिशत} \times \text{कुल विद्यार्थियों की संख्या}}{100}$$

सूत्र के आधार पर –

प्रथम उपसमूह A के विद्यार्थियों की संख्या $= \frac{3.59 \times 500}{100} = 17.95 = 18$

द्वितीय उपसमूह B के विद्यार्थियों की संख्या $= \frac{23.84 \times 500}{100} = 119.20 = 119$

तृतीय उपसमूह C के विद्यार्थियों की संख्या $= \frac{45.14 \times 500}{100} = 225.70 = 226$

चतुर्थ उपसमूह D के विद्यार्थियों की संख्या $= \frac{23.84 \times 500}{100} = 119.20 = 119$

पंचम उपसमूह E के विद्यार्थियों की संख्या $= \frac{3.95 \times 500}{100} = 17.95 = 18$

इसी प्रकार किसी सामान्य वितरण वक्र को विभिन्न उपसमूहों जैसे 3, 4 व 6 उपसमूहों में विभाजित कर प्रत्येक उपसमूह में स्थित प्रतिशत निर्धारित कर सकते हैं। जैसे निम्नलिखित चित्र द्वारा स्पष्ट है।

तीन उपसमूहों में विभक्त करना

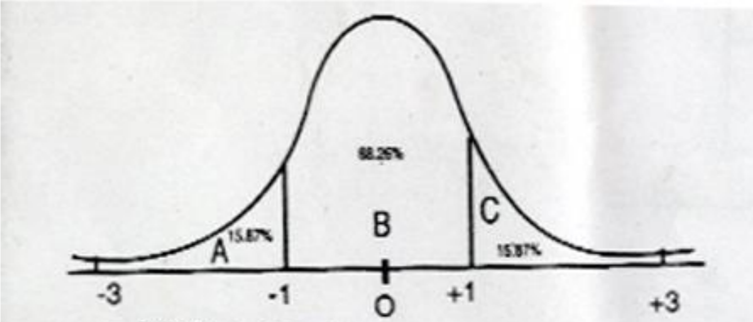

चार उपसमूहों में विभक्त करना

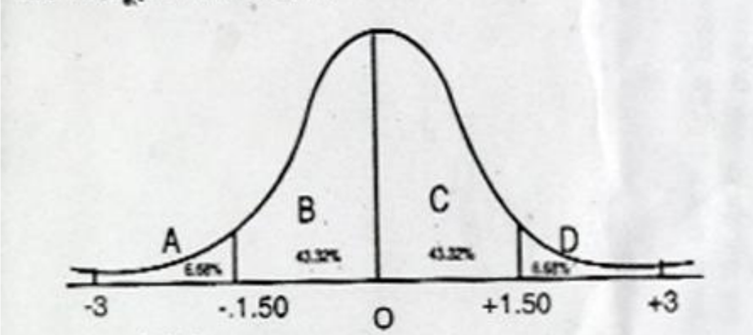

छह उपसमूहों में विभक्त करना

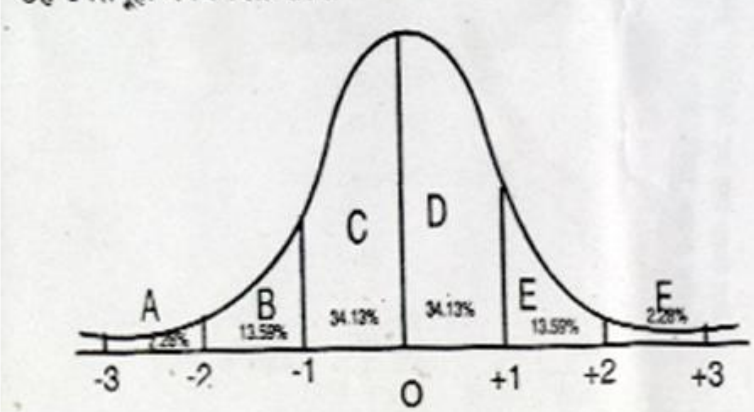

5.9.5 अनुप्रयोग 5

मनोवैज्ञानिक परीक्षण के पदों की सापेक्षिक कठिनाई स्तर का निर्धारण करना।

मान लीजिए कि स्नातक स्तर के प्रथम वर्ष के विद्यार्थियों पर एक बुद्धि परीक्षण प्रशासित किया गया। परीक्षण के प्रथम पद को 50 प्रतिशत विद्यार्थियों द्वारा द्वितीय पद को 30 प्रतिशत विद्यार्थियों द्वारा तथा तृतीय पद को 20 प्रतिशत विद्यार्थियों द्वारा हल किया गया। सामान्य वितरण मानते हुए प्रत्येक पद का कठिनता स्तर ज्ञात कीजिये। चतुर्थ पद कितने प्रतिशत विद्यार्थी हल कर पायेंगे, जबकि चतुर्थ पद तृतीय पद से उतना ही कठिन है, जितना कि द्वितीय पद प्रथम पद की अपेक्षा कठिन है।

हल :

प्रथम पद को 50 प्रतिशत विद्यार्थी हल कर पाते हैं, जबकि 50 प्रतिशत हल नहीं कर पाते हैं, अतः इस प्रकार के पद का कठिनता स्तर (50—50) शून्य माना जाता है।

द्वितीय पद को 30 प्रतिशत विद्यार्थी हल कर पाते हैं जबकि मध्यमान से शेष 20 प्रतिशत (50–30) विद्यार्थी, हल नहीं कर पाते हैं। अतः 20 प्रतिशत का Z मूल्य 0.52 (टेबुल–2 के आधार पर) हुआ जो कि द्वितीय पद का कठिनता स्तर है।

तृतीय पद को 20 प्रतिशत विद्यार्थी हल कर पाते हैं, यानी कि मध्यमान से शेष 30 प्रतिशत (50–20) विद्यार्थी हल नहीं कर पाते हैं। अतः 30 प्रतिशत का Z मूल्य 0.84 (टेबुल–2 के आधार पर) हुआ जो कि तृतीय पद का कठिनता स्तर है।

चतुर्थ पद तृतीय पद से उतना ही कठिन है जितना कि द्वितीय पद प्रथम पद की अपेक्षा कठिन है। चूंकि द्वितीय पद प्रथम पद की अपेक्षा 0.52 अधिक कठिन है, अतः, चतुर्थ पद का कठिनता स्तर तृतीय पद के कठिनता स्तर 0.84 से 0.52 अधिक कठिन है, इस प्रकार चतुर्थ पद का कठिनता स्तर (0.84+0.52) 1.36 Z मूल्य के रूप में प्राप्त होता है। Z मूल्य 1.36 के आधार पर टेबुल–2 द्वारा निरीक्षण करने से स्पष्ट है कि चतुर्थ पद को केवल 8.69 प्रतिशत विद्यार्थी ही हल कर पाते हैं। (50–41.31 = 8.69 प्रतिशत)। निम्न ग्राफ देखें –

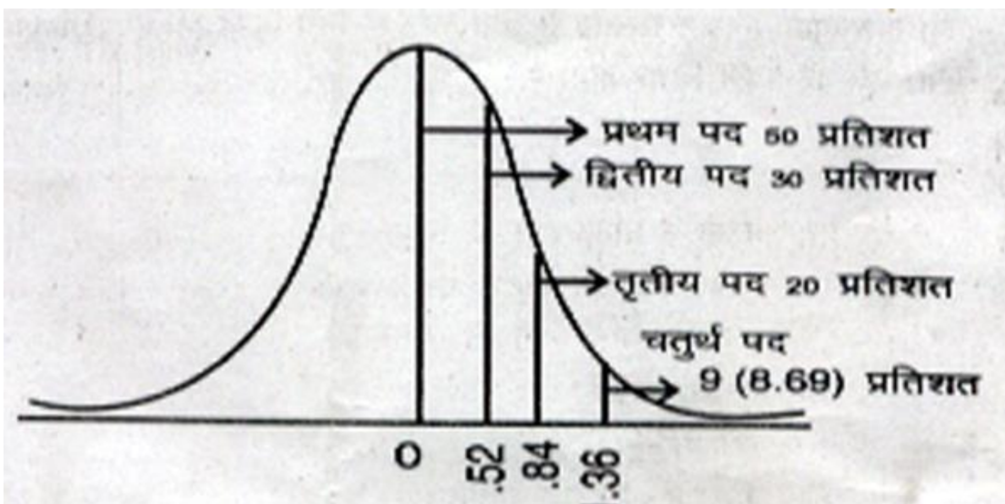

परिणाम को नीचे की तालिका से समझा जा सकता है –

पद संख्या	हल किये गये विद्यार्थियों का प्रतिशत	कनिठता स्तर	अन्तर
प्रथम पद	50	0	
द्वितीय पद	30	.52	0.52
तृतीय पद	20	.84	
चतुर्थ पद	9 (8.69%)	1.36	0.52

अभ्यास प्रश्न

1. **सामान्य संभाव्यता वक्र का जन्मदाता किसे कहा जाता हैं?**
2. **यदि किसी सामान्य वितरण का माध्य 25 तथा मानक विचलन 5 है तो प्राप्तांक 30 का जेड–मूल्य कितना होगा?**
3. **यदि किसी सामान्य वितरण का माध्य 20 और मानक विचलन 6 है तो प्राप्तांक 14 सामान्य वक्र में माध्य के बायें होगा या दायें?**
4. **किसी सामान्य वक्र में $M \pm 1\sigma$ के बीच कुल कितने प्रतिशत केसेज आते हैं?**

2.10 सारांश

- चर सामान्य वक्र सामान्य रूप से वितरित प्रदत्त के आधार पर तैयार होता है। यह घंटाकार वक्र होता है जिसकी ऊँचाई बीच में अधिकतम होती है तथा दोनों किनारों की ओर इसकी ऊँचाई घटती जाती है। यह वक्र आधार रेखा को कभी स्पर्श नहीं करती।
- सामान्य वक्र के दोनों ही ओर मध्य–बिन्दु से समान दूरी पर या एक दी हुई सीमा के भीतर पड़ने वाले केसेज का प्रतिशत समान होता है।
- सामान्य वक्र की आधार रेखा को σ–इकाई में मापते हैं। वक्र की आधार रेखा पर मध्य–बिन्दु से दायें तथा बायें तीन–तीन σ–इकाइयों में वक्र बंटा होता है। यानी आधार रेखा कुछ छः भागों में बंटी होती है। मध्य–बिन्दु से बायें भाग की ओर क्रमशः -1σ, -2σ तथा -3σ का फैलाव होता है तथा इसी तरह, मध्य–बिन्दु से दायें भाग की ओर क्रमशः $+1\sigma$, $+2\sigma$ तथा $+3\sigma$ का फैलाव होता है।
- माध्य से σ–दूरी को जेड– प्राप्तांक भी कहते हैं। जेड–प्राप्तांक ज्ञात करने का सूत्र होता है–

$$Z = \frac{X - M}{\sigma}$$

- सामान्य संभाव्यता वक्र से दो तरह का विचलन पाया जाता है जिसे विषमता एवं ककुदता के रूप में जानते हैं। विषमता से तात्पर्य सामान्य वक्र में होने वाले अपसरण से है जो किसी जनसंख्या के माध्य और मध्यिका में होने वाले अन्तर से उत्पन्न होता है। विषमता दो तरह की होती है– ऋणात्मक विषमता तथा धनात्मक विषमता। ककुदता से तात्पर्य किसी वितरण का सामान्य वितरण की तुलना में अधिक 'चपटा' या 'शिखरीय' होना है। अधिक चपटा वितरण का वक्र प्लेटीकुर्टिक तथा अधिक शिखरीय वितरण का वक्र लेप्टोकुर्टिक कहलाता है।

  सामान्य संभाव्यता वक्र के निम्नलिखित महत्वपूर्ण अनुप्रयोग हैं–

  (क) इसके आधार पर किसी सामान्य वितरण की दी हुई सीमाओं के अन्तर्गत आने वाले प्राप्तांकों का प्रतिशत ज्ञात किया जा सकता है।

  (ख) किसी सामान्य वितरण में दिए गए प्रतिशत की प्राप्तांक सीमाएं निर्धारित की जा सकती हैं।

  (ग) दो सामान्य वितरणों की आच्छादन के संदर्भ में तुलना की जा सकती है।

(घ) किसी सामान्य वितरण समूह को विभिन्न उपसमूहों में विभाजित किया जा सकता है।

(च) मनोवैज्ञानिक परीक्षण के पदों की सापेक्षिक कठिनाई स्तर को निर्धारित किया जा सकता है।

5.11 शब्दावली

सामान्य वक्र : किसी सामान्य वितरण के प्राप्तांकों से निर्मित वैसा वक्र जो देखने में घंटाकार होता है तथा जिसकी ऊँचाई मध्य में अधिकतम होती है एवं दोनों किनारों की ओर क्रमशः घटती जाती है परन्तु आधार रेखा को कभी नहीं छूती।

विषमता : जब किसी वितरण का माध्य और मध्यिका समान न होकर अलग–अलग मूल्यों का होता है तो इसके अन्तर से सामान्य वक्र में उत्पन्न होने वाला अपसरण विषमता कहलाता है।

ककुदता : ककुदता से तात्पर्य किसी वितरण का सामान्य वक्र की तुलना में अधिक चपटा या शिखरीय होने से है।

5.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.	ए0डी0 मुवरे	2.	1.00
3.	बायें	4.	68.26 प्रतिशत

5.13 संदर्भ – ग्रन्थ सूची

1. श्री वास्तव, डी.एन. सांख्यिकी एवं मापन, विनोद प्रस्तक मंदिर, आगरा।
2. भाटिया, टी. आधुनिक मनोवैज्ञानिक सांख्यिकी, लावण्य प्रकाशन, उरई।
3. सिन्हा एवं मिश्रा, मनोविज्ञान में प्रयोग परीक्षण एवं सांख्यिकी, भारती भवन, पटना
4. गैरेट एवं वुडवर्थ, स्टैटिस्टिक्स इन साइकोलॉजी एण्ड एजुकेशन, वैकिल्स, फिफर एण्ड साइमन्स लि. बॉम्बे।
5. कपिल, एच.के. सांख्यिकीय विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा।

5.14 निबन्धात्मक प्रश्न

1. सामान्य वक्र से आप क्या समझते हैं? इसकी विशेषताओं का उल्लेख करें।
2. सामान्य वितरण से होने वाले विचलनों से आप क्या समझते हैं? उदाहरण के साथ विषमता एवं ककुदता को समझायें।
3. एक सामान्य वितरण का माध्य 50 तथा मानक विचलन 10 है तो बतायें कि
   (क) माध्य तथा प्राप्तांक 65 के बीच कितने प्रतिशत केसेज पड़ेंगे?
   (ख) प्राप्तांक 45 के नीचे आने वाले केसेज का प्रतिशत क्या होगा?

टेबुल–2

प्रसामान्य वक्र के क्षेत्रफल की सारणी

(Table of Areas Under the Normal Curve)

[प्रसामान्य वितरण क्षेत्र के अन्तर्गत मध्यमान (mean) से σ-इकाई (σ-unit) दूरी (distances) के अन्दर आने वाली संख्याओं या 'केसेज' (cases) का सूचनांक या विवरण टेबुल-F (Table-F) से ज्ञात हो सकता है। 'प्रसामान्य वक्र' (normal curve) के कुल क्षेत्र (total area) के अन्तर्गत 10,000 'केसेज' पड़ते हैं, मान लिया गया है। यह मानते हुए, मध्यमान से विभिन्न σ-इकाई (σ-unit) दूरी निकाल कर, दिये हुए 'प्राप्तांक (scores) अथवा, 'प्रतिशत' (percentage) से संख्या या 'केसेज' निश्चित किये जा सकते हैं।]

उदाहरण (Example)—मध्यमान (M) और 1·25σ $\left(\frac{x}{\sigma} = 1·25\right)$ बिन्दु के बीच सम्पूर्ण वक्र (curve) का 39·44% क्षेत्रफल (area) आता है।

$\frac{x}{\sigma}$	·00	·01	·02	·03	·04	·05	·06	·07	·08	·09
0·0	0000	0040	0080	0120	0160	0199	0239	0279	0319	0359
0·1	0398	0438	0478	0517	0557	0596	0636	0675	0714	0753
0·2	0793	0822	0871	0910	0948	0987	1026	1064	1103	1141
0·3	1179	1217	1255	1293	1331	1368	1406	1443	1480	1517
0·4	1554	1591	1628	1664	1700	1736	1772	1808	1844	1879
0·5	1915	1950	1985	2019	2054	2088	2123	2157	2190	2224
0·6	2257	2291	2324	2357	2389	2422	2454	2486	2517	2549
0·7	2580	2611	2642	2673	2704	2734	2764	2794	2823	2852
0·8	2881	2910	2939	2967	2995	3023	3051	3078	3106	3133

$\frac{x}{\sigma}$	·00	·01	·02	·03	·04	·05	·06	·07	·08	·09
0·9	3159	3186	3212	3238	3264	3290	3315	3340	3365	3389
1·0	3413	3438	3461	3485	3508	3531	4554	3577	3599	3621
1·1	3643	3665	3686	3708	3729	3749	3770	3790	3810	3830
1·2	3849	3869	3888	3907	3925	3944	3962	3980	3997	4015
1·3	4032	4049	4066	4082	4099	4115	4131	4147	4162	4177
1·4	4192	4207	4222	4236	4251	4265	4279	4292	4306	4319
1·5	4332	4345	4357	4370	4383	4394	4406	4418	4429	4441
1·6	4452	4463	4474	4484	4495	4505	4515	4525	4535	4545
1·7	4554	4564	4573	4582	4591	4599	4608	4616	4625	4633
1·8	4641	4649	4656	4664	4671	4678	4686	4693	4699	4706
1·9	4713	4719	4726	4732	4738	4744	4750	4756	4761	4767
2·0	4772	4778	4783	4788	4793	4798	4803	4808	4812	4817
2·1	4821	4826	4830	4834	4838	4842	4846	4850	4854	4857
2.2	4861	4864	4868	4871	4875	4878	4881	4884	4887	4890
2.3	4893	4896	4998	4901	4904	4906	4909	4911	4913	4916
2·4	4918	4920	4922	4925	4927	4929	4931	4932	4934	4936
2·5	4938	4940	4941	4943	4945	4946	4948	4949	4951	4952

$\frac{x}{\sigma}$	·00	·01	·02	·03	·04	·05	·06	·07	·08	·09
2·6	4953	4955	4956	4957	4959	4960	4961	4962	4963	4964
2·7	4965	4966	4967	4968	4969	4970	4971	4972	4973	4974
2·8	4974	4975	4976	4977	4977	4978	4979	4979	4980	4981
2·9	4981	4982	4982	4983	4984	4984	4985	4985	4986	4986
3·0	4886·5	4986·9	4987·4	4987·8	4988·2	4988·6	4288·9	4989·3	4989·7	4990·0
3·1	4990·3	4990·6	4991·0	4991·3	4991·6	4991·8	4992·1	4992.4	4992·6	4992·6
3·2	4993·129									
3·3	4995·166									
3·4	4996·631									
3·5	4997·674									
3·6	4998·409									
3·7	4998·922									
3·8	4999·277									
3·9	4999·519									
4·0	4999·683									
4·5	4999·966									
5·0	4999·997133									

इकाई–6 सह–सम्बन्ध : सह–सम्बन्ध का संप्रत्यय, पीयर्सन गुणन आघूर्ण सहसम्बन्ध,स्पीयरमैन कोटि–अन्तर सहसम्बन्ध

इकाई संरचना

6.1 प्रस्तावना
6.2 उद्देश्य
6.3 सहसम्बन्ध
6.3.1 गुणात्मक सहसम्बन्ध
6.3.1.1 रैखिक सहसम्बन्ध
6.3.1.2 वक्रीय सहसम्बन्ध
6.3.2 मात्रात्मक सहसम्बन्ध
6.3.2.1 धनात्मक सहसम्बन्ध
6.3.2.2 ऋणात्मक सहसम्बन्ध
6.3.2.3 शून्य सहसम्बन्ध
6.3.3 सहसम्बन्ध गुणांक
6.4 गुणन–आधूर्ण विधि
6.4.1 मूल विधि या वास्तविक माध्य विधि
6.4.2 मानित या कल्पित माध्य विधि
6.5 स्पीयरमैन की कोटि–अन्तर विधि
6.6 सहसम्बन्ध की गणना
6.6.1 वास्तविक माध्य विधि से पियर्सन सहसम्बन्ध (r) की गणना
6.6.2 कल्पित माध्य विधि से ‘r’ की गणना
6.6.3 कोटि अन्तर विधि से ‘P’ की गणना
6.7 सारांश
6.8 शब्दावली
6.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
6.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची
6.11 निबन्धात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना –

पूर्व की इकाइयों में आपने सांख्यिकीय आंकड़ों का वर्गीकरण, सारणीयन, केन्द्रीय प्रवृत्ति की माप, विचलनशीलता की माप, सामान्य वक्र की विशेषता एवं अनुप्रयोग आदि का अध्ययन किया और विभिन्न प्रकार के प्रदत्तों के स्वरूप से परिचित हुए।

प्रस्तुत इकाई में दो वितरणों, दो चरों या दो गुणों में पाये जाने वाले आपसी सम्बन्धों पर चर्चा की जायेगी और आप दो चरों या परीक्षणों पर के प्राप्तांकों के बीच सहसम्बन्ध गुणांक की गणना की विधियों का अध्ययन करेंगे।

इस इकाई के अध्ययन से आपको यह लाभ होगा कि आप चरों के बीच पाये जाने वाले सम्बन्धों को समझ सकेंगे तथा दो परीक्षणों पर के प्राप्तांकों के बीच सहसम्बन्ध गुणांक का सांख्यिकीय विधि से निर्धारण कर सकेंगे।

6.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो जायेंगे कि आप–

1. सहसम्बन्ध का अर्थ एवं उसकी विशेषताएं बतला सकें।
2. सहसम्बन्ध गुणांक की व्याख्या कर सकें।
3. गुणन–आघूर्ण विधि एवं कोटि–अन्तर विधि द्वारा सहसम्बन्ध गुणांक निर्धारण का सूत्र समझ सकें एवं
4. इन दोनों विधियों के सूत्रों का प्रयोग कर दिये गये वितरणों के बीच सहसम्बन्ध निकाल सकें।

6.3 सहसम्बन्ध–

मनोविज्ञान, शिक्षा एवं अन्य सामाजिक विज्ञानों के अन्तर्गत व्यक्ति के बहुत – सारे गुणों को माप कर विभिन्न सांख्यिकीय विधियों के सहारे विभिन्न प्रकार के निष्कर्षो पर पहुँचा जाता है। जब भी हम प्रयोज्यों के किसी दो या अधिक गुणों का मापन करते हैं तो हमारी उत्सुकता उन दोनों गुणों के बीच के आपसी सम्बन्धों को जानने की ओर भी होती है। वैसे मानव–व्यवहार एक जटिल प्रक्रिया है, अतः व्यवहार विज्ञान के क्षेत्र में कारण एवं परिणाम के सम्बन्धों को समझना अत्यन्त कठिन कार्य है तथा उसको प्रभावित करने वाले कारकों का ठीक–ठीक पता लगाना एक कठिन समस्या है। फिर भी, समाज विज्ञानिकों ने अपने सिद्धान्तों के निर्माण में वैज्ञानिक–पद्धति को अपनाकर कार्य–कारण सम्बन्ध को समझने के लिए विभिन्न सहसम्बन्ध विधियों का सहारा लिया है।

हमारे दैनिक जीवन में सह–सम्बन्ध शब्द बहुत ही प्रचलित है तथा इसका प्रयोग हम किसी–न–किसी रूप में अवश्य करते हैं। साधारणतः सह–सम्बन्ध से मतलब दो व्यक्तियों, घटनाओं या तथ्यों के बीच पाये जाने वाले साहचर्य से होता है, परन्तु सांख्यिकी में इसका अभिप्राय दो चरों या परीक्षणों के प्राप्तांकों में निहित सम्बन्धों से होता है। जब दो या दो से अधिक चरों या घटनाओं में साहचर्यात्मक सम्बन्ध पाया जाता है, तो ऐसे सम्बन्ध को सह–सम्बन्ध कहते हैं। दैनिक जीवन में भी सहसम्बन्ध की बात खूब सुनने को मिलता है, जैसे – जिसका गणित अच्छा है उसकी भौतिकी भी अच्छी होगी; जो संस्कृत में अच्छा है वह हिन्दी में भी अच्छा होगा आदि चरों के बीच पाये जाने वाले सहसम्बन्ध के ही तो उदाहरण है।

इस प्रकार, जब कभी व्यक्तियों और अन्य तथ्यों में किसी एक आयाम पर मध्यम श्रेणी, मध्यम श्रेणी से ऊपर तथा मध्यम श्रेणी से नीचे के स्तर के विशेष गुण होते हैं, और साथ–ही–साथ उसमें किसी एक–दूसरे आयाम पर क्रमशः मध्यम श्रेणी से ऊपर तथा मध्यम श्रेणी के नीचे के स्तर के विशेष गुणों के पाये जाने की प्रवृत्ति देखने में आती है–तब इस प्रकार के सम्बन्ध को सह–सम्बन्ध कहते हैं। ब्लौमर्स एवं लिन्डक्विस्ट (1958) ने सहसम्बन्ध को इसी रूप में परिभाषित किया है। उनके अनुसार, ''सहसम्बन्ध के द्वारा यह अध्ययन किया जाता है कि व्यक्ति या वस्तुएं एक आयाम या दिशा में औसत, औसत से अधिक या औसत से कम है तो दूसरी दिशा में क्या प्रवृति है अर्थात् औसत है, औसत से अधिक है या औसत से कम है।''

सह–सम्बन्ध मुख्यतः दो प्रकार के होते हैं– गुणात्मक तथा मात्रात्मक

6.3.1 गुणात्मक सहसम्बन्ध–

जब दो चरों या दो परीक्षणों पर के प्राप्तांकों में सह–सम्बन्ध किसी खास गुण के द्वारा अभिव्यक्त किया जाता है तो उसे गुणात्मक सह–सम्बन्ध कहते हैं। गुणात्मक सहसम्बन्ध की अभिव्यक्ति मुख्यतः इसके दो प्रकारों द्वारा होती है– रैखिक एवं वक्रीय।

6.3.1.1 रैखिक सहसम्बन्ध–

जब दो चरों या परीक्षणों पर के प्राप्तांकों के सह–सम्बन्ध को एक सीधी रेखा द्वारा व्यक्त किया जाता है तो उसे रैखिक सहसम्बन्ध कहते हैं। जैसे– यदि ऊँचाई और भार के बीच के सहसम्बन्ध को ग्राफ द्वारा अभिव्यक्त करना चाहें तो एक रेखीय सम्बन्ध दृष्टिगत होगा क्योंकि व्यक्ति की ऊँचाई जैसे–जैसे बढ़ती जाती हैं, उसके शरीर का भार भी बढ़ता जाता है।

6.3.1.2 वक्रीय सहसम्बन्ध–

जब दो चरों या दो परीक्षणों के प्राप्तांकों के बीच के सह–सम्बन्ध को एक सीधी रेखा द्वारा न व्यक्त कर टेढ़ी–मेढ़ी रेखा या वक्र द्वारा व्यक्त किया जाता है, तो यह सह–सम्बन्ध वक्रीय या अरैखिक कहलाता है। अधिकतर वक्रीय सह–सम्बन्ध वैसे प्राप्तांकों में देखने को मिलता है, जो मनोभौतिकी, थकान, विस्मरण तथा अधिगम के प्रयोगों से प्राप्त होते हैं। अभ्यास तथा सीखने की मात्रा के बीच प्राप्त सह–सम्बन्ध वक्रीय होगा क्योंकि बढ़ते हुए प्रयास के साथ एक खास सीमा तक तो अधिगम की मात्रा बढ़ती है, परन्तु उसके बाद उसमें थकान के कारण ह्रास होने लगता है।

6.3.2 मात्रात्मक सहसम्बन्ध–

जब दो चरों या परीक्षणों के प्राप्तांकों के बीच पाये जाने वाले सह–सम्बन्ध को रेखा द्वारा अभिव्यक्त न कर संख्या द्वारा अभिव्यक्त किया जाता हैं तो इसे मात्रात्मक सह–सम्बन्ध कहते हैं। मात्रात्मक सह–सम्बन्ध तीन प्रकार के होते हैं– धनात्मक, ऋणात्मक तथा शून्य।

6.3.2.1 धनात्मक सहसम्बन्ध–

जब दो चरों के बीच का सम्बन्ध ऐसा होता हैं कि किसी एक में किसी तरह का परिवर्तन होने से दूसरे में भी ठीक उसी तरह का परिवर्तन होता है तो इस सम्बन्ध को धनात्मक सह–सम्बन्ध कहते हैं। जैसे– उम्र में वृद्धि होने के साथ–साथ व्यक्ति की संवेगात्मक परिपक्वता में भी वृद्धि होती हैं। जैसे–जैसे आयु बढ़ती है, सामान्यतः व्यक्ति में सांवेगिक परिपक्वता भी बढ़ती जाती है। यहाँ दोनों चरों उम्र एवं सांवेगिक परिपक्वता में एक ही तरह का परिवर्तन हो रहा हैं। अतः इनके बीच धनात्मक सहसम्बन्ध हैं।

धनात्मक सह–सम्बन्ध में भी कुछ चरों के बीच पूर्ण धनात्मक सह–सम्बन्ध पाया जाता हैं तो कुछ के बीच उच्च स्तरीय सहसम्बन्ध तथा कुछ के बीच मध्यम स्तरीय या फिर निम्न स्तरीय सहसम्बन्ध भी। जैसे–वृत के व्यास और उसकी परिधि के बीच प्राप्त सह–सम्बन्ध पूर्ण धनात्मक होगा। इसी तरह इंच और सेंटीमीटर के बीच भी पूर्ण धनात्मक सह–सम्बन्ध पाया जाता है। ऊँचाई और भार के बीच प्रायः उच्च स्तरीय सहसम्बन्ध पाया जाता है तथा यदि आर्थिक पृष्ठभूमि एवं शैक्षिक लब्धि के बीच सहसम्बन्ध निकाला जाय तो वह मध्यम स्तर का धनात्मक सह–सम्बन्ध होगा।

6.3.2.2 ऋणात्मक सहसम्बन्ध–

जब दो चरों में ऐसा सम्बन्ध देखने में आता है कि एक चर की मात्रा घटने पर दूसरे चर की मात्रा बढ़ती है या फिर एक चर की मात्रा बढ़ने पर दूसरे चर की मात्रा घटने लगती है, तब ऐसी स्थिति में भी दोनों चरों में सह–सम्बन्ध अवश्य रहता है, परन्तु वह विपरीत दिशा में रहता है। अतः ऐसे सहसम्बन्ध को ऋणात्मक सह–सम्बन्ध कहते हैं। वस्तु के मूल्य और आपूर्ति के

बीच ऋणात्मक सह–सम्बन्ध पाया जाता है। जैसे–जैसे वस्तु की पूर्ति अधिक होती जायेगी इसके मूल्य में कमी आती जायेगी या फिर पूर्ति जब कमती जायेगी तो मूल्य में वृद्धि होती जायेगी। ऋणात्मक सह–सम्बन्ध के अन्तर्गत भी पूर्ण ऋणात्मक सहसम्बन्ध, उच्च स्तरीय ऋणात्मक सह–सम्बन्ध, मध्यम स्तरीय ऋणात्मक सह–सम्बन्ध तथा निम्न स्तर का सह–सम्बन्ध आदि पाये जाते हैं।

6.3.2.3 शून्य सहसम्बन्ध–

जब दो चरों के बीच कोई संगत यानी, एक तरह का सम्बन्ध नहीं होता है, यानी जब दो चरों में से कोई भी चर एक–दूसरे को प्रभावित नहीं करता है तब ऐसी स्थिति में दोनों चरों में साहचर्यात्मक सम्बन्ध शून्य होता है, अतः उनमें सह–सम्बन्ध की मात्रा भी शून्य होती है। जैसे– यदि व्यक्ति की बुद्धिलब्धि और इसके भार के बीच सह–सम्बन्ध जानना चाहें तो यह निश्चित रूप से शून्य होगा, क्योंकि यहाँ कोई भी चर एक–दूसरे पर प्रभाव नहीं डालता है, यानी सामान्यतः न तो शरीर के भार से बुद्धि बढ़ती ही है, और न घटती ही हैं।

कभी–कभी साधारण अध्ययनकर्ता अपने अध्ययन में दो बिल्कुल ही असम्बन्धित चरों में भी सहसम्बन्ध की स्थिति स्थापित करने का प्रयत्न करते हैं। ऐसा प्रायः उस स्थिति में होता है, जबकि अध्ययनकर्ता को परस्पर कारण–सम्बन्ध का ठीक ज्ञान नहीं होता। अतः ऐसी स्थिति में प्राप्त सहसम्बन्ध को निरर्थक सहसम्बन्ध कहते हैं। जैसे– अध्ययनकर्ता द्वारा यह सिद्ध करने का प्रयास करना कि जैसे–जैसे देश में सड़कों की संख्या बढ़ रही है वैसे–वैसे ही देश में बीमार बच्चों की संख्या बढ़ती जा रही है। यद्यपि आँकड़ों के आधार पर यह दिखलाया जा सकता है कि पिछले वर्षों में देश में सड़कों की संख्या में वृद्धि हुई है तथा कुछ अधिक बच्चे भी बीमार पड़े हैं। परन्तु यहाँ इन दोनों चरों के बीच समय का साहचर्य है, कारणात्मक सम्बन्ध नहीं है।

दो चरों में समय एवं स्थान के अन्तर्गत साहचर्य हो सकता है, परन्तु ऐसे साहचर्यात्मक सम्बन्ध को कारणता का सम्बन्ध नहीं कह सकते क्योंकि साहचर्य स्वयं कारणता के सम्बन्ध का प्रमाण नहीं होता। जैसे–उच्च सहसम्बन्ध से उच्च श्रेणी के साहचर्यात्मक सम्बन्ध का ही पता लगता है, यह स्वयं कारणता के सम्बन्ध का प्रमाण नहीं हैं, क्योंकि सहसम्बन्ध गुणांक केवल साहचर्य की मात्रा को संख्यात्मक रूप में व्यक्त करता है, इससे अधिक कुछ भी नहीं।

6.3.3 सहसम्बन्ध गुणांक–

सहसम्बन्ध से केवल यही ज्ञात होता है कि दोनों चरों में पारस्परिक सम्बन्ध किस प्रकार का है– धनात्मक ऋणात्मक या शून्य। इसके अतिरिक्त, सहसम्बन्ध से हमें अधिक–से–अधिक यह ज्ञात हो सकता है कि सहसम्बन्ध थोड़ा है, सामान्य है या अधिक है, परन्तु इसके द्वारा दोनों चरों में सहसम्बन्ध की मात्रा का परिशुद्ध, वस्तुनिष्ठ तथा स्पष्ट ज्ञान उपलब्ध नहीं होता। इस दोष को दूर करने के लिए सहसम्बन्ध को सहसम्बन्ध गुणांक के द्वारा व्यक्त किया जाता है। सहसम्बन्ध गुणांक के अन्तर्गत निम्न, मध्यम, उच्च तथा पूर्ण सहसम्बन्ध को क्रमशः $\pm$.4, $\pm$ .6, $\pm$ .9 तथा $\pm$1.00 द्वारा व्यक्त करनेमें शुद्धता और वस्तुनिष्ठता बढ़ जाती है तथा ऐसी स्थिति में उसे अधिक वैज्ञानिक कहा जा सकता है।

सहसम्बन्ध गुणांक को परिभाषित करते हुए गिलफोर्ड ने कहा है कि ''सहसम्बन्ध गुणांक एक एकल संख्या है जो हमें बताता है कि कि सीमा तक दो वस्तुएं सम्बन्धित हैं तथा किसी सीमा तक एक में आया परिवर्तन दूसरे में भी परिवर्तन उत्पन्न करता है।''

इस प्रकार जहाँ सहसम्बन्ध से गुणात्मक मात्रा का बोध होता है, वहाँ सहसम्बन्ध गुणांक से दोनों चरों के सम्बन्ध के विषय में मात्रात्मक ज्ञान उपलब्ध होता है। वास्तव में सहसम्बन्ध

गुणांक एक प्रकार का ऐसा सूचक है, जिससे दो चरों में एक का ज्ञान होने पर दूसरे चर के विषय में पूर्वकथन किया जा सकता है।

सहसम्बन्ध गुणांक का मान +1.00 से लेकर −1.00 तक की सीमाओं के अन्तर्गत आता है। जब सहसम्बन्ध गुणांक का मान धन में आता है तो वह धनात्मक सहसम्बन्ध का प्रतीक होता है तथा जब इसका मान ऋण में आता है, तो ऋणात्मक सहसम्बन्ध कहलाता है। पुनः, इसका मान शून्य आने पर शून्य सहसम्बन्ध कहलाता है।

सहसम्बन्ध गुणांक की विभिन्न मात्राओं की गुणात्मक व्याख्या–

सहसम्बन्ध गुणांक	सहसम्बन्ध विवरण
+ 1.00	पूर्ण धनात्मक सहसम्बन्ध
+.81 से +.99	अत्यन्त उच्च धनात्मक सहसम्बन्ध
+.61 से + .80	उच्च धनात्मक सहसम्बन्ध
+ .41 से +.60	औसत धनात्मक सहसम्बन्ध
+.21 से +.40	निम्न धनात्मक सहसम्बन्ध
.01 से + .20	नगण्य धनात्मक सहसम्बन्ध
0 शून्य सहसम्बन्ध	
.01 से −.20	नगण्य ऋणात्मक सहसम्बन्ध
−.21 से −.40	निम्न ऋणात्मक सहसम्बन्ध
−.41 से −.60	औसत ऋणात्मक सहसम्बन्ध
−.61 से −.80	उच्च ऋणात्मक सहसम्बन्ध
−.81 से −.99	अत्यधिक उच्च ऋणात्मक सहसम्बन्ध
−1.00	पूर्ण ऋणात्मक सहसम्बन्ध

6.4 गुणन–आघूर्ण विधि–

सहसम्बन्ध गुणांक ज्ञात करने की अनेक विधियाँ हैं जिनमें गुणन–आघुर्ण विधि अधिक प्रचलित तथा लोकप्रिय है। इस विधि का प्रतिपादन प्रो0 कार्ल पीयर्सन ने सन् 1900 ई0 के लगभग में किया था। इस विधि को अँग्रेजी के छोटा अक्षर 'आर' (r) से सम्बोधित करते हैं। इसीलिए इसे विधि पियर्सन r (आर) भी कहा जाता है। गुणन–आघूर्ण सहसम्बन्ध की कुछ मान्यताएं/पूर्वकल्पनाएं हैं जिनकी संतुष्टि वांछनीय है। ये मान्यताएं/पूर्वकल्पनाएं निम्न हैं–

1. दोनों चरों (X एवं Y) के प्राप्तांकों का संबंध रैखिक होना चाहिए। वक्रीय सम्बन्ध रहने पर आर का गुणन यथासम्भव नहीं करना चाहिए।
2. X तथा Y चरों के प्राप्तांकों का वितरण सामान्य होना चाहिए।
3. X तथा Y चरों के प्राप्तांकों में समविसारिता होनी चाहिए समविसारिता से मतलब होता है कि स्कैटर डायग्राम के प्रत्येक 'रो' तथा 'कॉलम' में प्राप्तांकों का विसरण बराबर या करीब–करीब बराबर है। समविसारिता का अंदाज स्कैटर डायग्राम देखने से होता है।

यदि आँकड़े उपर्युक्त पूर्वकल्पनाओं के अनुरूप हैं, तो सहसम्बन्ध r द्वारा ज्ञात किया जाना सबसे उपयुक्त सिद्ध होता है।

r ज्ञात करने के निम्नलिखित प्रमुख तरीके हैं जो इस प्रकार हैं–

6.4.1 मूल विधि या वास्तविक माध्य विधि–

r ज्ञात करने की यह मूल विधि है जिसका प्रयोग तब करते हैं जब दोनों चरों में, यानी X तथा Y में प्राप्तांकों का विचलन वास्तविक माध्य से लिया जाता है तथा आँकड़े प्रायः असंगठित होते हैं। इसका सूत्र इस प्रकार है–

$$r = \frac{\sum xy}{N.\sigma_x.\sigma_y}$$

जहां r = चर X और Y के बीच का सहसम्बन्ध

x= चर X के प्राप्तांकों का माध्य से विचलन

y= चर Y के प्राप्ताकों का माध्य से विचलन

σ_x= चर X के प्राप्तांकों का मानक विचलन

σ_y= चर Y के प्राप्तांकों का मानक विचलन

N= प्राप्तांकों की संख्या (जोड़ों में)

उपर्युक्त सूत्र को निम्न प्रकार भी लिखा जा सकता है –

$$r = \frac{\sum xy}{N\sqrt{\frac{\sum x^2}{N}} \times \sqrt{\frac{\sum y^2}{N}}}$$

$$\text{या}, r = \frac{\sum xy}{N\sqrt{\frac{(\sum x^2).(\sum y^2)}{N^2}}}$$

$$\text{या}, \; r = \frac{\sum xy}{\sqrt{(\sum x^2)(\sum y^2)}}$$

r का यह सूत्र ऊपर लिखित मूल सूत्र का ही सरल रूप है। दोनों चरों में माध्य से प्राप्तांकों के विचलनों के गुणनफल के योग को छात्रों की संख्या (N) से भाग देने पर औसत विचलन निकल आता है। जब इसको दोनों चरों के मानक विचलन (σ_x एवं σ_y) से विभाजित कर दिया जाात है तब हमारे पास वह मूल्य या अनुपात प्राप्त हो जाता है जिसमें दोनों चरों के विचलन अपने माध्यों से विचलित हैं।

6.4.2 मानित माध्य विधि –

'r' ज्ञात करने की यह दूसरी प्रमुख विधि है। इस विधि का प्रयोग तब होता है जब प्राप्तांकों का विचलन मानित या कल्पित माध्य से लिया जाता है। यहां आंकड़े अंसगठित तथा संगठित दोनों तरह के हो सकते हैं। कल्पित माध्य विधि द्वारा r ज्ञात करने का सूत्र इस प्रकार है –

$$r = \frac{\sum xy/_N - C_x C_y}{\sigma_x \sigma_y}$$

जहां, r = X तथा Y चरों के बीच का सहसम्बन्ध

x = X चर के प्राप्तांकों का माध्य से विचलन

y = Y चर के प्राप्ताकों का माध्य से विचलन

N = प्राप्तांकों के जोड़े की संख्या

σ_x= X चर में प्राप्तांकों का मानक विचलन

σ_x=Y चर में प्राप्तांकों का मानक विचलन

C_x= X चर में प्राप्तांकों की शुद्धि

C_y= Y चर में प्राप्तांकों की शुद्धि

$C_x = M_x - AM_x$

$Cy = M_y - AM_y$

$$\sigma x = \sqrt{\frac{\sum x^2}{N} - (Cx)^2}$$

$$\sigma y = \sqrt{\frac{\sum x^2}{N} - (Cx)^2}$$

मानित या कल्पित माध्य के रूप में प्रायः वास्तविक माध्य के तुरंत पहले या तुंरत बाद वाले प्राप्तांक (पूर्ण संख्या) को कल्पित कर लिया जाता है तथा दशमलव का वह अंश जो कल्पित माध्य को वास्तविक माध्य से अन्तर कराता है, शुद्धि कहलाता है।

कभी–कभी सामाजिक विज्ञान के प्रयोगों में दोनों चरों के आंकड़ें काफी बड़े–बड़े होते हैं तथा प्रयासों अथवा निरीक्षणों की संख्या (N) भी काफी बड़ी होती है। इस प्रकार संख्याओं के बड़े होने से गुणन का भार अत्यधिक हो जाता है। ऐसी स्थिति में सहसम्बन्ध गुणांक निकालने के लिए घटित अंक विधि का प्रयोग अधिक उपयोगी रहता है, जिसमें किसी स्थिर अंक को चर के प्रत्येक प्राप्तांक में से घटाकर बड़े–से–बड़े आंकड़ों को सरलतापूर्वक कम कर दिया जाता है। इससे जहां एक ओर गणन का भार घट जाता है वहीं दूसरी ओर परिणाम की शुद्धता में भी कमी नहीं आती।

6.5 स्पीयरमैन की कोटि – अन्तर विधि –

कोटि पर आधारित सांख्यिकी के लिए सबसे पहली विधि स्पीयरमैन द्वारा प्रतिपादित सहसम्बन्ध की कोटि–अन्तर विधि है जिसे 'P' ('रो' अक्षर) से सूचित किया जाता है। यह विधि उस परिस्थिति में सबसे ज्यादा उपर्युक्त है, जब N छोटा होता है दोनों चरों X और Y का मापन क्रमसूचक मापनी पर संभव है, यानि आंकड़े कोटि पर प्राप्त हुए हों या अगर प्राप्तांक या मापन में भी आये हों, तो उन्हें कोटि में परिवर्तित किया जाना संभव हो।

कोटि अन्तर विधि द्वारा सहसम्बन्ध ज्ञात करने का सूत्र निम्न प्रकार है –

$$P = 1 - \frac{6.\sum D^2}{N(N^2 - 1)}$$

जहां, P = चर X एवं Y के बीच सहसम्बन्ध

D = चर X के प्राप्तांकों को कोटि तथा चर Y के प्राप्तांकों की कोटि का अन्तर

N = प्राप्तांकों के जोड़े की संख्या।

6.6 सहसम्बन्ध की गणना –

आइये, अब उपर्युक्त सूत्रों का प्रयोग कर सहसम्बन्ध गुणांक की गणना करें। पहले गुणन–आघूर्ण की दोनों ही विधियों (वास्तविक माध्य विधि तथा कल्पित माध्य विधि) द्वारा 'r' की गणना का उदाहरण देखें। फिर कोटि–अन्तर विधि से 'p' की गणना करेंगे।

6.6.1 वास्तविक माध्य विधि से पियर्सन सहसम्बन्ध (r) की गणना –

वास्तविक माध्य विधि से 'r' की गणना करते समय सर्वप्रथम दोनों चरों के प्राप्तांकों का माध्य ज्ञात करते हैं। माध्य निकालने के लिए सूत्र $M = \frac{\sum X}{N}$ का प्रयोग करते हैं।

चर X और चर Y से सम्बन्धित प्राप्तांकों का माध्य ज्ञात कर लेने के बाद इन दोनों चरों के प्राप्तांकों का माध्य से विचलन तालिका के अनुसार ज्ञात करते हैं। माध्य से विचलन ज्ञात करने के लिए निम्न सूत्रों का प्रयोग करते हैं –

$$x = X - M_x;\ y = Y - M_y$$

माध्य से विचलन–x और विचलन–y ज्ञात करने के बाद x कॉलम की प्रत्येक संख्या का वर्ग करके x^2 कॉलम में लिखते हैं। इसी प्रकार से y^2 ज्ञात करते हैं।

तालिका पूरी करने के लिए तालिका के अन्तिम कॉलम में xy की गणना करते हैं। xy की गणना करने के लिए x कॉलम के अंक को y कॉलम के अंक से गुणा करके xy कॉलम में लिखते हैं।

तालिका पूरी हो जाने के बाद x^2 का योग अर्थात् Σx^2; y^2 का योग अर्थात् Σy^2 और xy का योग अर्थात Σxy की गणना करके तालिका के नीचे लिखते हैं और फिर इन मूल्यों को उपरोक्त बताये गये सूत्र में रखकर सह–सम्बन्ध गुणांक के मानक की गणना करते हैं।

उदाहरण : 10 विद्यार्थियों के अर्थशास्त्र और गणित के प्राप्तांक नीचे दिये हुए हैं। इन प्रातांकों की सहायता से वास्तविक मध्यमान विधि से सह–सम्बन्ध गुणांक की गणना कीजिए –

अर्थशास्त्र (X)	27	26	26	30	31	30	26	28	29	27
गणति (Y)	34	32	32	30	33	31	32	32	31	33

X	Y	x = X – Mx	y = Y - My	x^2	y^2	xy
27	34	27 - 28 = - 1	34 – 32 = 2	1	4	-2
26	32	26 - 28 = - 2	32 – 32 = 0	4	0	0
26	32	26 - 28 = - 2	32 – 32 = 0	4	0	0
30	30	30 - 28 = 2	30 – 32 = - 2	4	4	-4
31	33	31 - 28 = 3	32 – 32 = 1	9	1	3
30	31	30 - 28 = 2	31 – 32 = - 1	4	1	-2
26	32	26 - 28 = - 2	32 – 32 = 0	4	0	0
28	32	28 - 28 = 0	32 – 32 = 0	0	0	0
29	31	29 - 28 = 1	31 – 32 = - 1	1	1	-1
27	33	27 - 28 = - 1	31 – 32 = 1	1	1	-1
ΣX=280	ΣX=320	Σx=0	Σy=0	Σx^2=32	Σy^2=12	Σxy=-7

Nx = 10   Ny = 10

$$Mx = \frac{\sum X}{Nx} = \frac{280}{10} = 28, My = \frac{\sum Y}{Ny} = \frac{320}{10} = 32$$

हल : प्रश्न में, Σxy = - 7, $\Sigma x^2 = 32$, $\Sigma y^2 = 12$

इन मूल्यों को सूत्र में रखने पर,

$$r = \frac{\sum xy}{\sqrt{\sum x^2 \times \sum y^2}}$$

$$= \frac{-7}{\sqrt{32 \times 12}} = \frac{-7}{\sqrt{384}}$$

$$r = \frac{-7}{19.59} = -.357 = -.36$$

अतः अर्थशास्त्र और गणित के बीच ऋणात्मक एवं औसत से नीचे स्तर का सहसम्बन्ध है।

6.6.2 कल्पित माध्य विधि से 'r' की गणना –

सर्वप्रथम चर X और Y के प्राप्तांकों का माध्य ज्ञात करते हैं जिसके लिए M = ΣX/N सूत्र का उपयोग करते हैं। इस मध्यमान के आधार पर कल्पित मध्यमान निश्चित करते हैं। कल्पित मध्यमान पूर्णांकों में मानते हैं। यह दोनों ही चरों का कोई भी प्राप्तांक हो सकता है।

X प्राप्तांकों के कल्पित मध्यमान से अन्य प्राप्तांकों का विचलन ज्ञात करके x कालम में रखा जाता है। इसी प्रकार से Y प्राप्तांकों के कल्पित मध्यमान से अन्य प्राप्तांकों का विचलन ज्ञात करके y कॉलम में रखते हैं। फिर x^2 और y^2 तथा xy सूत्र को नीचे के उदाहरण के अनुसार पूरा करते हैं।

Cx = Mx – AMx सूत्र द्वारा Cx का मान ज्ञात करते हैं। इसी प्रकार Cy = My – AMy सूत्र द्वारा Cyका मान ज्ञात करते हैं। अन्त में सूत्र के सभी संकेतों के मूल्यों को सूत्र में रखकर Rकी गणना करते हैं।

उदाहरण : कल्पित मध्यमान विधि द्वारा नीचे दिए गए जांच A और जांच B के बीच पियर्सन सहसम्बन्ध गुणांक की गणना कल्पित माध्य विधि द्वारा कीजिए।

प्रयोज्य	टेस्ट–ए	टेस्ट–बी	कल्पित माध्य से विचलन		x^2	y^2	xy
	X	Y	x	y			
A	6	10	-3	3	9	9	-9
B	7	9	-2	2	4	4	-4
C	8	9	-1	2	1	4	-2
D	7	7	-2	0	4	0	0
E	9	7	0	0	0	0	0
F	10	5	1	-2	1	4	-2
G	10	5	1	-2	1	4	-2
H	9	4	0	-3	0	9	0
I	9	4	0	-3	0	9	0

$\Sigma X = 75$ $\Sigma Y = 60$ $\Sigma x^2 = 20$ $\Sigma y^2 = 43$ $\Sigma xy = -19$

Nx = 9 Ny = 9

Mx = 8.33 My = 6.67

AMx = 9 AMy = 7

कल्पित मध्यमान विधि द्वारा सह सम्बन्ध गुणांक की गणना निम्न सूत्र द्वारा किया गया है।

$$r = \frac{\frac{\sum xy}{N} - (Cx)(Cy)}{\sqrt{\left[\frac{\sum x^2}{N} - (Cx)^2\right]\left[\frac{\sum y^2}{N} - (Cy)^2\right]}}$$

यहां, Cx = Mx - AMx = 8.33 - 9 = - 67

Cy = My - AMy = 6.67 - 7 = - .33

उपर्यक्त सभी मूल्यों को सूत्र में रखने पर,

$$r = \frac{\frac{-19}{9} - (-.67)(-.33)}{\sqrt{\left[\frac{20}{9} - (-.67)^2\right]\left[\frac{43}{9} - (-.33)^2\right]}}$$

$$= \frac{-2.11 - (0.22)}{\sqrt{[2.22 - .45][4.78 - .11]}} = \frac{-2.33}{\sqrt{[1.77][4.67]}}$$

$$= \frac{-2.33}{\sqrt{[8.265)}} = \frac{-2.33}{\sqrt{[2.874)}} = -.81$$

अतः, परीक्षण A और परीक्षण B के प्राप्तांकों में अति उच्च ऋणात्मक सह–सम्बन्ध है।

6.6.3 कोटि अन्तर विधि से स्पीयरमैन '*P*' की गणना –

प्राप्तांक यदि कोटियों के रूप में नहीं है तो सर्वप्रथम कोटियों का निर्धारण नीचे के उदाहरण के अनुसार करते हैं। कोटियों का निर्धारण एक–दूसरे की तुलना में किया जाता है। जिस व्यक्ति का प्राप्तांक सर्वाधिक होता है उसे कोटि 1 दी जाती है। सर्वाधिक से कम प्राप्तांक पाने वाले को कोटि 2 दी जायेगी। उसी प्रकार से कोटि 3, 4, 5, 6 आदि का निर्धारण किया जाता है। इस प्रकार कोटियां प्रदान करके नीचे के उदाहरण का कालम R_1, जो परीक्षण–क पर आधारित है, पूरा करते हैं। फिर इसी प्रकार से कालम R_2 को परीक्षण–ख के आधार पूरा करते हैं। उदाहरण में परीक्षण–क में सर्वाधिक प्राप्तांक 37 को कोटि 1, उससे कम प्राप्तांक 35 को कोटि 2 दी गई है, इसी प्रकार अन्य कोटियों का निर्धारण किया गया है। विद्यार्थी B, C और E के समान प्राप्तांक हैं। इन तीनों के प्राप्तांक 27, 27, 27 हैं। विद्यार्थी D को कोटि 4 प्राप्त हो चुकी है। अतः इन तीनों को 5, 6 और 7 कोटि देनी है। 5,6 और 7 की मध्यमान कोटि 6 है (5+6+7 / 3) जो तीनों विद्यार्थियो ंको दिया गया है। इस उदाहरण के परीक्षण – ख में सभी कोटियों का निर्धारण परीक्षण–क के अनुसार किया गया है। इसमें C और D विद्यार्थियों के समान प्राप्तांक 14, 14 हैं। कोटि 4 तक निर्धारण हो चुका है, कोटि 5 और 6 देनी है। यहां 5 और 6 का मध्यमान 5.5 है जो दोनों विद्यार्थियों को प्रदान की गई है।

R_1 और R_2 कालम में रैंक प्रदान करने का काम पूरा कर लेने के बाद अगले कॉलम में $D = R_1 - R_2$ का मान ज्ञात करते हैं। फिर D कालम की संख्याओं का वर्ग करके D^2का मान प्राप्त कर D^2कालम पूरा कर लेते हैं।

अन्त में ΣD^2का मान नीचे के उदाहरण के अनुसार प्राप्त करके सूत्र में सभी मानों को रखकर '*P*' के मान की गणना कर लेते हैं।

उदाहरण : नीचे आठ विद्यार्थियों के परीक्षण 'क' एवं 'ख' पर प्राप्तांक दिए गए हैं। इन प्राप्तांकों से सहसम्बन्ध गुणांक की गणना कीजिए –

विद्यार्थी संख्या	परीक्षण–क	परीक्षण–ख	कोटि		अन्तर	
			R_1	R_2	D $(R_1 - R_2)$	D^2
A	25	12	8	8	0.0	0.0
B	27	13	6	7	-1.0	1.0
C	27	14	6	5.5	-0.5	0.25
D	29	14	4	5.5	1.5	2.25
E	27	16	6	4	2.0	4.0
F	30	18	3	3	0.0	0.0
G	35	19	2	2	0.0	0.0
H	37	20	1	1	0.0	0.0
$\Sigma D^2 = 7.50$						

हल : प्रश्न में, $\Sigma D^2 = 7.50, N = 8$

इन मूल्यों को सूत्र में रखने पर,

$$p = 1 - \frac{6 \times \sum D^2}{N(N^2 - 1)}$$

$$= 1 - \frac{6 \times 7.5}{8(8^2 - 1)} = 1 - \frac{6 \times 7.5}{8(64 - 1)}$$

$$= 1 - \frac{45}{8 \times 63} = 1 - \frac{45}{504}$$

$$= 1 - 0.89 = 911 = .91$$

अतः, परीक्षण –क और परीक्षण ख के प्राप्तांकों में सहसम्बन्ध गुणांक का मान 0.91 है। यह सहसम्बन्ध अति उच्च और धनात्मक है।

अभ्यास प्रश्न

1. जब दो चरों या परीक्षणों के प्राप्तांकों के सहसम्बन्ध को एक सीधी रेखा द्वारा व्यक्त किया जाता है तो उसे .... सहसम्बन्ध कहते हैं।
2. यदि दो चरों के बीच का मात्रात्मक सहसम्बन्ध + 1.00 है तो इसे .... सहसम्बन्ध कहते हैं।
3. सूत्र $P = 1 - \frac{6.\Sigma D^2}{N(N^2 - 1)}$ का प्रतिपादन किसके द्वारा किया गया?
4. गुणन–आघूर्ण विधि से सहसम्बन्ध निकालने का सूत्र किसने दिया?

6.7 सारांश

- सहसम्बन्ध से तात्पर्य दो चरों या परीक्षणों के प्राप्तांकों में निहित सम्बन्धों से होता है। जब दो या दो से अधिक चरों या घटनाओं में साहचर्यात्मक सम्बन्ध पाया जाता है, तो ऐसे सम्बन्ध को सहसम्बन्ध कहते हैं।

- सहसम्बन्ध मुख्यतः दो प्रकार के होते हैं– गुणात्मक तथा मात्रात्मक। गुणात्मक सह–सम्बन्ध के दो रूप हैं– रैखिक एवं वक्रीय। मात्रात्मक सहसम्बन्ध तीन रूपों में पाया जाता है– धनात्मक, ऋणात्मक तथा शून्य।
- जब दो चरों या परीक्षणों के बीच के सहसम्बन्ध को मात्रात्मक रूप में व्यक्त किया जाता है तो उसे सहसम्बन्ध गुणांक की संज्ञा दी जाती है। जहाँ सहसम्बन्ध से गुणात्मक मात्रा का बोध होता है, वहीं सहसम्बन्ध गुणांक से दोनों चरों के सम्बन्ध के विषय में मात्रात्मक ज्ञान उपलब्ध होता है।
- सहसम्बन्ध गुणांक ज्ञात करने की वैसे तो कई विधियां हैं, परन्तु पियर्सन की गुणन–आधूर्ण विधि तथा स्पीयरमैन की कोटि–अन्तर विधि लोकप्रिय विधि है।

6.8 शब्दावली

सहसम्बन्धः दो चरों, परीक्षणों, घटनाओं के बीच पाया जाने वाला साहचर्यात्मक सम्बन्ध सहसम्बन्ध कहलाता है।

गुणात्मक सहसम्बन्ध : जब दो चरों या दो परीक्षणों पर के प्राप्तांकों में सहसम्बन्ध किसी खास गुण के द्वारा अभिव्यक्त किया जाता है तो उसे गुणात्म्क सहसम्बन्ध कहते हैं।

मात्रात्मक सहसम्बन्ध : जब दो चरों या परीक्षणों के प्राप्तांकों के बीच पाये जाने वाले सहसम्बन्ध को रेखा द्वारा अभिव्यक्त न कर संख्या द्वारा अभिव्यक्त किया जाता है तो इसे मात्रात्मक सहसम्बन्ध कहते हैं।

6.9 अभ्यास प्रश्नों का उत्तर

1.	रैखिक	2.	पूर्ण धनात्मक
3.	स्पीयरमैन	4.	पियर्सन

6.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. श्री वास्तव, डी.एन. सांख्यिकी एवं मापन, विनोद प्रस्तक मंदिर, आगरा।
2. भाटिया, टी. आधुनिक मनोवैज्ञानिक सांख्यिकी, लावण्य प्रकाशन, उरई।
3. सिन्हा एवं मिश्रा,मनोविज्ञान में प्रयोग परीक्षण एवं सांख्यिकी, भारती भवन, पटना
4. गैरेट एवं वुडवर्थ, स्टैटिस्टिक्स इन साइकोलॉजी एण्ड एजुकेशन, वैकिल्स, फिफर एण्ड साइमन्स लि. बॉम्बे।
5. कपिल, एच.के., सांख्यिकी, विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा।

6.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1. सहसम्बन्ध से आप क्या समझते हैं? मात्रात्मक सहसम्बन्ध के विभिन्न प्रकारों का उल्लेख करें।
2. सहसम्बन्ध गुणांक को परिभाषित करें। इसकी विभिन्न मात्राओं की गुणात्मक व्याख्या करें।
3. दो परीक्षकों ने 6 विद्यार्थियों को निम्न प्रकार से स्थानक्रम प्रदान किये हैं। ρ की गणना करें।

विद्यार्थी	प्रथम परीक्षक के रैंक	द्वितीय परीक्षक के रैंक
1	3	1
2	2	2
3	4	3
4	1	4
5	6	5
6	5	6

4. नीचे प्रश्न–क और प्रश्न–ख में दिये हुए आंकड़ों से अलग–अलग pकी गणना करें।

(क)

विद्यार्थी	परीक्षक–अ	परीक्षक–ब
A	17	20
B	12	25
C	14	30
D	15	35
E	19	30
F	20	23
G	24	21

(ख)

प्रयोज्य	इतिहास	भूगोल
1	35	35
2	24	42
3	26	28
4	30	32
5	19	20
6	20	23
7	25	24
8	30	30
9	35	37
10	30	32

5. नीचे 'अ', 'ब' एवं 'स' में परीक्षण A और B पर 10 प्रयोज्यों के प्राप्तांक दिए गए हैं। तीनों ही स्थितियों में परीक्षण A एवं B के बीच वास्तविक माध्य विधि एवं कल्पित माध्य विधि से 'r' की गणना करें।

(अ)		(ब)		(स)	
परीक्षण–A	परीक्षण–B	परीक्षण–A	परीक्षण–B	परीक्षण–A	परीक्षण–B
16	17	52	25	5	7
14	13	54	27	2	1
29	20	55	28	10	7
23	20	55	29	3	6
19	16	56	30	13	11
15	19	57	34	6	11
26	16	59	34	12	14
10	16	60	34	6	3
10	11	61	36	8	9
18	12	63	35	10	7

इकाई 7 :—यादृच्छिक निदर्शन, प्रतिदर्शन वितरण, मध्यमान,प्रामाणिक विचलन एवं आर (r) की प्रामाणिक त्रुटि, सार्थकता के स्तर, स्वतंत्रता के अंश, टाईप—वन त्रुटि एवं टाईप—टू त्रुटि

इकाई संरचना

7.1 प्रस्तावना
7.2 उद्देश्य
7.3 प्रतिचयन
7.4 यादृच्छिक या संयोगिक प्रतिचयन व्यवहारपरक
7.5 प्रतिचयन वितरण
7.6 सार्थकता या विश्वास के विभिन्न स्तर
7.7 प्रसम्भाव्यता सिद्धान्त एवं विश्वास के विभिन्न स्तरों की विवेचना।
7.8 स्वमूंल्याकन हेतु प्रश्न
7.9 स्वतंन्त्रता के अंश
7.9.1 मानकत्रुटि की सार्थकता के निर्धारण के स्वतन्त्रंता के अंशो का महत्तव।
7.9.2 सह—सम्बन्धित समूह में स्तन्त्रता के अंशों की गणना
7.9.3 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न
7.10 प्रथम प्रकार एवं द्वितीय प्रकार की त्रुटि
7.10.1 प्रथम एवं द्वितीय प्रकार की त्रुटि को दूर करने के उपाय
7.10.2 स्वंमूल्याकन हेतु प्रश्न।
7.11 सारांश
7.12 शब्दावली
7.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
7.14 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

7.1 प्रस्तावना :—

दैनिक जीवन में प्रतिदर्श के चयन करने में विशेष कठिनाई उत्पन्न होती है क्योंकि प्रायः हम जिस समष्टि का अध्ययन करना चाहते है, उसका स्वरूप प्रायः सजातीय रहता हैं। परन्तु मनोविज्ञान एवं शिक्षा के क्षेत्रों में हम जिन इकाईयों का अध्ययन करते है उनका स्वरूप अत्यन्त विषमजातीय होता है। आधुनिक सांख्यिकी में प्रतिचयन से अभिप्राय उस क्रमबद्ध पद्धति से है, जिसकी सहायता से एक समष्टि से सम्बन्धित वैज्ञानिक अध्ययन के लिए कम से कम इकाईयों के प्रयोग की आवश्यकता पड़ती है।

प्रतिचयन के लिए प्रसम्भाव्यता सिद्धान्त बहुत महत्वपूर्ण होता है। इस सिद्धान्त से ही यह निर्णय लेने में सहायता मिलती है कि उन किन—किन इकाईयों का अध्ययन के लिए चयन किया जाय जो समस्त समष्टि का अध्ययन कर सकें।

समूह विशेष से प्रदत्त संकलन में दो प्रकार की त्रुटियों के पाये जाने की संभावना बनी रहती है — मापन की त्रुटियों तथा प्रतिदर्श चयन की त्रुटि मापन त्रुटि प्राप्तांको में पाई जाती है जब कि प्रतिदर्श चयन त्रुटि सांख्यिकी में होती है। प्रतिदर्श की सार्थकता ज्ञान करने के लिए प्रतिचयन त्रुटियों का प्रयोग किया जाता है।

किसी मनोवैज्ञानिक या शैक्षिक शोध का उद्देश्य कुछ विशेष परिकल्पनाओं की जाँच करना होता है। जिन सांख्यिकीय विधियो कें माध्यम से जो परिणाम प्राप्त किये है उनके आधार पर हम आगे का अनुमान लगा सकते है। इसके अतिरिक्त यह भी अनुमान लगाने का प्रयत्न करते है कि प्रतिदर्श का मध्यमान कहाँ तक सम्पूर्ण जनसंख्या के मध्यमान का प्रतिनिधित्व करता है। अन्य शब्दों में उसके कितना निकट है, या फिर उससे कितना दूर है तथा हम कितने विश्वास के साथ कह सकते है कि हमारे प्रयोग के अन्तर्गत प्राप्त मध्यमान सम्पूर्ण जनसंख्या के मध्यमान से मिलता–जुलता है कि नहीं।

7.2 उद्देश्य –

प्रस्तुत इकाई के अर्न्तगत प्रतिचयन, संयोजिक प्रतिचयन प्रमाणिक त्रुटि, विश्वास के स्तर, स्वतन्त्रता के अंश आदि के विषय में जानकारी प्राप्त करेंगें। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप जान सकेंगें कि

- प्रतिचयन किसे कहते हैं।
- याद्वच्छिक या संयोगिक प्रतिचयन क्या होता हैं और इसकी प्रविधि क्या है।
- प्रमाणित त्रुटि क्या है।
- सार्थकता का स्तर किसे कहते हैं।
- स्वतन्त्रता का अंश क्या है।
- प्रथम प्रकार एवं द्वितीय प्रकार की त्रुटि किसे कहते हैं।

7.3 प्रतिचयन :–

अनुसन्धानकर्ता अपने शोध के लिए जीव संख्या या समष्ठि से निश्चित संख्या में कुछ व्यक्तियों या वस्तुओं का चयन करता है। इस चयनित संख्या को ही व्यवहार परक अनुसन्धान में प्रतिदर्श कहा जाता है तथा प्रतिदर्श चयन करने की प्रविधि को प्रतिचयन या प्रतिदर्शन कहाँ जाता है। उदाहरण के लिए यदि कोई अनुसन्धानकर्ता किसी महाविद्यालय के 1000 छात्रों में से 100 को अपने शोधकार्य में सम्मिलित करने के उदेश्य से चयन करता है तब यह 100 छात्रों का चुना हुआ समूह प्रतिदर्श कहलायेगा तथा 1000 छात्रों की संख्या जीव संख्या अथवा समष्टि कहलायेगा। जिस प्रक्रिया के द्वरा 1000 छात्रों में से 100 छात्रों का चयन किया गया उस प्रक्रिया को प्रतिदर्शन कहा जाता हैं। करलिंगर (1986) के अनुसार "किसी जीव संख्या या समष्टि के प्रतिनिधि के रूप में किसी भी संख्या का चयन प्रतिचयन कहलाता है"।

7.4 यादृच्छिक या संयोगिक प्रतिचयन व्यवहारपरक :–

शोधों मे प्रयुक्त होने वाले प्रतिदर्शन को मूलतः तीन विस्तृत भागों में बॉटा जा सकता है।

1- प्रसम्भव्यता प्रतिचयन (Probability Sampling)
2- अर्द्धप्रसम्भाव्यता प्रतिचयन (Semi-Probabiloty Sampling)
3. अप्रसम्भान्यता प्रतिचयन (Non-Probability Sampling)

प्रसम्भाव्यता प्रतिचयन :–प्रसम्भाव्यता प्रतिचयन के दो आधार है (अ) सांख्यिकीय का नियम (ब) प्रसामान्य वितरण का सिद्धान्त। साख्यिकीय नियम के अनुसार यदि व्यापक समष्टि में से कुछ इकाईयाँ एक विशेष नियम के अनुसार चयन की जाये, तब चयन की गई इकाईयाँ, समस्त

समष्टि की विशेषताओं की प्रतिनिधि होती है। यही अवधारणा प्रसामान्य वितरण के सिद्धान्त की है, कि यदि एक समष्टि में से एक सुविधाजनक विशेष मात्रा में कुछ इकाईयाँ संयोग आधार पर चयन कर ली जाये, तब इस प्रकार चयन की गयी इकाईयां सम्बन्धित सम्पूर्ण जनसंख्या की प्रतिनिधि होती है। इसमें संयोग चयन होता है इसलिए इसे संयोगिक प्रतिचयन भी कहते हैं। प्रसम्भाव्यता प्रतिचयन में शोधकर्ता को निम्न शर्तों से सन्तुष्ट होना आवश्यक होता है।

1. जीवसख्ंया या समष्टि जिसमें प्रतिदर्श का चयन किया जाना है, इसका आकार अवश्य ज्ञात हो।
2. प्रतिदर्श की वांछित संख्या निर्दिष्ट हो।
3. जीव संख्या के प्रत्येक सदस्य को प्रतिदर्श में सम्मिलित किये जाने की संभावना बराबर बराबर हो।

   प्रसम्भाव्यता प्रतिचयन के आधार पर अपेक्षाकृत एक छोटे प्रतिदर्श द्वारा प्राप्त परिणाम प्रायः अधिक विश्वसनीय वस्तुनिष्ठ व वैज्ञानिक होते हैं। प्रसम्भाव्यता प्रतिचयन का दूसरा नाम संयोंगिक प्रतिचयन है। इसकी तीन प्रमुख विधियाँ हैं।

1. **लाटरी विधि :–** संयोगिक प्रतिचयन को यह एक सरल विधि है इस विधि के अर्न्तगत समष्टि के समस्त इकाईयों के नाम अथवा क्रमांक कागज के छोटे छोटे टुकड़ों पर लिख लिया जाता है फिर उन टुकड़ों को मोड़कर गोलिया बनाकर एक थैले में डालकर हिला डुला लिया जाता है। इसके उपरान्त, आँख पर पटटी बांधकर एक व्यक्ति से उन गोलियों मे से एक गोली निकालने के लिए कहाँ जाता है। तथा उसका नाम या क्रमांक नोट कर के पुनः अन्य गोलियों के साथ मिला दिया जाता है। इसी तरह से एक एक करके गोलियों की आवश्यक संख्या को थैले से निकाल लिया जाता है। इस प्रक्रिया के दौरान यदि एक गोली दूसरी बार आती है तब ऐसी स्थिति मे उसका नाम या क्रमांक नोट न करके पुनः उसी थैली में मिला दिया जाता है।
2. **ड्रम चक्र विधि :–**इसके अर्न्तगत इकाईयों का चयन लाटरी विधि जैसा ही होता है। इस विधि के अर्न्तगत समष्टि के इकाईयों को अनुक्रमांकित अथवा नामांकित करके गोलियों को ड्रम में डालकर घुमाया जाता है इसके पश्चात आंखों पर पटटी बॉधे एक व्यक्ति द्वारा एक गोली को लाटरी विधि से निकाला जाता है। इस विधि के अर्न्तगत एक दूसरी प्रक्रिया भी अपनायी जाती है। इस प्रक्रिया के अन्तर्गत ड्रम के ऊपर 0,1,2,3,4,5,6,7,8,9 के अंक लिखे होते है, जिसमें इकाई, दहाई, सैकड़ा, हजार, आदि की संख्या ड्रम में लगी हुई एक सुई के घूमाने से निश्चित की जाती है। इसके लिए सुई के घुमाने से निश्चित की जाती है, तथा जिस इकाई या दहाई आदि पर सुई रूकती है उस संख्या को लिख लिया जाता है। प्रतिदर्श की संख्या की आवश्यकतानुसार संख्याओं को लिख लिया जाता हैं। लेकिन इस विधि द्वारा विशेष कठिनाई उस समय उत्पन्न होती है जब किसी समष्टि से अधिक संख्या में इकाईयों का चयन करना पड़ता है।
3. **टिपेट की संयोगिक संख्याऐं :–**प्रसिद्ध सांख्यिकीविद् L.H.C. Tippet ने चार अंको की हजारों की संख्या में एक बहुत बड़ी तालिका तैयार की है। इसे टिपेट की संयोगिक संख्यायें कहाँ जाता है। इस विधि द्वारा प्रतिदर्श की इकाईयों के

चयन के लिए पहले समष्टि की सभी इकाई को क्रम के अनुसार लिख लिया जाता है। इसके पश्चात् टिपेट की दी गयी संयोगिक संख्याओं की सारणी के किसी एक पृष्ठ से प्रति दर्श की इकाईयों का चयन प्रारम्भ कर दिया जाता है। इस विधि के अर्न्तगत आवश्यकतानुसार इकाई, दहाई या सैकड़े वाली संख्याओं का चयन टिपेट सारणी की किसी एक संख्या से प्रारम्भ किया जा सकता है चयन का क्रम खड़ी या पड़ी संख्याओं का हो सकता है लेकिन जब किसी एक क्रम को अपना लिया जाता है तब फिर उसमें परिवर्तन नहीं किया जाता है।

संयोगिक प्रतिचयन के लाभ :–संयोगिक प्रतिचयन के निम्नलिखित लाभ है।

1. **पक्षपात से मुक्ति :–**संयोगिक प्रतिचयन में व्यक्तिगत पक्षपात के लिए कोई स्थान नहीं होता है क्योंकि प्रतिदर्श की इकाईयों का चयन पूर्णत संयोग के आधार पर होता है।
2. **समष्टि की पूर्णरूपेण प्रतिनिधित्व :–** इस प्रक्रिया के द्वारा चयन किया गया प्रतिदर्श अपनी समष्टि का पूर्ण रूप से प्रतिनिधित्व करता है।
3. **प्रसम्भाव्यकता सिद्धान्त पर आधारित :–** प्रसम्भाव्यता सिद्धान्त पर आधारित रहने के कारण प्रतिदर्श द्वारा प्राप्त निष्कर्षो की त्रुटि का माप सरलतापूर्वक किया जा सकता है।
4. **प्रतिदर्श की मानक त्रुटि का आंकन :–**प्रतिदर्श का चयन प्रसम्भाव्यकता सिद्धान्त पर आधारित होने के कारण प्राप्त सांख्यिकी मापों –मध्यमान, मध्यांक आदि की मानक त्रुटि के आंकन की गणना करने में विशेष सुविधा रहती है।
5. **समय व धन का कम खर्च :–**संयोगिक प्रतिचयन द्वारा चयन किये गये प्रतिदर्श की इकाईयों का स्वरूप प्रायः पूर्णतः अपनी समष्टि का पूर्ण रूपेण प्रतिनिधित्व करता है जिसके कारण से अपेक्षाकृत कम इकाईयों के चयन से भी अच्छे एवं गुणकारी निष्कर्ष प्राप्त किये जा सकते है।

संयोगिक प्रतिचयन की कठिनाइयाँ –

1. **चयन होने के पश्चात प्रतिदर्श की इकाईयों में संशोधन नही –**संयोगिक प्रतिदर्श के माध्यम से यदि एक बार इकाइयों के चयन को अन्तिम रूप देने के पश्चात किसी एक इकाई से मृत्यु बीमार, अहसहयोग, अनुपस्थिति आदि के कारण सम्पर्क संभव नही होता है उस स्थिति में शोधकर्ता को एक कठिन समस्या का सामना करना पड़ सकता है।
2. **समष्टि के पूर्ण ज्ञान की आवश्कता :–** इस पद्धति का उपयोग केवल सजातीय समष्टि पर ही हो सकता है। यदि समष्टि का स्वरूप विषमजातीय है, तब ऐसी स्थिति में इस विधि का उपयोग उपयुक्त नहीं होता है।
3. **अधिक व्यापक क्षेत्र में असुविधाजनक :–**अत्यधिक व्यापक अध्ययन क्षेत्र होने पर अध्ययनकर्ता को सम्पर्क की विशेष कठिनाई का सामना करना पड़ता हैं
4. **विषम भौगोलिक स्थितियों में सम्पर्क की कठिनाई :–**यह विधि विषम भौगोगिक स्थितियों के लिए अनुकूल नहीं है।

5. **अपूर्ण समष्टि में अनुपर्युक्त** :—यदि किसी कारण समष्टि से सम्बन्धित ज्ञान अपूर्ण हो, या सम्पूर्ण समष्टि का अध्ययन एक समय पर सम्भव न हो तब ऐसी स्थिति में संयोगिक प्रतिचयन पद्धति का उपयोग नही हो सकता है।

1. **अर्द्ध प्रसम्भाव्यता प्रतिचयन** :— अर्द्धप्रसम्भाव्यता प्रतिचयन की छः विधि है —
   1- क्रमानुसार प्रतिचयन (Systematic Sampling)
   2. स्तरानुसार प्रतिचयन (Stratified Sampling)
   3. पुंजानुसार प्रतिचयन (Cluster Sampling)
   4. द्विस्तरीय प्रतिचयन (Double Sampling)
   5. बहुस्तरीय प्रतिचयन (Multiple Sampling)
   6. अनुक्रमानुसार प्रतिचयन (Sequential Sampling)

उपरोक्त विधियों को अर्द्ध संयोगिक प्रतिचयन भी कहाँ जाता है। क्योंकि प्रतिदर्श के लिए चयन की गई इकाइयों का चयन पूर्णतः संयोगिक आधार पर नही होता है।

2. **अप्रसम्भाव्यता प्रतिचयन** :—इसमें इकाईयों के चयन का आधार प्रायः अध्ययनकर्ता की सुविधा या विक्षेषज्ञ के अध्ययन क्षेत्र का ज्ञान आदि हाता है। इसको कई नामों से जाना जाता है। जैसे—असंयोगिक प्रतिचयन, सुविधानुसार प्रतिचयन, निर्णयानुसार प्रतिचयन सुविधा विशेषज्ञानुसार प्रतिचयन। उपरोक्त आधार पर इस प्रतिचयन की निम्न विधियों का प्रयोग किया जाता है।
   1. खण्ड प्रतिदर्श
   2. यथांश प्रतिदर्श
   3. अवसरानुसार प्रतिदर्श
   4. सुविधानुसार प्रतिदर्श
   5. उद्धेश्यानुसार प्रतिदर्श
   6. निर्णयानुसार प्रतिदर्श
   7. स्वेच्छानुसार प्रतिदर्श

7.4 प्रतिचयन वितरण :—

किसी समूह पर कोई मनोवैज्ञानिक परीक्षण प्रशासित करने पर जो संख्यात्मक विवरण प्राप्त होते है, उसे प्राप्तांक की संज्ञा दी जाती है। प्राप्तांको के समूह को ही प्रदत्त कहते है। समूह विशेष से प्रदत्त संकलन में दो प्रकार के त्रुटियों के पाये जाने की संभावना होती है— मापन की त्रृटि तथा प्रतिदर्श चयन त्रुटि मापन त्रुटि प्राप्तांको में पायी जाती है। जबकि प्रतिदर्श चयन त्रुटि प्राप्तांको में पायी जाती है। मापन त्रुटि के सम्बन्ध में यह माना जाता है। कि परीक्षार्थियों को प्रशासित किये गये परीक्षण पूर्ण रूप से विश्वसनीय नही होते है। इसलिए कुछ छात्र शुद्ध अंक से अधिक और कुछ शुद्ध अंक से कम अंक प्राप्त करते है। इसी प्रकार जब बड़े समूह पर परीक्षण प्रशासित किया जाता है तो लघु समूह की तुलना में त्रुटियों के पाये जाने की संभावना कम रहती है मापन त्रुटि के निराकरण के लिए बड़ें नम्बर वाले समूह का प्रयोग करना चाहिए।

प्रतिचयन त्रुटि के सम्बन्ध में यह कहाँ जा सकता है कि यह सत्य है कि बड़े N वाले समूह के प्रयोग करने पर मापन त्रुटि का अभाव पाया जाता है परन्तु वास्तविकता यह है कि व्यवहार

परक विज्ञानों में अनुसंधान हेतु चयन किया गया प्रतिदर्श अपने जनसंख्या का वास्तविक प्रतिनिधित्व नही करता है। चूँकि प्रतिदर्श चयन त्रुटि पूर्ण रहता है इसलिए प्रतिदर्श की सांख्यिकी भी दोषमुक्त नही रहती है। जब हम समूह के बारे में कोई निष्कर्ष निकालना चाहते है तो हमें प्रतिदर्श की सांख्यिकी में पाये जाने वाले त्रुटि को कम करने की आवश्यकता होती है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए सांख्यिकी की सार्थकता अथवा सांख्यिकी की विश्वसनीयता की जांच किया जाता है।

मानक या प्रामाणिक त्रुटि :–

प्रतिदर्श वितरण पर सांख्यिकी का मान निर्भर करता है। मनोवैज्ञानिक शोधों तथा शैक्षिक शोधों में मानक त्रुटि एक बहुत हो महत्वपूर्ण सुम्प्रत्यय है मानक त्रुटि एक ऐसी सूचक संख्या है जो सांख्यिकी तथा प्राचल के बीच अन्तर को बतलाती हैं। गिलफोर्ड के अनुसार "मानक त्रुटि एक ऐसी सूचक संख्या होती है जिसके आधार पर हम लोग इस निष्कर्ष पर पहुचते है। कि प्रतिदर्श से प्राप्त सांख्यिकी उस अंक या मान से कितना भिन्न है जो हमें पूरे जीवनसंख्या को मापने से प्राप्त होता है।"

जब किसी प्रतिदर्श का मध्यमान ज्ञात करते है तो यह मूल्य किस सीमा तक विश्वसनीय है, दूसरे शब्दों में प्रतिदर्श मूल्य उस जनसंख्या के मूल्य से कितना कम या अधिक है जिससे उसको लिया गया है प्रतिदर्श और जनसंख्या के अन्तर को ही प्रामाणिक त्रुटि कहते है"

उदाहरण –मान लिया जाए कि किसी स्कूल में हाईस्कूल के छात्रो की कुल संख्या 1000 है। जिसका औसत बृद्धि–लब्धि (I.C.) 102 है। यदि हम संयोगिक रूप से 200 छात्रों के एक प्रतिदर्श का चयन कर लेते है। मान लिया जाय कि इन सभी छात्रों का औसत बृद्धि लब्धि 100 आता है। यहाँ पर सांख्यिकी तथा प्राचल का अन्तर 102–100 = 2 है जिसे मानक त्रुटि की संज्ञा दी जा सकती है।

प्रमाणित त्रुटि का महत्तव उस अवस्था में अधिक होता है जब जनसंख्या सामान्य रूप से वितरित होती है। प्रमाणित त्रुटि जितना ही कम होता है न्यायदर्श जनसंख्या का प्रतिनिधित्व उसी मात्रा में करता है। विभिन्न मापकों की प्रामाणिक त्रुटि ज्ञात करने के लिए निम्न सूत्रों का प्रयोग किया जाता है।

1. **बड़े प्रतिदर्श के मध्यमान की प्रमाणित त्रुटि ज्ञात करना :– उदाहरण** –एक विघालय के 50 छात्रों पर एक परीक्षण प्रशासित किया गया। यदि प्राप्ताकों का मध्यमान 77 और प्रमाणित विचलन 8 हो तो प्रामाणित त्रुटि की गणना कीजिए।

   सूत्र $SE_M = \sigma/\sqrt{N}$

   1. **छोटे प्रतिदर्श के मध्यमान को प्रामाणित त्रुटि ज्ञात करना** –जब प्रतिदर्श का आकार 30 या इससे कम होता है जब ऐसी स्थिति में संशोधित सूत्र का उपयोग करना पड़ता है।

      सूत्र $SE_M = \sigma/\sqrt{N-1}$

   2. **प्रतिदर्श के मानक विचलन की मानत्रुटि ज्ञान करना** :–यदि N=80 और प्रमाणिक विचलन 5.69 है तो मानकत्रुटि =

      सूत्र $SE_\sigma = \mathbf{-71}\sigma/\sqrt{N}$

      $= \mathbf{.71 X 5.69/\sqrt{80} = .452}$

3. **सहसंबंध गुणाक (r) की मानत्रुटि ज्ञान करना–**

यदि r = .89 N=80

तब SE_r या σ_r = (1-r)/)N or 1- r^2 /)N

= (1-.89) /) 80 = .012

.05 स्तर पर r (जनसंख्या की विश्वास सीमाएँ

r ±σ Units x or

.89 ± 1.96 x 0.12

01 स्तर पर r (जनसख्या) की विश्वास सीमायें

r ± Unit x σ^r

.89±2.59 x 0.12

= .85904 –92096

7.6. सार्थकता या विश्वास के विभिन्न स्तरः

मनोवैज्ञानिक अध्ययनों में शून्य उपकल्पना को स्वीकृत या अस्वीकृत करने के लिए अनुसन्धानकर्ता प्रायः सार्थकता के दो स्तरों प्रथम 0.05 तथा द्वितीय 0.01 का उपयोग करते है। शून्य उपकल्पना को स्वीकृत या अस्वीकृत करने के लिए जिस कसौटी (Criterian) का चुनाव किया जाता है उसे ही सार्थकता का स्तर (Level of Significance) कहाँ जाता है। किसी शून्य उपकल्पना को अस्वीकृत होने के लिए यह आवश्यक है कि प्राप्त सांख्यिकीय मान 5 प्रतिशत या 1 प्रतिशत पर दिये गये सांख्यिकीय मान के बराबर या अधिक हो। यदि किसी शून्य उपकल्पनाओं को 1 प्रतिशत या 0.01 स्तर पर अस्वीकृत कर दिया जाता है तब ऐसी स्थिति में वह स्वयं ही 0.05 या 5 प्रतिशत पर अस्वीकृत हो जाता है। लेकिन यदि कोई शून्य उपकल्पना (Null Hypothesis) 5 प्रतिशत या 0.05 स्तर पर अस्वीकृत होती है, तब ऐसी स्थिति में वह 1 प्रतिशत या 0.01 स्तर पर भी अस्वीकृत होगी ही ऐसा नहीं कहां जा सकता है। वह शून्य उपकलपना 0.01 स्तर पर अस्वीकृत हो भी सकती है और नहीं भी हो सकती है। शून्य उपकल्पना 0.05 स्तर पर जब अस्वीकृत होती है तब इसका अर्थ यह हुआ कि यदि संबन्धित प्रयोग या परीक्षण जिनसे आकड़े प्राप्त हुए हैं उसको 100 बार दोहराया जाय, तो उसमें से 5 बार शून्य उपकल्पना सत्य होगी और 95 बार असत्य होगी। इसी प्रकार से जब शून्य उपकल्पना को 0.01 स्तर पर अस्वीकृत किया जाता है तब इसका अर्थ यह हुआ कि यदि प्रयोग या परीक्षण जिसके द्वारा प्रदत्त प्राप्त हुए है को 100 बार दोहराया जाये तो उसमें से एक बार शून्य उपकल्पना सत्य होगी और 100 में से 99 बार असत्य होगी। शोधकर्त्ता 100 बार में से मात्र 1 बार सही होने की स्थिति में इसे और अधिक विश्वास के साथ अस्वीकृत करने में सक्षम हो जाता है। सार्थकता का यह स्तर उच्चकोटि का माना जाता है और इसका उपयोग विशेषतः प्रायोगिक अध्ययनों में किया जाता है, क्योंकि प्रायोगिक अध्ययनों में स्वतन्त्र चर तथा आश्रित चर के सम्बन्ध में सार्थकता का स्तर प्रायः उच्चश्रेणी का ही होना चाहिए। सामान्य अध्ययनों में, जिनमें मनोवैज्ञानिक, शैक्षिक तथा समाज वैज्ञानिक अध्ययन सम्मिलित है, और इसके अतिरिक्त साधारण प्रायोगिक

अध्ययन भी सम्मिलित है, उस स्थिति में 5 प्रतिशत विश्वास या सार्थकता का स्तर सन्तोषजनक रहता है, क्योंकि यहाँ पर प्रायः उच्च कोटि की परिशुद्धता के स्तर की इतनी अधिक आवश्यकता नहीं रहती है। उपरोक्त सभी क्षेत्रों में अध्ययन व अनुसन्धानों में 5 प्रतिशत विश्वास या सार्थकता का स्तर व्यावहारिक व वैज्ञानिक मानदण्ड से स्वीकृत रहता है।

विश्वास के एक और स्तर 0.001 का उपयोग किया जाता है इस सार्थकता के स्तर का उपयोग प्रायः ऐसे अनुसन्धानों में किया जाता है जिनमें वैज्ञानिक परिशुद्धता की अत्यन्त कठोरतम् स्तर की आवश्यकता होती है। जब एक नई औषधि के बड़े पैमाने पर निर्माण की आवश्यकता हो तब उसकी प्रभावशीलता (Effectiveness) की विश्वास का स्तर प्रायः 0.001 होना अत्यन्त आवश्यक होता है। विश्वास के इस स्तर के अनुसार किसी एक औषधि का प्रभाव 1000 में से 999 स्थितियों में प्रायः होकर रहेगा, केवल 1000 में से एक संयोग ऐसा आ सकता है, जबकि औषधि का अपेक्षित प्रभाव न देखने में आयें। स्पष्टतः विश्वास का यह स्तर अत्यन्त उच्च कोटि का होता है।

सिग्मा दूरियों से हमें विश्वास के विभिन्न स्तरों का ज्ञान होता है जैसे $M\pm1.96\ \sigma$ के अन्तर्गत किसी एक वितरण की 95 प्रतिशत स्थितियाँ आ जाती है। इसका अर्थ है कि 95 प्रतिशत स्थितियों में हमारा मध्यमान $M\pm1.96\ \sigma$ की सीमाओं के अन्तर्गत रहेगा और हमारे विश्वास की सीमायें $M\pm1.96\ \sigma$ के अन्तर्गत रहेगी और इस सम्बन्ध में हमारे विश्वास का स्तर 5 प्रतिशत (0.05) होगा। इसी प्रकार से $M\pm2.58\ \sigma$ की सीमाओं के अन्तर्गत किसी एक वितरण की 99 प्रतिशत स्थिमियाँ (cases) आ जाती है, जिसका अर्थ यह है कि हमारा वास्तविक मध्यमान 99 प्रतिशत स्थितियों में $M\pm2.58\ \sigma$ की सीमाओं के अन्तर्गत रहेगा।

उदाहरणार्थ यदि हमारे प्रतिदर्श का मध्यमान 105 है एवं σm_1 है तब 99 प्रतिशत दशाओं में हमारा वास्तविक मध्यमान–

= 105 + 2.58 (1) = अर्थात $105 + 2.58 \times 1 = 107.58$

तथा = 105 – 2.58 (1) = अर्थात $105 - 2.58 \times 1 = 102.42$

अर्थात 102 एवं 108 (107.58) की विश्वास आश्रित सीमाओं के अन्तर्गत रहेगा। दूसरे शब्दों में 1 प्रतिशत सार्थकता के स्तर पर हम यहाँ यह अनुमान निकाल सकते है कि सम्बन्धित जनसंख्या का वास्तविक मध्यमान 102.42 तथा 107.58 के अन्तर्गत रहेगा।

7.7 प्रसम्भाव्यता सिद्धान्त एवं विश्वास के विभिन्न स्तरों की विवेचना–

किसी एक घटना के घटित होने की प्रसम्भाव्यता (Probability) की व्याख्या विभिन्न स्तरों के आधार पर ही की जाती है। एक उदाहरण के द्वारा इसको स्पष्ट किया जा सकता है। कल्पना कीजिए कि हमारे पास एक डिब्बे में 100 गोलियाँ है, उनमें से 90 गोलियाँ सफेद रंग की है, और 10 गोलियां काली रंग की है। सभी गोलियों का आकार, भार और गोलाई एक समान है। अब यदि हम सभी गोलियों को अच्छी तरह से मिला देते है। अब यदि आँख बंद करके बारी–बारी से एक–एक करके डिब्बे में से गोली निकालते है तब प्रश्न यह उठता है कि प्रत्येक बार निकाले जाने वाली

गोली का रंग सफेद है या काला है। मान लिजिए कि प्रत्येक बार गोली के रंग के बारे में हमारा उत्तर सफेद होता है तब ऐसी स्थिति में प्रश्न यह उठता है कि गोली के सफेद रंग की होनेकी क्या प्रायिकता है। चूँकि डिब्बे में 100 गोलियां में से 90 गोली सफेद है तथा शेष 10 काले रंग की है तब 10 में से 9 बार हमारा ठीक उत्तर हो सकता है गोली का रंग सफेद होगा। अब मान लिजिए कि डिब्बे में से एक–एक करके 100 गोली निकाली जाय और प्रत्येक बार हमारा उत्तर सफेद गोली का हो तब हमारा यह उत्तर 90% स्थितियों में सही होगा और 10% स्थितियों में गलत भी हो सकते है। दूसरे शब्दों में सफेद रंग की प्रसम्भाव्यता यहाँ पर 90 होगी अर्थात $P = .90$ और गलत होने की प्रसम्भाव्यता 10 प्रतिशत अर्थात $P = .10$ होगी। 100 में से जितने प्रतिशत हमारे गलत रहने की प्रसम्भाव्यतारहती है उसे हम विश्वास का स्तर कहते है। उपरोक्त उदाहरण में 100 में से 10 बार गलत रहने की प्रसम्भाव्यताहै अतः यहाँ पर हमारे विश्वास का स्तर 10 प्रतिशत है अर्थात 0.1 के स्तर पर है।

इसी प्रकार से 100 में से 95 गोली का रंग सफेद और 5 गोली का रंग काला है और यदि उपरोक्त प्रक्रियाँ को यहाँ पर अपनाया जाय तब सफेद रंग की गोली के निकलने की प्रसम्भाव्यता 95 प्रतिशत अर्थात $P = .95$ और उसके सफेद रंग न होने की प्रसम्भाव्यता 100 में से 5 है अर्थात $P = .05$ होगी। ऐसी स्थिति में सांख्यिकी भाषा में हम कह सकते है कि यहाँ पर हमारे विश्वास का स्तर 5 है अर्थात .05 है।

उपरोक्त उदाहरण की तरह हम 1 प्रतिशत विश्वास के स्तर (.01) तथा 0.1 प्रतिशत विश्वास के स्तर (.001) की व्याख्या भी कर सकते है।

7.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

निर्देश : अपना उत्तर नीचे दिए गऐ स्थान में लिखें। इस इकाई के अंत में दिये गए उत्तरों से अपने उत्तर की जांच करें।

- 0.05 सार्थकता के स्तर क्या अर्थ होता हैं?

- 0.01 सार्थकता के स्तर का क्या अर्थ है?

- 0.001 सार्थकता के स्तर से आप क्या समझते है?

7.9 स्वतन्त्रता के अंश (Degree of Freedom) :–

प्रायः एक प्रतिदर्श की संख्या जितनी अधिक होती है, उसका मध्यमान भी अपने प्राचल (True Mean) से उतना ही निकट रहता है, और उतना ही अपेक्षाकृत अधिक विश्वसनीय रहता है। इस आधार पर एक प्रतिदर्श के मध्यमान की मानक त्रुटि का मान ही प्रतिदर्श की विश्वसनीयता की कसौटी बन जाता है, और यहाँ हमें प्रसम्भाव्यतासिद्धान्त के आधार पर प्रतिदर्श के मध्यमान की मात्रा की विवेचना प्रायः विश्वास के मानक स्तरों 5 प्रतिशत तथा 1 प्रतिशत पर की जाती है तथा स्वतन्त्रता के अंशो (Degree of Freedom) को भी ध्यान में रखना पड़ता है। इस तर्क के आधार पर यदि एक बड़े प्रतिदर्श की मानक त्रुटि का मान 1.96 रहता है तब इससे यह पता लगता है कि प्रदिर्श का मानक विचलन का मान एक ऐसी क्रान्तिक स्थिति पर पहुँच गया है कि जहाँ पर इतना मानक विचलन का मान 95 प्रतिशत स्थितियों में अवश्य आयेगा। अतः ऐसा मध्यमान अपनी जनसंख्या का प्रतिनिध्यात्मक नहीं है, और वह इस कारण अविश्वसनीय है। अतः मानक त्रुटि का मान जैसे–जैसे बढ़ता जाता है वेसे ही अधिक विश्वास के स्तर पर प्रतिदर्श के मध्यमान को अस्वीकृत करना पड़ता है। छोटे प्रतिदर्शो के मध्यमान की विश्वसनीयता की जाँच करने के लिए स्वतन्त्रता के अंशो को अवश्य देखना पड़ता है। वैसे बड़े प्रतिदर्शो में भी सवतऩ्ता के अंशो पर मानक त्रुटि के सार्थक मान को ज्ञात करना परिशुद्धता के दृष्टिकोण से आवश्यक रहता है लेकिन बहुत आवश्यक नहीं होता है। परन्तु छोटे आकार वाले प्रतिदर्शों में ये मानक मान स्वतऩ्ता के अंशो पर दिये गये आवश्यक तथा सार्थक मानो से अपेक्षाकृत बहुत भिन्न होते है और उनका प्रभाव अन्तिम गणना पर बहुत अधिक पड़ता है। इस कारण छोटे प्रतिदर्शो में मानक त्रुटि के सार्थक मान को सम्बन्धित स्वतन्त्रता के अंशो पर ही देखा जाता है।

स्वतन्त्रता के अंश से तात्पर्य प्राप्ताकों को स्वतन्त्र रूप से परिवर्तित होने से होता है। उदाहरण के लिए मान लिजिए कि 6प्राप्तांक है और इन सभी 6 प्राप्तांको का माध्य (Mean) 10 होता है। ऐसी स्थिति में 6^{th}प्राप्तांक शेष 5 प्राप्तांको के साथ मिलकर इस प्रकार का समायोजन करेगा कि माध्य हमेशा 10 ही होगा। मान लिजिए कि 5 प्राप्तांक इस प्रकार है– 10, 12, 18, 13 तथा 3 है। अब ऐसी स्थिति में माध्य को 10 होने के लिए 6^{th}प्राप्तांक को अवश्य ही 4 होना होगा। एक दूसरा उदाहरण लिजिए– यदि प्रथम पाँच प्राप्तांक 2, 8, 4, 10 तथा 10 है तो ऐसी स्थिति में 6^{th}को 2 होगा। कहने का अर्थ यह है कि प्रथम पांच प्राप्तांक तो कुछ भी हो सकता है किन्तु 6^{th}प्राप्तांक का अंक अपने आप पूर्व निश्चित हो जाता है क्योंकि उपरोक्त उदाहरण में माध्य प्रत्येक में 10 है। अतः यहा स्वतन्त्रता के अंश $N - 1$ यानि 6–1 = 5 के बराबर है।

7.9.1 मानक त्रुटि की सार्थकता के निर्धारण में स्वतन्त्रता के अंशो का महत्व–

किसी प्रतिदर्श के मध्यमान की विश्वसनीयता की जाँच उसकी मानक त्रुटि के मान के आधार पर की जाती है, और मानक त्रुटि की सार्थकता की जाँच प्रतिदर्श की संख्या (N) अथवा स्वतन्त्रता के अंशों के आधार पर भी जाती है, कम से कम छोटे प्रतिदर्शों द्वारा अध्ययन में स्वतन्त्रता के अंशों का विशेष महत्व रहता है। अतः छोटे प्रतिदर्शों की गणना में स्वतन्त्रा के अंशो का महत्व बढ़ जाता है।

यह माना जाता है कि जब किसी एक वितरण की संख्या (N) 30 से कम होती है, तब वह एक प्रसामान्य वितरण (Normal Distribution) नहीं होता। यही कारण है कि छोटे प्रतिदर्श में मध्यमान से विचलन की दूरियों पर प्रसामान्य वितरण के सामान्य नियम पूरी तरह लागू नहीं होते है। जैसे– प्रसामान्य वितरण में $M \pm 1.96\ \sigma$ के अन्तर्गत एक वितरण की 95.44 प्रतिशत संख्या आ जाती है, लेकिन यदि हमारा प्रतिदर्श छोटा है, और मान लिजिए कि उसकी संख्या 25 है तब t (टी) सारणी के अनुसार उस स्थिति में मध्यमान से सिग्मा (σ) दूरी $M \pm 1.96$ न होकर $M \pm 2.06\ \sigma$ हो जाती है। इसी तरह से प्रसामान्य वितरण में एक वितरण की $M \pm 2.58\ \sigma$ के अन्तर्गत 99 प्रतिशत संख्या आ जाती है, परन्तु छोटे प्रतिदर्श के लिए यह दूरी $M \pm 2.58\ \sigma$ न रहकर $M \pm 2.80\ \sigma$ हो जाती है। इसका मुख्य कारण यह है कि जब एक प्रतिदर्श की संख्या छोटी रहती है तब प्रतिदर्श की इकाईयों का विक्षेपण (Dispersion) अपने मध्यमान से अपेक्षाकृत दूर–दूर रहता है परन्तु प्रसामान्य वितरण में अधिकतर इकाईयाँ अपने मध्यमान के आस–पास ही रहती है। यही कारण है कि छोटे प्रतिदर्श में वितरण वक्र मध्य में चपटा रहता हैं।

जैसा कि यह हमें मालूम है कि प्रसामान्य विवरण में वितरण वक्र(Distribution Curve) घंटाकार रहता है, तथा उसमें मध्यमान से थोड़ी ही सिग्मा दूरी पर काफी संख्या आ जाती है। यही कारण है कि बड़े प्रतिदर्शों में विश्वास के विभिन्न स्वीकृत स्तरों पर– जैसे 5%, 2% तथा 1% विश्वास के स्तरों पर प्रायः जहाँ मानक त्रुटि के मान क्रमशः 1.96, 2.33 तथा 2.58 निश्चित से ही रहते है, इसके विपरीत छोटे प्रतिदर्शों के लिए ये मान (Values)विभिन्न स्वतन्त्रता के अंशो पर बहुत भिन्न–भिन्न होते है। इसीलिए परिशुद्धता के लिए मानक त्रुटि की सार्थकता की जाँच सम्बन्धित स्वतन्त्रता के अंशो पर ही की जानी चाहिए छोटे प्रतिदर्शों में करना तो बहुत ही आवश्यक है।

7.9.2 सह–सम्बन्धित समूह में स्वतन्त्रता के अंशो की गणना–

जब एक ही समूह को एक परीक्षण दो बार दिया जाता है, तब उस स्थिति में स्वतन्त्रता के अंशो (d.f.) की गणना दोनों समूहों की संख्या, प्रथम स्थिति वाले समूह की संख्या तथा द्वितीय स्थिति वाले समूह की संख्या के आधार पर गणना नहीं की जाती है। ऐसी स्थिति में केवल एक ही समूह की संख्या के आधार पर स्वतन्त्रता के अंशो (d.f.) की गणना की जाती है। जैसे– यदि प्रथम स्थिति में संख्या 20 है तब यहाँ पर d.f. का सूत्र निम्न होगा।

$$d.f. = (N - 1)$$

इसके अतिरिक्त, यदि 40 व्यक्तियों को किसी एक विशेष आधार पर सह–सम्बन्धित करके दो समतुल्यात्मक समूहो (Matched Groups) में विभाजित कर दिया जाता है, उस स्थिति में भी d.f. का सूत्र दोनों समूहों के लिए n-1 ही रहेगा जैसे– 20–1= 19 होगा। ऐसा प्रायः उस स्थिति में भी होता है, जब कि दो समूहों को समरूप युग्मों के आधार पर तुल्यात्मक किया जाता है।

लेकिन, यदि एक समूह को किसी एक आधार पर तुल्यात्मक (Match) न करके संयोग (Random) के आधार पर दो समान समूहों में विभाजित करते है तब ऐसी स्थिति में d.f. की गणना के लिए निम्न सूत्र का प्रयोग करते हैः–

$$d.f. = (N_1 - 1) + (N_2 - 1) - 1$$

यदि 40 व्यक्तियों को दो समान समूहो में संयोग के आधार पर विभाजित किया जाता है तब d.f. = (20 – 1)+(20 – 1) – 1 ± 37 होगा।

जब दो समूह किसी एक आधार पर समरूप रहते है, उससे उनकी विचलनशीलता कम हो जाती है, इससे उनकी मध्यमान की मानक त्रुटि (SEm) तथा उसके अनुसार, अन्तर की मानक त्रुटि (SEd) का मान भी कम हो जाता है। SEd के मान के कम हो जाने से क्रान्तिक अनुपात (Critical Ratio) का मान बढ़ जाता है, ऐसी स्थिति में दो मध्यमानों के अन्तर की सार्थकता को निश्चित करने के लिए कठोर माप दण्ड अपनाया जाता है और d.f. की मात्रा को कम करना पड़ता है, क्योंकि d.f. का मान जितना कम होगा, सार्थकता के लिए उतना ही अधिक C.R. के मान की आवश्यकता पड़ती है। यही कारण है कि सह–सम्बन्धित समूहों में d.f. की संख्या को सामान्यतः कम रखा जाता है।

उदाहरण 1 –

एक तात्कालिक स्मृति (Immediate Memory) के परीक्षण में 21 बालकों को आयु के आधार पर तीन समूहों A, B तथा C में विभाजित किया गया। परीक्षण में प्राप्त उनके अंक नीचे दिये गये हैं। बताइये क्या यहाँ आयु के आधार पर तीनों समूह एक–दूसरे से सार्थक रूप से भिन्न हैं ?

समूह A	समूह B	समूह C	
3	4	5	
5	5	5	
3	3	5	
1	4	1	
7	9	7	$\sum X = 96$
3	5	3	$N = 21$
6	5	7	
$\sum X_1 = 28$	$\sum X_2 = 35$	$\sum X_3 = 33$	
$N_1 = 7$	$N_2 = 7$	$N_3 = 7$	

हल–(A) **संशोधन** $= (\sum X)^2/N$

$$= (96)^2/21$$

$$= 9216/21$$

$$= 438.86$$

(B) समस्त वर्गों का योग (Total Sum of Squares)

$$= (X_1^2 + X_1^2 + \ldots\ldots\ldots\ldots + X_2^2 + X_2^2 + \ldots\ldots\ldots\ldots + X_3^2 \; X_3^2) - C$$

$=3^2+5^2+3^2+1^2+7^2+3^2+6^2+4^2+5^2+3^2+4^2+9^2+5^2+5^2$
$+5^2+5^2+5^2$
$+1^2+7^2+3^2+7^2– C$
=
9+25+9+1+49+9+36+16+25+9+16+81+25+25+
25+25+25 +1+49+9+49– C
= 518 – 438.86
= 79.14

(C) समूहों के मध्य में वर्गों का योग (Sum of Squares between Groups)

$=(\sum X_1)^2/N_1 + (\sum X_2)^2/N_2+ (\sum X_3)^2/N_3 – C$
$=(28)^2/7+ (35)^2/7+ (33)^2/7– 438.86$
=784/7+ 1225/7+ 1089/7– 438.86
=3098/7 – 438.86
=442.57 – 438.86
=3.71

(D) समूहों के मध्य में वर्गों का योग (Sum of Squares within Groups)

$=SS_{tot} – SS_{bg}$
=78.14– 3.7=75.43

Sources of Variation	**d.f**	**Sum of Squares**	**Mean Square or (Variance)**
Between Groups Within Groups	2 18	3.71 75.44	1.85 4.19
Total	20	79.15	

F = $\frac{\text{Mean Square between Groups}}{\text{Mean Square within Groups}}$

= $\frac{1.85}{4.19}$

= 0.44

d.f Between Groups = (K – 1) = (3 – 1) = 2
d.f Within Groups (N_{tot} – K) = (21 – 3) = 18
5% स्तर पर सार्थकता के लिए F का मान = 3.55
1% स्तर पर सार्थकता के लिए F का मान = 6.01

प्रस्तुत समस्या में F का मान ऊपर दिये गये दोनों स्तरों पर सार्थकता के लिए आवश्यक मानों से बहुत कम है अतएव प्रस्तुत समस्या में निराकरणीय परिकल्पना सत्य

(Tenable) है, अर्थत् तीनों समूहों A, B तथा C के बालकों में सार्थक अन्तर नहीं है तथा सब बालक एक ही समष्टि (Population) का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं।

उदाहरण 2–

तात्कालिक स्मृति (Immediate Memory) का एक परीक्षण एक कक्षा के 10 लड़कों व 10 लड़कियों को दिया गया। उनके परिणाम नीचे दिये गये है।

लड़कों की तात्कालिक स्मृति का विस्तार	लड़कियों की तात्कालिक स्मृति का विस्तार
7	7
5	6
6	5
5	8
6	9
6	8
7	8
9	9
8	6
6	9

यहाँ अध्ययनकर्त्ता ने निराकरणीय परिकल्पना (Null Hypothesis) की रचना की है। बताइये क्या अध्ययनकर्त्ता की परिकल्पना यहाँ सत्य है?

हल–

Group A	Group B	d_1	d_2	d_1^2	d_2^2
7	7	+0.5	–0.5	.25	.25
5	6	–0.5	–1.5	2.25	2.25
6	5	–0.5	–2.5	.25	2.25
5	8	–1.5	+0.5	2.25	.25
6	9	–0.5	+1.5	.25	2.25
6	8	–0.5	+0.5	.25	.25
7	8	+0.5	+0.5	.25	.25
9	9	+2.5	+1.5	6.25	2.25
8	6	+1.5	–1.5	2.25	2.25
6	9	–0.5	+1.5	.25	2.25
ΣX_2=65	**ΣX_2=75**			**Σd_1^2=14.50**	**Σd_2^2=18.50**

$M_1 = \frac{65}{10} = 6.5$ $\qquad$ $M_2 = \frac{75}{10} = 7.5$

t–अनुपात (t-Ratio) का सूत्रः

$$t = \frac{M_1 - M_2}{\sqrt{\left(\frac{\Sigma d_1^2 + \Sigma d_2^2}{N_1 + N_2 - 2}\right)\left(\frac{N_1 + N_2}{N_1 N_2}\right)}}$$

यहाँ
$$t = \frac{6.5 - 7.5}{\sqrt{\left(\frac{14.50 + 18.50}{10 + 10 - 2}\right)\left(\frac{10 + 10}{10 \times 10}\right)}}$$

$$= \frac{1}{\sqrt{\left(\frac{33}{18}\right)\left(\frac{20}{100}\right)}}$$

$$= \frac{1}{\sqrt{1.8333 \times .2}}$$

$$= \frac{1}{1.354 \times .447}$$

$$= \frac{1}{.605} \quad 1$$

= 1.66 (दो दशमलव तक)

यहाँ Degrees of Freedom $= (N_1 - 1) + (N_2 - 1)$

$= (10 - 1) + (10 - 1) = 18$

18 d.f. पर सार्थकता के लिए t का आवश्यक मान :

5% विश्वास के स्तर पर = 2.10

1% विश्वास के स्तर पर = 2.88

प्रस्तुत उदाहरण में प्राप्त t का मान उपरोक्त दानों मानों से बहुत कम है, अतएव यहाँ निराकरणीय परिकल्पना सत्य है, और यह मानना पड़ेगा कि लड़कों व लड़कियों के तात्कालिक स्मृति के विस्तार में सार्थक अन्तर नहीं है।

7.9.3 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न–

निर्देश : अपना उत्तर नीचे दिए गऐ स्थान में लिखें। इस इकाई के अंत में दिये गए उत्तरों से अपने उत्तर की जांच करें।

- 5 प्रतिशत विश्वास के स्तर पर सार्थकता का मान कितना होता है।

- 1 प्रतिशत विश्वास के स्तर पर सार्थकता का मान कितना होता है।

- यदि 10 संख्याओं का माध्य 12 है और उनमें से 9 संख्याएँ क्रमशः 11, 13, 14, 12, 9, 8, 7, 10 व 18 है तब अन्तिम संख्या कितनी होगी?

7.10 प्रथम प्रकार एवं द्वितीय प्रकार की त्रुटि (Type I and Type II Errors) :

सांख्यिकीय विश्लेषण में कई प्रकार की त्रुटियाँ पाई जाती है जिसमें प्रथम प्रकार एवं द्वितीय प्रकार की त्रुटि प्रमुख है। इन दोनों प्रकार की त्रुटियों के कारण प्रायः शोधकर्त्ता के मनमाने विश्वास के स्तर होते है। मध्यमानों के अन्तर की सार्थकता के परीक्षण के लिए अध्ययनकर्त्ता अपने अध्ययनों में विश्वास के दो स्तरों क्रमशः 5 प्रतिशत विश्वास के स्तर तथा 1 प्रतिशत विश्वास के स्तर का प्रयोग करता है। कभी–कभी शोधकर्ता निराकरणीय (शून्य) परिकल्पना (Hypothesis) को गलत सिद्ध करने के लिए अपने विश्वास के स्तर को अपनी इच्छा से ही नीचा कर देता है। सामान्यतः शून्य उपकल्पना को 5 प्रतिशत विश्वास के नीचे के स्तर पर अस्वीकृत नहीं किया जाता है परन्तु यदि शोधकर्ता अपने आकड़ों के आधार पर यह देखता है कि शून्य उपकल्पना को 10 प्रतिशत विश्वास के स्तर पर अस्वीकृत किया जा सकता है और वह यदि ऐसा करता है तब वह शून्य उपकल्पना को अस्वीकृत करने में प्रथम प्रकार की त्रुटि (Type I Error) करता है दूसरे शब्दों में शोधकर्त्ता जब शून्य उपकल्पना को सत्य रहने पर भी उसे अस्वीकृत कर देता है या उसे अस्वीकृत कर देना पड़ता है तो इसे प्रथम प्रकार की त्रुटि कहां जाता है। इस प्रकार की त्रुटि को अल्फा त्रुटि (Alfa Error) भी कहाँ जाता है। स्पष्टतः ऐसा करना एक त्रुटि है, क्योंकि विश्वास के स्तर की स्थापना उपकल्पना की रचना के समय ही हो जाती है, इस कारण से उसमें परिवर्तन करना उचित नहीं होता हैं फिर भी यदि ऐसा किया जा रहा है तब यह उस अध्ययन में प्रथम प्रकार की त्रुटि मानी जाती है। गैरट (1967) के शब्दों में, "Type I errors are made when we reject a nul hypothesis, by making a difference significant although no true difference exists." इसमें शून्य परिकल्पना सत्य होती है, लेकिन अस्वीकृत कर दी जाती है।

इसके ठीक विपरीत द्वितीय प्रकार की त्रुटि (Type II Error) उस समय होती है जब अनुसंधानकर्त्ता गलत उपकल्पना को अस्वीकार नहीं करता है। ऐसी स्थिति में अनुसंधानकर्ता अनावष्यक रूप से अपने विश्वास स्तर को इतना ऊँचा कर देता है कि शून्य उपकल्पना 0.05 और 0.01 विश्वास स्तर पर असत्य होते हुए भी सत्यमान ली जाती है। दूसरे शब्दों में जहाँ शोधकर्त्ता शून्य उपकल्पना को गलत रहने पर भी उसे स्वीकार करता है या स्वीकार करने के लिए बाध्य होता है। इस तरह की त्रुटि को द्वितीय प्रकार की त्रुटि (Type II Error) कहाँ जाता है। इसको बीटा त्रुटि (Beta-Error) भी कहाँ जाता है। उदाहरण के लिए, टी की गणना मूल्य 0.05 तथा 0.01 स्तर पर सार्थक है परिणाम स्वरूप शून्य उपकल्पना अस्वीकृत हो जायेगी। परन्तु जब अनुसंधानकर्त्ता विश्वास स्तर को 0.05 तथा 0.01 से बढ़ाकर 0.001 कर देता है तब ऐसी स्थित में टी (t) का मूल्य निरर्थक हो जायेगा और शून्य उपकल्पना सत्य सिद्ध हो जायेगी। यहाँ स्पष्ट रूप से सार्थक अन्तर देखने में आ रहा है, परन्तु फिर भी शोधकर्त्ता शून्य उपकल्पना को अस्वीकृत नहीं करता।

गैरेट के शब्दों में, *"Type II errors made when we accept a null hypothesis by making a difference not significant, when a true difference actually exists."*

7.10.1 प्रथम एवं द्वितीय प्रकार की त्रुटि को दूर करने के उपाय–

उपरोक्त दोनों प्रकार की त्रुटियों को यथा संभव नियन्त्रित करने का प्रयास करना चाहिए। वैज्ञानिक अध्ययनों में दोनों प्रकार की त्रुटियों के भ्रामक परिणाम हो सकते है। अतः प्रथम प्रकार की त्रुटि को दूर करने के लिए अध्ययनकर्त्ता को चाहिए कि वह अपने विश्वास के स्तर को नीचा न करे, बल्कि अपने अध्ययन की पुनरावृत्ति करे या फिर अपने निरीक्षणों की संख्या (N) में वृद्धि करें। निरीक्षणों की संख्या में वृद्धि करने से प्रतिदर्श की मानक त्रुटि घट जाती है, तथा प्रतिदर्श की विश्वसनीयता बढ़ जाती है। ऐसा करने से उसे अपने परिणामों को कम से कम 5 प्रतिशत विश्वास के स्तर पर सार्थक बनाने में सहायता मिलेगी और वह अपने अध्ययन में प्रथम प्रकार की त्रुटि से बच जायेगा। प्रथम प्रकार की त्रुटि को कम करने का एक तरीका यह भी है कि अल्फा स्तर को 0.01 या 0.001 पर रखा जाए। ऐसी स्थिति में स्वभावतः प्रथम प्रकार की त्रुटि की संभावना क्रमशः 100 में से 1 बार तथा 1000 में 1 बार होगी जोकि नगण्य है, परन्तु इस प्रकार से जब हम प्रथम प्रकार की त्रुटि को कम करने का प्रयास करते है तो साथ ही साथ द्वितीय प्रकार की त्रुटि के अधिक हो जाने की संभावना में वृद्धि हो जाती है।

द्वितीय प्रकार की त्रुटि प्रायः कम प्रभावशील होती है। परन्तु यदि किसी एक रोग के इलाज के लिए कोई गुणकारी औषधि उपलब्ध न हो, और नई औषधि के निर्माण को इस आधार पर अस्वीकृत कर दिया कि इसके उपयोग द्वारा परिणाम केवल 0.01 विश्वास के स्तर पर ही सार्थक है परन्तु 0.001 विश्वास के स्तर पर सार्थक नहीं है, तब यहाँ पर द्वितीय प्रकार की त्रुटि अवश्य हानिकारक होगी। क्योंकि इससे एक अच्छी प्रभावशाली औषधी का उपयोग सम्भवतः न हो सकेगा। जबकि व्यवहारिक रूप से उसका उपयोग होना चाहिए था। इसके विपरीत ऐसी परिस्थातियों में विश्वास के स्तर को उच्च श्रेणी का अवश्य होना चाहिए जब कि शून्य उपकल्पना के अस्वीकृत हो जाने के दुष्परिणाम निकलते हो।

सामान्यतः सामाजिक अध्ययनों में 5 प्रतिशत विश्वास का स्तर सन्तोषजनक रहता है, जबकि उच्च श्रेणी के वैज्ञानिक अध्ययनों में 1 प्रतिशत विश्वास का स्तर आवश्यक होता है। 1 प्रतिशत विश्वास के स्तर को अधिक ऊँचा–जैसे 0.005 अथवा 0.001 उसी स्थिति में उठाना चाहिए जबकि शून्य उपकल्पना के अस्वीकृत किये जाने के परिणाम अत्यन्त गंभीर होने की संभावना अधिक हो।

7.10.2 स्व-मूल्यांकन हेतु प्रश्न :–

निर्देश : अपना उत्तर नीचे दिए गऐ स्थान में लिखें। इस इकाई के अंत में दिये गए उत्तरों से अपने उत्तर की जांच करें।

- अल्फा त्रुटि किस प्रकार की त्रुटि को कहते हैं?

- बीटा त्रुटि किस प्रकार की त्रुटि को कहते हैं?

- अध्ययनकर्त्ता अपने निरीक्षणों (N) में वृद्धि करके किस प्रकार की त्रुटि को कम कर सकता है?

7.11 सारांश–

किसी भी शून्य उपकल्पना को स्वीकृत या अस्वीकृत करने के लिए शोधकर्त्ता प्रायः दो विश्वास के स्तरों का चयन करता है। मनोविज्ञान तथा शिक्षा के क्षेत्र में अनुसंधानकर्त्ता 0.05 तथा 0.01 सार्थकता स्तर पर ही उपकल्पनाओं का परीक्षण करते है 0.05 तथा 0.01 सार्थकता स्तरो के लिए क्रमशः 95 प्रतिशत वर्गान्तर सीमा तथा 99 प्रतिशत वर्गान्तर सीमा जैसे शब्दों का प्रयोग किया जाता है। 0.01 सार्थकता स्तर का अर्थ है कि मध्यमान प्राचल का मान 99 प्रतिशत इस सीमा के अन्तर्गत है तथा शेष 1 प्रतिशत के इस सीमा से बाहर होने की संभावना है। इसी तरह से 0.05 सार्थकता स्तर से तात्पर्य है कि मध्यमान प्राचल का मान 95 प्रतिशत इस सीमा के अन्तर्गत है तथा शेष 5 प्रतिशत इसके बाहर होने की संभावना है। प्रसामान्य वितरण के अन्तर्गत $M \pm 1.96\sigma$ के बीच 95 प्रतिशत तथा $M \pm 2.58\sigma$ के बीच 99 प्रतिशत प्राप्तांक पड़ते है। इस प्रकार कहाँ जा सकता है कि प्रसामान्य संभावना वक्र (Normal Probability Curve) में 95 प्रतिशत तथा 99 प्रतिशत क्षेत्र क्रमशः $M \pm 1.96\ \sigma$ rFkk $M \pm 2.58\ \sigma$ के अन्तर्गत पड़ते है। सार्थकता का स्तर वह स्तर होता है जिस पर शोधकर्त्ता किसी निराकरणीय प्राकल्पना को स्वीकृत अथवा अस्वीकृत करता है।

स्वतन्त्रता के अंश से तात्पर्य प्राप्तांको को स्वतन्त्र रूप से परिवर्तित होने से होता है। छोटे प्रतिदर्शों के मध्यमान की विश्वसनीयताकी जाँच करने के लिए स्वतन्त्रता के अंशो (Degree of Freedom) को अवश्य देखना पड़ता है। जबकि बड़े प्रतिदर्शों की स्थिति में यह बहुत आवश्यक नहीं होता है, क्योंकि बड़े प्रतिदर्शों में ये मानक मान स्वतन्त्रता के अंशो पर दिये गये आवश्यक तथा सार्थक मानक से अपेक्षाकृत बहुत अधिक भिन्न नहीं होते, और उनका प्रभाव अन्तिम गणना पर बहुत कम ही रहता हैं, फिर भी परिशुद्धता के दृष्टिकोण से देख लेना आवश्यक रहता है।

संख्यिकीय विश्लेषण में कई प्रकार की त्रुटिया पाई जाती है जिसमें प्रथम प्रकार एवं द्वितीय प्रकार की त्रुटि मुख्य है। जब अनुसंधानकर्त्ता शून्य उपकल्पना को असत्य सिद्ध करने के लिए विश्वास स्तर को इच्छा अनुसार नीचाकर देता है तब शून्य परिकल्पना के अस्वीकृति में प्रथम प्रकार की त्रुटि पाई जाती है। इसमें शून्य परिकल्पना सत्य होती है लेकिन अस्वीकृत कर दी जाती है। इसके विपरीत जब अनुसंधानकर्त्ता गलत उपकल्पना को अस्वीकार नहीं करता है और ऐसी स्थिति में शोधकर्त्ता अनावश्यक रूप से अपने विश्वास स्तर को इतना ऊँचा कर देता है कि शून्य उपकल्पना 0.05 ओर 0.01 विश्वास स्तर पर असत्य होते हुए भी सत्यमान ली

जाती है। प्रथम प्रकार की त्रुटि को कम करने का सबसे अच्छा तरीका यह है कि जहाँ तक हो सके प्रतिदर्श की संख्या को और अधिक बढ़ाकर ही अध्ययन करना चाहिए।

द्वितीय प्रकार की त्रुटि को कम करने का तरीका यह है कि अपने अध्ययन के सार्थकता, महत्व और उपयोगिता को ध्यान में रखकर ही विश्वास के स्तर को ऊँचा उठाना चाहिए, अनावश्यक रूप से विश्वास के स्तर को ऊँचा नहीं उठाना चाहिए।

7.12 शब्दावली–

- प्रथम प्रकार की त्रटि (Type I Error)- शोधकर्त्ता जब शून्य उपकल्पना को सत्य रहने पर भी उसे अस्वीकृत कर देता है या उसे अस्वीकृत (Reject) कर देना पड़ता है, तो इसे प्रथम प्रकार की त्रुटि कहाँ जाता है।
- द्वितीय प्रकार की त्रुटि (Type II Error)– जब शोधकर्त्ता शून्य उपकल्पना को गलत या असत्य रहने पर भी उसे स्वीकार करता है या स्वीकार करने की लिए बाध्य होता है, तब इस तरह की त्रुटि को द्वितीय प्रकार की त्रुटि कहाँ जाता है।
- प्रतिदर्श (Sample)– प्रतिदर्श एक निश्चित संख्या में समष्टि (Universe) या जीवसंख्या (Population) से चयन किया गया सदस्यों का एक समूह होता है।
- प्रसामान्य वितरण (Normal Distribution)– प्रसामान्य वितरण वह वितरण होता है जिसमें बहुत सारी संख्या मापनी के बीच में आते है तथा बहुत कम संख्या मापनी की ऊपरी छोर तथा निचली छोर पर आते है।
- प्रसामान्य वितरण वक्र (Normal Distribution Curve)– प्रसामान्य वितरण के आकड़ों के आधार पर जो वक्र बनता है उसे प्रसामान्य वितरण वक्र कहाँ जाता है।
- प्रसम्भाव्यता (Probability)– प्रसम्भवयता का अर्थ किसी एक घटना के घटित होने के पूर्वानुमान से होता है।
- शून्य उपकल्पना (Null Hypothesis)–शून्य उपकल्पना वह उपकल्पना है जिसके द्वारा हम चरों के बीच कोई अन्तर नहीं होने के सम्बन्ध का उल्लेख करते है।
- स्वतन्त्रता के अंश (Degree of Freedom)– स्वतन्त्रता के अंश से तात्पर्य प्राप्तांकों को स्वतन्त्र रूप से परिवर्तित होने से होता है।
- सार्थकता स्तर (Level of Significance)– शून्य उपकल्पना को स्वीकृत या अस्वीकृत करने के लिए जिस कसौटी को चुना जाता है, उसे सार्थकता के स्तर कहाँ जाता है।

7.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर–

- जब कोई शून्य उपकल्पना 0.05 सार्थकता के स्तर पर अस्वीकृत होती है, तब इसका अर्थ यह हुआ कि यदि संबंधित प्रयोग या परीक्षण जिनसे आँकड़े प्राप्त किये गये है, को 100 बार दोहराया जाय, तो उसमें से पांच बार शून्य उपकल्पना सत्य होगी और 95 बार असत्य होगी।
- जब शून्य उपकल्पना को 0.01 सार्थकता के स्तर पर अस्वीकृत किया जाता है, तब इसका अर्थ यह हुआ कि यदि सम्बन्धित प्रयोग या परीक्षण जिनसे आँकड़े प्राप्त हुए

है, उसे 1000 बार दोहराया जाय तो उसमें से 1 बार शून्य उपकल्पना सत्य होगी और 999 बार असत्य होंगी।

- 5 प्रतिशत विश्वास के स्तर पर सार्थकता का मान $M \pm 1.96\ \sigma$ होता है जिसके अन्तर्गत 95 प्रतिशत प्राप्तांक आते है।
- 1 प्रतिशत विश्वास के स्तर पर सार्थकता का मान $M \pm 2.58\ \sigma$ होता है जिसके अन्तर्गत 99 प्रतिशत प्राप्तांक आते है।
- 10 संख्याओं को 12 माध्य होने के लिए कुल योग 120 होना आवश्यक है। इसलिए अन्तिम संख्या का मान ज्ञात करने के लिए शेष 9 संख्याओं को पहले जोड़ करेगें। जैसे– (11+13+14+12+9+8+7+10+18)=102

12 माध्य होने के लिए कुल योग 120 होना आवश्यक है अतः 120–102 = 18

- प्रथम प्रकार की त्रुति को अल्फा त्रुटि कहाँ जाता हैं
- द्वितीय प्रकार की त्रुति को बीटा त्रुटि कहाँ जाता है।
- अध्ययनकर्ता अपने निरीक्षणों में वृद्धि करके प्रथम प्रकार की त्रुटि को कम कर सकता है।

7-14 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची एवं सहायक पाठ्य सामग्रीः–

1. Anastasi, Anne, Psychological Testing, New York: The MacMillan Co., 1954.
2. Garrett, H.E., Statistics in Psychology and Education, Bombay: Vakils, Feffer and Sinons P.Ltd., 1967.
3. भागर्व एम0 (1999) आधुनिक मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं मापन, हरप्रसाद भार्गव, आगरा।
4. सिंह, अरूण कुमार (2002) मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में सांख्यिकी, नोवेल्टी एण्ड कम्पनी, पटना–8।
5. कपिल, एच. के. (1994) सांख्यिकी के मूलतत्त्व, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
6. रामजी श्रीवास्तव (2003) मनोविज्ञान, शिक्षा तथा समाजशास्त्र में सांख्यिकीय विधियाँ, मोतीलाल बनारसीदास बंगलोरोड, दिल्ली।

7.15 निबन्धात्मक प्रश्न–

- संयोगिक प्रतिचयन किसे कहते है। इसके सभी प्रकारों का सविस्तार वर्णन कीजिए?
- संयोगिक प्रतिचयन की विधियों विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिए।
- प्रथम प्रकार की त्रुटि एवं द्वितीय प्रकार की त्रुटि से आप क्या समझते है तथा इस प्रकर की त्रुटियों को कैसे कम कर सकते है?
- सार्थकता के स्तर से क्या अभिप्राय है तथा शोधकार्य में इसके महत्व को स्पष्ट किजिए।
- सांख्यिकीय विश्लेषण में स्वतन्त्रता के अंश की उपयोगिता को स्पष्ट कीजिए?

इकाई 8 :—प्राचल एवं अप्राचल सांख्यिकी—अर्थ, स्वरूप,अभिग्रह एवं प्रकार, टी. परीक्षण एवं काई—वर्ग परीक्षण

इकाई की रूपरेखा

8.1 प्रस्तावना
8.2 उद्देश्य
8.3 प्राचल सांख्यिकी
8.4 अप्राचल सांख्यिकी
8.5 प्राचल सांख्यिकी तथा अप्राचल सांख्यिकी की तुलना।
8.6 टी.परीक्षण
8.6.1 क्रान्तिक अनुपात परीक्षण
8.6.2 टी. परीक्षण की गणना
8.6.3 सम्बन्धित प्रतिदर्शों के मध्यमानों की गणना किये बिना सीधे प्रांप्ताकों के आधार पर t के मान की गणना
8.6.4 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न
8.7 काई—वर्ग परीक्षण
8.7.1 काई वर्ग परीक्षण की सामानय विशेषतायें
8.7.2 काई वर्ग (X^2) परीक्षण की उपयोगिता
8.7.3 काई वर्ग परीक्षण के लाभ एवं सीमायें
8.7.4 काई वर्ग परीक्षण की गणना के विभिन्न चरण।
8.7.5 काई वर्ग परीक्षण की गणना
8.7.6 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न
8.8 साख्यिकीय तालिका
8.9 सारांश
8.10 शब्दावली
8.11 अभ्यास हेतु प्रश्नों के उत्तर
8.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची एवं सहायक पाठ्य सामग्री।
8.13 निबन्धात्मक प्रश्न

8.1 प्रस्तावना :—

सामाजिक विज्ञानों में प्रदत्तों के विश्लेषण के लिए सांख्यिकी का प्रयोग किया जाता है। सांख्यिकी का प्रयोग केवल शिक्षा शास्त्र, समाजशास्त्र तथा मनोविज्ञान से सम्बन्धित आंकड़ों की व्याख्या करने के लिए ही नही किया जाता है बल्कि अर्थशास्त्र, भूगोल, कृषि, चिकित्साशास्त्र आदि में भी वैज्ञानिक अध्ययन, विश्लेषण एवं व्याख्या के लिए भी किया जाता है। मनोविज्ञान के विद्यार्थियों को विभिन्न विषयों के मूल आंकड़ों को मानक अंको में परिवर्तित करके उनको तुलनात्मक रूप प्रदान किया जाता है। ऐसा करने के लिए सांख्यिकी के विभिन्न विधियों का उपयोग किया जाता है। विषय विशेषज्ञों के मत के अनुसार सांख्यिकी में

कभी–कभी जीव संख्या के बारे में कुछ पूर्व कल्पनाएँ करनी पड़ती है। इन पूर्व कल्पनाओं के आधार पर सांख्यिकी को दो भागों में बांटा गया है प्राचल तथा अप्राचल सांख्यिकी इन दोनो प्रकार के सांख्यिकी के अर्न्तगत आकड़ों का स्वरूप अलग–अलग होता है जिनके विश्लेषण के लिए विभिन्न प्रकार की विधियों का प्रयोग किया जाता है जैसे–टी–परीक्षण, कई वर्ग परीक्षण, प्रसरण विश्लेषण क्रान्तिक अनुपात आदि।

सांख्यिकी विधियों के आधार पर मनोवैज्ञानिक प्रयोगों एवं परीक्षणों के ऐसे अभिकल्प बनाने में सहायता मिलती है, जिनसे मनोवैज्ञानिक तथ्यों का अध्ययन उच्च कोटि के कठोर वैज्ञानिक स्तर पर करना संभव होता है।

8.2 उद्देश्य –

प्रस्तुत इकाई के अर्न्तगत हम प्राचल एवं अप्राचल सांख्यिकी, टी–परीक्षण तथा कई–वर्ग परीक्षण के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगें। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप जान सकेंगे कि

- प्राचल सांख्यिकी तथा अप्राचल सांख्यिकी क्या होता है ?
- प्राचल तथा अप्राचल सांख्यिकी की तुलना ?
- टी–परीक्षण क्या होता है तथा इसका उपयोग कब करती है ?
- टी–परीक्षण की गणना कैसे की जाती है ?
- काई–वर्ग परीक्षण क्या है ?
- काई–वर्ग परीक्षण की गणना कैसे की जाती है तथा इसका उपयोग कब करते हैं।

8.3 प्राचल सांख्यिकी (Parrametric Statistics) :–

प्राचल सांख्यिकी का सम्बन्ध प्रायः एक समष्टि के किसी एक विशेष प्राचल से होता है। ऐसे आकड़ों के आधार ही प्राचल के विषय में आंकलन लगाया जाता है। इसी कारण ऐसे आंकड़ों को प्राचल आकड़ें कहा जाता है। इस प्रकार के आँकड़ों का अध्ययन मानक त्रुटि (Standard Error), टी–परीक्षण (t-test) तथा प्रसरण विश्लेषण के आधार पर किया जाता है। इस तरह के आकडें प्रायः प्रतिदर्श के रूप में रहते है, तथा उनका सम्बन्ध सम्पूर्ण समष्टि तथा प्रसामान्य वितरण से रहता है इसके अतिरिक्त समूहों की विशेषताओं जैसे बुद्धि, ऊचाई, बोध विस्तार, योग्यता तथा अधिगम आदि से रहता है या फिर ऐसे द्विचर ऑकड़ो से रहता है जिनमें दो चरों जैसे, ऊचाई तथा भार व गति तथा शुद्धता के मध्य सह सम्बन्ध गुणांक को ज्ञात करने की आवश्यकता हो। इस प्रकार के ऑकड़ों को माप (Measurement)कहते है, क्योकि उनके आधार पर समूह तथा उससें सम्बन्धित समष्टि के प्राचल के विषय में आंकलन लगाये जाते है या फिर दो चरों के पारस्परिक सम्बन्ध का अध्ययन किया जाता है इस प्रकार माप सम्बन्धी ऑकडों को ही प्राचल आकड़े कहते हैं।

प्राचल साख्यिकी वह सांख्यिकी है जो जीव संख्या जिसमें कि प्रतिदर्श लिया जाता है के बारे में कुछ शतों पर आधारित होता है जो निम्न हैं।

1. प्रेक्षण :– स्वतन्त्र तथा निष्पक्ष हो अर्थात जीव संख्या से प्रतिदर्श का चयन करते समय किसी व्यक्ति या वस्तु का चयन इस तरह से न हो कि वह शोधकर्ता के किसी प्रकार के पक्षपात या पूर्वाग्रह के कारण लिया गया हो या किसी एक व्यक्ति के चयन से दूसरे व्यक्ति का चुना जाना प्रभावित हो गया हों। पक्षपात या पूर्वाग्रह से बचने के लिए प्रतिदर्श का चयन याद्धच्छिक प्रतिदर्श (Method of random Sampling) विधि के द्वारा किया जाता है। यथा सम्भव प्रतिदर्श का चयन सामान्य रूप से वितरित जीव संख्या से हो।

2. जिस भी चर का अध्ययन किया जाने वाला हो उसे ऐसा होना चाहिए कि उसका माप अन्तराल मापनी पर संभव हो जिससे गणितीय परिकलन जैसे जोड़, घटाव, गुणा, माध्य आदि निकालना संभव हो।
3. सीगे़ल के अनुसार "चूँकि ये सभी शर्तें ऐसी है जिनकी साधारण जाँच नही की जाती है। यह कल्पना कर ली जाती है कि शर्तें मौजूद है।" प्राचलित सांख्यिकी के परिणाम की सार्थकता उपयुक्त शर्तो की सत्यता पर आधारित होती है।

   प्राचल सांख्यिकी के अन्तर्गत टी–परीक्षण, प्रसरण विश्लेषण, मानक विचलन आदि सांख्यिकी विधियों का उपयोग किया जाता है।

8.4 अप्राचल सांख्यिकी (Non-Parametric)–

अप्राचल सांख्यिकी वह सांख्यिकी है जो जिस समष्टि से प्रतिदर्श लिया जाता है, के बारे में कोई विशेष शर्त नही रखती है चूँकि इस प्रकार की सांख्यिकी में समष्टि के बारे में कोई शर्त नही होती है अतः इसे वितरण मुक्त साख्यिकी भी कहाँ जाता है। प्रायः कुछ आंकड़े ऐसे भी होते है, जिनका सम्बन्ध ऐसी संख्याओं से होता है, जो कि दो या दो से अधिक संवर्गो जैसे Yes, No तथा Indifferent सफल असफल आदि में विभाजित रहते हैं। ऐसे आकड़ों को सम्बन्ध प्रायः समाज के विभिन्न वर्गों तथा व्यक्तियों के अधिमानात्मक मूल्यों, किसी एक सामाजिक समस्या के प्रति समाज के व्यक्तियों की अभिवृत्तियों के मापन, विभिन्न प्रकार के विज्ञापनों की तुलनात्मक प्रभावशीला, बाल्यकाल के अनुभवों का प्रौढ़ व्यक्तियों के मानसिक स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभावों आदि के अध्ययन से रहता है। प्रायः ऐसे आँकड़ों का स्वरूप वर्गित संख्याओं अथवा वर्गित आवृत्तियों में ही रहता है जो कि प्रतिचयन जैसे आँकड़ों से भिन्न होता है। ऐसे आँकड़ों में मध्यमान से विचलन की सार्थकता की जॉच किसी एक विशेष उपधारण के आधार पर की जाती है। यहाँ पर यह उपधारणा प्रायः संयोग ही होती है। परन्तु इसके अतिरिक्त इसका कोई आधार प्रसामान्य वितरण या कोई दूसरा सिद्धान्त या अनुपात भी हो सकता है परन्तु यहाँ पर सार्थकता की कसौटी के आधार पर जनसंख्या के किसी एक प्राचल के बारे में आंकलन नही लगाया जाता है। इसी कारण से इस प्रकार के ऑकड़ों को अप्राचल सांख्यिकी कहा जाता है।

अप्राचल आँकड़ों की एक विशेषता यह भी होती है कि ऐसे आँकड़ों की संख्या अपेक्षाकृत बहुत कम होती है प्रायः ऐसे आकड़ों की संख्या 30 से कम ही होती है ऐसे ऑकड़ों का आधार न तो सयोगिक प्रतिचयन होता है और ना ही प्रसामान्य वितरण। अप्राचल ऑकड़ों का स्वरूप प्रायः पर्याप्त मात्रा में विषम होता है। ऐसे आंकड़ों में प्रायः धनात्मक विषमता या ऋणात्मक विषमता अवश्य रहती है। प्रायः ऐसे आकड़ों का सम्बन्ध समष्टि के प्राचल से भी नही होता है। प्रसामान्यता अथवा प्रसामान्य वितरण के नियम भी इस विधि द्वारा प्राप्त निष्कर्षों पर लागू नही होते है।

अप्राचल सांख्यिकी को वितरण मुक्त सांख्यिकी कहने का अर्थ यह नहीं हैं कि इसकी कोई पूर्व कल्पना या उपधारणा या शर्त नही होती हैं। अप्राचल सांख्यिकी भी अपने संख्यात्मक ऑकड़ों के बारे में कुछ पूर्वकल्पना करती हैं। जैसे – प्रेक्षण निष्पक्ष एवं स्वतन्त्र हो, चर जिनका अध्ययन किया जा रहा हो उसमें निरन्तरता हो तथा आँकडें क्रमसूचक मापनी (Classificatory Scale) या नामित मापनी (Ordinal Scale) पर प्राप्त हुए हों।

अप्राचल सांख्यिकी के अर्न्तगत सार्थकता की जॉच के लिए काई वर्ग परीक्षण मध्यांक परीक्षण, शततमक, स्पीयरमैन कोटि अन्तर विधि, केण्डाल कोटि अन्तर विधि, मान–विटनी यू परीक्षण, चिन्ह परीक्षण, चिन्ह क्रम अन्तर विधि, सयुक्त क्रम अन्तर विधि आदि का उपयोग किया जाता है।

8.5 प्राचल सांख्यिकी तथा अप्राचल सांख्यिकी की तुलना :–

ब्रेडली (Brafley 1968) ने अप्राचल सांख्यिकी की तुलना प्राचल सांख्यिकी से निम्न प्रकार से की है।

1. **व्युत्पत्ति की सरलता** (Simplicily of derivation) :–अप्राचल सांख्यिकी की व्युत्पत्ति के लिए गणित के क्षेत्र में एक विशेष स्तर की सक्षमता को आवश्यकता होती है परन्तु अधिकांश अप्राचल सांख्यिकी मात्र समोजी सुत्रों से आसानी से ज्ञात कर लिया जा सकता है। दूसरे शब्दों में प्राचल साख्यिकी की तुलना में अप्राचक सांख्यिकी की व्युत्पत्ति आसान है।
2. **अनुप्रयोग की सहजता** :–प्रायः अप्राचल सांख्यिकी में जिसे गाणितीय परिकलन की की आवश्यकता होती है, वे है श्रेणीकरण (Ranking), गिनती (Counting), जोड़ (addition) घटाव (substration), आदि। लेकिन प्राचल सांख्यिकी में इससे अधिक उच्च सतर के गणितीय परिकलन की आवश्यकता पड़ती है। अतः अप्राचल सांख्यिकी को प्राचलन सांख्यिकी की अपेक्षा व्यवहार में लाना अधिक आसान है।
3. **अनुप्रयोग की तीव्रता** (Speed of Application) :– जब प्रतिदर्श का आकार छोटा होता है तब ऐसी स्थिति में अप्राचल सांख्यिकी का व्यवहारिक उपयोग प्राचल सांख्यिकी की अपेक्षा अधिकी उपयुक्तता के साथ तेजी से किया जा सकता है।
4. **अनुप्रयोग का क्षेत्र** (Scope of application) :–अप्राचल सांख्यिकी की पूर्वकल्पनाएं या शर्ते प्राचल साख्यिकी की अपेक्ज्ञा काफी कम सख्त होती है जिसके कोरण से इसका उपयोग भिन्न भिन्न प्रकार प्रतिदर्शो पर किया जा सकता है। जबकि प्राचल सांख्यिकी का उपयोग कुछ विशेष प्रतिदर्शी पर किया

जा सकता हैं जो सामान्य वितरण पर आधरित होता है। अतः अप्राचल सांख्यिकी का क्षेत्र प्राचल की अपेक्षा अधिक बड़ा है।

5. **आपेक्षित के प्रकार** (Types of Measurement) :–अप्राचल सांख्यिकी के प्रयोग में अधिकतर क्रम सूचक आँकड़े की आवश्कता होती है लेकिन कभी–कभी इसका प्रयोग नामित ऑकड़ों पर भी किया जा सकता है। जब कि प्राचल सांख्यिकी के प्रयोग में अन्तराल ऑकड़े या आनुपातिक ऑकड़ों की आवश्यकता होती है। सामान्यत क्रम सूचक ऑकड़े या नामित आँकड़े जो क्रमशः क्रमसूचक मापनी तथा नामित मापनी से प्राप्त होता है। अन्तराल ऑकड़े या आनुपातिक आँकड़े जो क्रमशः अन्तराल आँकड़े या अनुपातिक आँकडें जो क्रमशः अन्तराल मापनी तथा आनुपातिक मापनी से प्राप्त होते है की अपेक्षा अधिक सरलतजा से प्राप्त किये जा सकते हैं
6. **पूर्वकल्पनाओं को अतिक्रमण करने की सुप्रमाण्यता (Susceptibility to assumptions)** :–अप्राचल सांख्यिकी की पूर्वकल्पनाएँ या उपधारणायें कम विस्तृत होती है। अतः किसी भी शोधकर्ता द्वारा अतिक्रमण करने की संभावना कम से कम होती है। इसके विपरीत प्राचल सांख्यिकी की बहुत अधिक पूर्वकलपनाएँ होती है ऐसी स्थिति में संभव है कि शोधकर्ता कभी–कभी पूर्व कल्पनाओं का अतिक्रमण कर देता है। ब्रेडली का यह कीमत है कि अप्राचल सांख्यिकी का स्वभाव ही कुछ ऐसा होता है कि इसमें हुए किसी भी प्रकार के अतिक्रमण को आसानी से पकड़ा जा सकता है जब कि प्राचल सांख्यिकी में ऐसी बात नही है।
7. **प्रतिदर्श के आकार का प्रभाव (inference of sample size)** :–जब प्रतिदर्श का आकार 10 या उससे कम हो तब ऐसी परिस्थिति में अप्राचल सांख्यिकी का प्रयोग प्राचाल सांख्यिकी से अधिक आसान तथा तीव्र होता हैं। इस तरह की परिस्थति में प्राचल सांख्यिकी की पूर्वकल्पनाओं की अवहेलना स्वभााविक हो जाता है और तब ऐसी स्थिति में अप्राचल सांख्यिकी प्राचल सांख्यिकी की अपेक्षा अधिक उपयुक्त तथा लाभप्रद होता है।
8. **सांख्यिकी क्षमता (Statistical-efficiency)** :–व्यवहारिकता के हिसाब से अर्थात किसी शोध या प्रयोग से प्राप्त आंकड़ों का विश्लेषण करने में लगे मानव प्रयास का ध्यान में रखते हुए यह कहा जा सकता है कि अप्राचल साख्यिंकी प्राचल सांख्यिकी की अपेक्षा अधिक सुविधाप्रद है। सांख्यिकी क्षमता की गणितीय कसौटी के आधार पर यही कहाँ जा सकता है कि अप्राचल सांख्यिकी की पूर्वकल्पनाएँ भी संतुष्टि होने पर यह प्राचल सांख्यिकी की पूर्वकल्पानएँ की संतष्टि होने पर यह प्राचल सांख्यिकी की पूर्वकल्पनाएँ की संतुष्टि होने पर यह प्राचल सांख्यिकी से श्रेण्ठ होता है और ऐसी प्रस्थिति में यदि अप्राचल सांख्यिकी तथा प्राचल सांख्यिकी दोनो का प्रयोग किया जाता है तो अप्राचल सांख्यिकी की सांख्यिकी दोंनो का प्रयोग किया जाता है तो अप्राचल की क्षमता से कही अधिक होता है परन्तु जब प्रतिदर्श की सख्ंया बड़ा होता है तब ऐसी परिस्थिति में प्राचल सांख्यिकी की सांख्यिकी क्षमता अप्राचल सांख्यिकी से हमेशा अधिक होती हैं।

8.6 टी–परीक्षण

टी–अनुपात की व्याख्या सबसे पहले डब्लू0एम0 गैसेट (W.M. Gosset) ने 'स्टूडेन्ट' (Student) नामक उपनाम (Pen name) के साथ सन् 1908 में किया। इसी कारण से टी–परीक्षण को 'स्टूडेन्ट टी' नामक उपनाम के नाम से जाना जाता है। इस प्रकार के परीक्षण का उपयोग छोटे आँकड़ो के लिए ही उपर्युक्त रहता है। प्रायः विद्यार्थी ही अपने प्रतिदिन के प्रयोगो और परीक्षणों में ऐसे छोटे आंकड़ो का प्रयोग करते है, और प्रायः ऐसे परीक्षण का सम्बन्ध विद्यार्थी (student) से ही रहता है, इसी कारण से इसे विद्यार्थी का परीक्षण भी कहा जाता है।

सामान्यतः 't' परीक्षण दो माध्यों के बीच के अन्तर की सार्थकता की जाँच करने का एक महत्वपूर्ण प्राचलिक सांख्यिकी है लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि इसका प्रयोग सिर्फ माध्यों के अन्तर की सार्थकता की जाँच करने में किया जाता है। वास्तविकता तो यह है कि इसका प्रयोग अन्य सांख्यिकीय विधियों जैसे– पियरसन आर (Peroson r), Point-biserial r, कोटि अन्तर सह संबन्ध (rank-difference method) आदि की सार्थकता की जाँच करने में भी किया जाता है।

8.6.1 क्रान्तिक अनुपात परीक्षण तथा टी–परीक्षण में अन्तर–

- क्रान्तिक अनुपात परीक्षण का उपयोग प्रायः दो बड़े समूहो के मध्यमानों के अन्तर की सार्थकता की जाँच के लिए किया जाता है, जब कि टी–परीक्षण का उपयोग दो छोटे समूहों के मध्यमानों के अन्तर को सार्थकता की जाँच के लिए किया जाता है।

- क्रान्तिक अनुपात के मूल्य की सार्थकता की जाँच स्वतन्त्रता के अंशों पर ज्ञात करना प्रायः इतना आवश्यक नहीं होता, परन्तु टी–परीक्षण के मान (Value) की सार्थकता की जाँच सम्बन्धित स्वतन्त्रा के अंशों पर ही किया जाता है। जब स्वतन्त्रता के अंशों की संख्या 30 से कम होती है, तब ऐसी स्थिति में ऐसा करना आवश्यक होता है, परन्तु जब यह संख्या 10 या 10 से भी कम होती है, तब ऐसा करना और भी आवश्यक होता है। लेकिन क्रान्तिक अनुपात की विवेचना के लिए ऐसा करना आवश्यक नहीं होताहै, क्योंकि क्रान्तिक अनुपात के मूल्य की गणना प्रायः बड़े समूहो में ही की जाती है, जिनकी संख्या (N) अधिक होने के कारण विभिन्न स्वतन्त्रा के अंशों के लिए क्रान्तिक अनुपात के मान प्रायः एक से ही रहते है, परन्तु छोटे प्रतिदर्शो में विभिन्न स्वतन्त्रता के अंशों पर सार्थकता के लिए टी–मान (t-value) अलग–अलग होते है।

- क्रान्तिक अनुपात मान [C.R. Value] के लिए या फिर SEm की गणना में सम्बन्धित प्रतिदर्शो की संख्या में से एक–एक की संख्या घटाना इतना आवश्यक नहीं होता है, परन्तु टी–मान की गणना में ऐसा करना बहुत आवश्यक होता है। इसका मुख्य कारण यह है कि क्रान्तिक अनुपात की गणना बड़े प्रतिदर्शो में की जाती है, और वहाँ पर S.D. या SEm की गणना में 1 की संख्या घटाने से S.D. या SEm को मान पर प्रायः कोई प्रभाव नहीं पड़ता है जबकि छोटे प्रतिदर्शो में संख्या कम होती है इस कारण से 1 की संख्या घटाने या न घटाने पर इसका S.D. के मान पर प्रभाव पड़ता है।

- टी–परीक्षण द्वारा t-value की गणना C-R की गणना से आपेक्षाकृत बहुत सरल होता है।
- विभिन्न स्वतन्त्रा के अंशों पर टी के मान भिन्न–भिन्न होते है लेकिन क्रान्तिक अनुपात के मान विभिनन d.f. पर प्रायः स्थायी से ही रहता है।

8.6.2 टी–परीक्षण की गणना–

टी–मान (t-value)ज्ञात करने के लिए निम्न सूत्रों का उपयोग करते है–
टी–मान ज्ञात करने में उपरोक्त तीनों प्रकार के सूत्रों का प्रयोग किया जाता है, परन्तु उपरोक्त तीनों सूत्रों में से तीसरा सूत्र सबसे अधिक सरल और सुविधाजनक होता है।

t-मान (t-Value) की गणना के पहले सूत्र की व्याख्याः

- $$t = \frac{Md}{\sqrt{\left(\frac{\Sigma d_1^2 + \Sigma d_2^2}{N_1 + N_2 - 2}\right)\left(\frac{N_1 + N_2}{N_1 N_2}\right)}}$$
- $$t = \frac{Md}{\sqrt{\left(\frac{SS_1 + SS_2}{N_1 + N_2 - 2}\right)\left(\frac{N_1 + N_2}{N_1 N_2}\right)}}$$
- $$t = \frac{Md}{\sqrt{\frac{\Sigma X_1^2 / N_1 - (M_2)^2}{N_1 - 1} + \frac{(\Sigma X_2^2 / N_2) - (M_2)^2}{N_2 - 1}}}$$

$$t = \frac{M_1 - M_2}{\sqrt{\left(\frac{\Sigma d_1^2 + \Sigma d_2^2}{N_1 + N_2 - 2}\right)\left(\frac{N_1 + N_2}{N_1 N_2}\right)}}$$

जबकि:

M_1 = पहले प्रतिदर्श का माध्य

M_2 = दूसरे प्रतिदर्श का माध्य

Σd_1^2 = पहले प्रतिदर्श के प्राप्तांकों के अपने मध्यमान से विचलनों के वर्गों (Squares) का योग।

M_d = M_1तथा M_2का अन्तर

Σd_2^2 = दूसरे प्रतिदर्श के प्राप्तांकों के अपने मध्यमान से विचलनों के वर्गो (Squares) का योग

N_1 = पहले प्रतिदर्श की संख्या

N_1 = दूसरे प्रतिदर्श की संख्या

यहाँ $\sqrt{\Sigma d_2^2 + \Sigma d_2^2 / N_1+N_2 - 2}$ सूत्र द्वारा दोनों प्रतिदर्शो (समूहों) का संयुक्त मानक विचलन (Combined S.D.) ज्ञात किया गया है, तथा यहाँ SE_d का सूत्र है:

$$\sigma_{d\ =\ S.D.\ comb.} \sqrt{N_1+N_2} / N_1N_2$$

उदाहरण 4–

तात्कालिक स्मृति (Immediate Memory) का एक परीक्षण एक कक्षा के 10 लड़कों व 10 लड़कियों को दिया गया। उनके परिणाम नीचे दिये गये है।

लड़कों की तात्कालिक स्मृति का विस्तार	7	5	6	5	6	6	7	9	8	6
लड़कियों की तात्कालिक स्मृति का विस्तार	7	6	5	8	9	8	8	9	6	9

यहाँ अध्ययनकर्त्ता ने निराकरणीय परिकल्पना (Null Hypothesis) की रचना की है। बताइये क्या अध्ययनकर्त्ता की परिकल्पना यहाँ सत्य है?

हल–

Group A	**Group B**	**d_1**	**d_2**	**d_1^2**	**d_2^2**
7	7	+0.5	–0.5	.25	.25
5	6	–0.5	–1.5	2.25	2.25
6	5	–0.5	–2.5	.25	2.25
5	8	–1.5	+0.5	2.25	.25
6	9	–0.5	+1.5	.25	2.25
6	8	–0.5	+0.5	.25	.25
7	8	+0.5	+0.5	.25	.25
9	9	+2.5	+1.5	6.25	2.25
8	6	+1.5	–1.5	2.25	2.25
6	9	–0.5	+1.5	.25	2.25
$\Sigma X_2=65$	**$\Sigma X_2=75$**			**$\Sigma d_1^2=14.50$**	**$\Sigma d_2^2=18.50$**

$M_1 = \frac{65}{10} = 6.5$ $\qquad$ $M_2 = \frac{75}{10} = 7.5$

t–अनुपात (t-Ratio) का सूत्र:

$$t = \frac{M_1 - M_2}{\sqrt{\left(\frac{\Sigma d_1^2 + \Sigma d_2^2}{N_1 + N_2 - 2}\right)\left(\frac{N_1 + N_2}{N_1 N_2}\right)}}$$

यहाँ $$t = \frac{6.5 - 7.5}{\sqrt{\left(\frac{14.50 + 18.50}{10 + 10 - 2}\right)\left(\frac{10 + 10}{10 \times 10}\right)}}$$

$$= \frac{1}{\sqrt{\left(\frac{33}{18}\right)\left(\frac{20}{100}\right)}}$$

$$= \frac{1}{\sqrt{1.8333 \times .2}}$$

$$= \frac{1}{1.354 \times .447}$$

$$= \frac{1}{.605}$$

= 1.66 (दो दशमलव तक)

यहाँ Degrees of Freedom $= (N_1 - 1) + (N_2 - 1)$

$= (10 - 1) + (10 - 1) = 18$

18 d.f. पर सार्थकता के लिए t का आवश्यक मान :

5% विश्वास के स्तर पर = 2.10

1% विश्वास के स्तर पर = 2.88

प्रस्तुत उदाहरण में प्राप्त t का मान उपरोक्त दोनों मानों से बहुत कम है, अतएव यहाँ निराकरणीय परिकल्पना सत्य है, और यह मानना पड़ेगा कि लड़कों व लड़कियों के तात्कालिक स्मृति के विस्तार में सार्थक अन्तर नहीं हैं।

उदाहरण 5–

बोध–विस्तार (Span of Apprehension) के एक अध्ययन में दो संकायों (Faculties) के छात्रों को लिया गया। A समूह में कला संकाय तथा B समूह में विज्ञान संकाय के छात्र थे। उनके बोध–विस्तार के परिणाम नीचे दिये गये है:

Group A	8	10	9	9	8	10	7	11	7	11
Group B	10	12	13	10	9	12				

अध्ययनकर्त्ता ने अपने अध्ययन में निराकरणीय परिकल्पना (Null Hypothesis) की रचना की है। बताइये क्या अध्ययनकर्त्ता की कल्पना (Assumption) यहाँ स्वीकार योग्य (Acceptable) है?

हल–

Group A	Group B	d_1	d_2	d_1^2	d_2^2
8	10	–1	–1	1	1
10	12	+1	+1	1	1
9	13	0	+2	0	4
9	10	0	–1	0	1
8	9	–1	–2	1	4
10	12	+1	+1	1	1
7		–2		4	
11		+2		4	
7		–2		4	
11		+2		4	
$N_1 = 10$ $\Sigma X_2=90$ $M_1 = 9$	**$N_2 = 6$ $\Sigma X_2=66$ $M_2 =11$**			**$\Sigma d_1^2=20$**	**$\Sigma d_2^2=12$**

t-अनुपात (t-ratio) का सूत्र–

$$t = \frac{M_1 - M_2}{\sqrt{\left(\frac{d_1^2 + d_2^2}{N_1 + N_2 - 2}\right)\left(\frac{N_1 + N_2}{N_1 N_2}\right)}}$$

$$\text{यहाँ } t = \frac{9 - 11}{\sqrt{\left(\frac{20 + 12}{10 + 6 - 2}\right)\left(\frac{10 + 6}{10 \text{ x } 6}\right)}}$$

$$= \frac{2}{\sqrt{\left(\frac{32}{14}\right)\left(\frac{16}{60}\right)}} = \frac{2}{\sqrt{\left(\frac{16}{7}\right)\left(\frac{4}{15}\right)}}$$

$$= \frac{2}{\sqrt{\frac{64}{105}}}$$

$$= \frac{2}{\sqrt{.6095}}$$

$$= \frac{2}{.78}$$

$$= 2.56$$

यहाँ d.f. – (10 – 1) + (6 – 1) = 14

14 d.f. पर सार्थकता के लिए का आवश्यक t मान :

5% विश्वास के स्तर पर = 2.14

1% विश्वास के स्तर पर = 2.98

प्रस्तुत उदाहरण में प्राप्त t का मान 5% विश्वास स्तर पर सार्थक हे, परन्तु 1% विश्वास के स्तर पर सार्थक नहीं है। अतएव यहाँ निराकरणीय परिकल्पना को 5% विश्वास के स्तर पर अस्वीकृत किया जाता है, और यहाँ यह मानना पड़ेगा कि कला संकाय तथा विज्ञान संकाय के छात्रों में बोध–विस्तार (Span of Apprehension) के प्रति सार्थक अन्तर देखने में आये हैं। इस प्रकार अध्ययनकर्त्ता की परिकल्पना यहाँ 5 प्रतिशत विश्वास के स्तर पर स्वीकार योग्य (Acceptable) नहीं है।

8.6.3 सम्बन्धित प्रतिदर्शो के मध्यमानों (Means) की गणना किये बिना सीधे प्राप्तांकों (Scores) के आधार पर t के मान की गणना–

जब आँकड़े छोटे होते हैं, व संख्या (N) कम (Small) होती है, उस स्थिति में t का मान ज्ञात करने के लिए निम्नलिखित सूत्र भी सुविधाजनक रहता है।

- $$t = \frac{Md}{\sqrt{\left(\frac{SS_1 + SS_2}{N_1 + N_2 - 2}\right)\left(\frac{N_1 + N_2}{N_1 N_2}\right)}}$$

जबकि SS_1 = Sum of Squares of Group I

SS_2 = Sum of Squares of Group I

तथा $SS_1 = \Sigma X_1^2 - (\Sigma X_1)^2/N_1$

$SS_2 = \Sigma X_2^2 - (\Sigma X_2)^2/N_2$

N_1 = N of the I Group

N_2 = N of the II Group

M_1 = Mean of the I Group

M_2 = Mean of the II Group

M_d = Difference of M_1 and M_2

उदाहरण के लिए यहाँ t के दूसरे उदाहरण के आँकड़ों (Data) को ही प्रयोग में लाया गया है :

Group	Group	X_1^2	
8	10	64	100
10	12	100	144
9	13	81	169
9	10	81	100
8	9	64	81
10	12	100	144
7		49	
11		121	
7		49	

11		121	
$\Sigma X_1=90$ $N_1=10$ $M_1=9$	$\Sigma X_2=66$ $N_2=6$ $M_2=11$	$\Sigma X_1^2=830$	$\Sigma X_2^2=738$

यहाँ $M_d = 11 - 9 = 2$

$SS_1 = \Sigma X_1^2 - (\Sigma X_1)^2 / N_1$
$= 830 - (90)^2 / 10$
$= 830 - 8100 / 10$
$= 830 - 810$
$= 20$

$SS_2 = \Sigma X_2^2 - (\Sigma X_2)^2 / N_2$
$= 738 - (66)^2 / 6$
$= 738 - 4356 / 6$
$= 738 - 726$
$= 12$

प्राप्त SS_1 तथा SS_2 के मानों को सूत्र में रखने पर:

$$t = \frac{2}{\sqrt{\left(\frac{20+12}{10+6-2}\right)\left(\frac{10+6}{10 \times 6}\right)}}$$

$$= \frac{2}{\sqrt{\frac{32}{14} \times \frac{16}{60}}}$$

$$= \frac{2}{\sqrt{\frac{64}{105}}}$$

$$= \frac{2}{.78}$$

$$= 2.56$$

यहाँ भी परिणाम वही आता है, जोकि पहले उदाहरण संख्या 2 में आया है।

t का मान एक तीसरी विधि द्वारा भी ज्ञात किया जा सकता है जोकि अपेक्षाकृत और भी अधिक सरल है। इसके अनुसार :

$$t = \frac{Md}{\sqrt{\frac{\Sigma X_1^2 / N_1 - (M_2)^2}{N_1 - 1} + \frac{(\Sigma X_2^2 / N_2) - (M_2)^2}{N_2 - 1}}}$$

इस विधि द्वारा गणना करने पर t का मान वही आयेगा, जो कि पहली दोनों विधियों में आया है। इन तीनों विधियों में तीसरी विधि अधिक सुविधाजनक है, क्योंकि इसके उपयोग से गणना का (Calculation) कार्य–भार कुछ कम हो जाता है क्योंकि प्रथम विधि का उपयोग उसी स्थिति में सरल रहता है, जबकि दोनों समूहों के मध्यमान दशमलव में न आते हों, यदि दशमलव में आते हैं, तब d_1 तथा d_2 के मान भी दशमलव में आयेगे और इससे गणना का कार्य बढ़ जायेगा। t की दूसरी विधि के प्रयोग में भी SS_1 तथा SS_2 के मान अलग निकालने पड़ते है, परन्तु t के मान ज्ञात करने की तीसरी विधि में अलग से ऐसी कोई गणना नहीं करनी पड़ती। इस प्रकार सामान्यतः t के मान ज्ञात करने की तीसरी विधि ही अधिक उपयुक्त रहती हैं।

8.6.4 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न –

निर्देश : अपना उत्तर नीचे दिए गऐ स्थान में लिखें। इस इकाई के अंत में दिये गए उत्तरों से अपने उत्तर की जांच करें।

- टी–परीक्षण का प्रयोग कब करना चाहिए।

- टी–परीक्षण के किसी एक सूत्र को लिखिए

- टी–परीक्षण का प्रयोग सर्व प्रथम किसने किया।

8.7 काई वर्ग परीक्षण (Chi-Square Test) –

काई–वर्ग परीक्षण एक ऐसा प्राचलिक सांख्यिकी (Non-Paramatric Statistics) है जिसका प्रयोग बहुत सी दशाओं में पूर्व निर्धारित तथ्य और उपकल्पना में पायी जाने वाली सहमति या भिन्नता के अध्ययन के लिए किया जाता है। इस सांख्यिकी विधि का आविष्कार हल्मर्ट (Helmert, 1876) तथा कार्ल पीयरसन (Kal Pearson, 1900) ने किया जिसका वास्तविक और अवलोकित आवृत्तियों में विद्यमान भिन्नता के लिए किया जाता है। कार्ल पियरसन ने ग्रीक अक्षर काई–वर्ग का सर्वप्रथम प्रयोग सन् 1900 ई0 में किया। उनका उददे्श्य प्रेक्षित घटना (Observed Phenomena) तथा सिद्धान्त आधारित प्रत्याशित घटना (Expected Phenomenon) के अन्तर की व्याख्या करना था।

काई–वर्ग परीक्षण को गिलफोर्ड (1956) ने सामान्य–उददेश्य सांख्यिकी (general purpose statistics) कहा है। कर्टज तथा मेयो के अनुसार, काई– वर्ग का प्रयोग प्रायः यह निश्चित करने के लिए किया जाता है कि क्या प्रेक्षित आवृत्तियों का सेट ऐसा है जो मात्र संयोग परिवर्तनों के कारण उन आवृत्तियों से भिन्न है जो किसी तरह के सिद्धान्त के आधार पर प्रत्याशित है।

8.7.1 काई–वर्ग परीक्षण की सामान्य विशेषतायें–

काई–वर्ग परीक्षण की सामान्य विशेषतायें निम्न हैं–

- काई–वर्ग के प्रयोग के लिए यह आवश्यक है कि आँकड़े आवृत्तियों या अनुपात अथवा प्रतिशत के रूप में व्यक्त किये गये हों।
- काई–वर्ग की एक विशेषता यह है कि परीक्षण द्वारा एक ही समय में एक ही उपकल्पना के अन्तर्गत एक से अधिक चरों की सार्थकता की जाँच की जा सकती है।
- काई वर्ग ऐसे अनुपातों का योग होता है, जो कि एक परीक्षण में प्रेक्षित आवृत्तियों तथा किसी एक सिद्धान्त अथवा उपकल्पना के आधार पर प्रत्याशित आवृत्तियों के बीच पाये जाने वाले अन्तर पर आधारित होता है।

8.7.2. काई–वर्ग (x^2)की उपयोगिता–

काई–वर्ग परीक्षण का अनुसन्धान कार्य में उपकल्पनाओं के परीक्षण हेतु महत्वपूर्ण उपयोग है। जिनमें निम्नलिखित प्रमुख है–

- काई–वर्ग का प्रयोग वितरण की सामान्यता की जाँच करने में की जाती है। काई–वर्ग के इस प्रयोग को समानुकता (Goodness-of-fit) की संज्ञा दी जाती है।
- इसका उपयोग प्रेक्षित आवृत्तियों तथा प्रत्याशित घटनाओं की व्याख्या करना होता है।
- काई–वर्ग परीक्षण द्वारा एक समय पर एक से अधिक चरों का, अन्य चरों पर प्रभाव का अध्ययन एक हीउपकल्पना के अन्तर्गत एक साथ किया जा सकता है।
- काई–वर्ग परीक्षण का प्रयोग ऐसी स्थितियों में विशेषतः उपयोगी रहता है, जहां कि परीक्षण के प्रतिदर्श (Sample) की संख्या छोटी रहती है।
- काई–वर्ग का प्रयोग समान प्रायिकता प्राकल्पना (equal probability hypothesis) पर प्रत्याशित आवृत्तियों की तुलना प्रेक्षित आवृत्तियों से करने में की जाती हैं।
- काई–वर्ग परीक्षण का प्रयोग कई महत्तवपूर्ण सांख्यिकी की सार्थकता की जाँच करने में किया जाता है, जैसे फाई–गुणांक (Phi-coefficient), केण्डाल संगति गुणांक (Kendall's Coefficient of Concordance), क्रुस्कल–वालिश एच परीक्षण (Kruskal-Wallis H Test), असंगत गुणांक (Coefficient of contigency) आदि की सार्थकता की जाँच करने में सफलता पूर्वक प्रयोग किया जाता है।
- काई–वर्ग परीक्षण का उपयोग चिकित्सा क्षेत्र में विशेषतः उल्लेखनीय है, क्यों कि वहाँ पर प्रायः एक ही समय पर एक से अधिक चिकित्सा पद्धतियों के प्रभाव का अध्ययन किया जाता है।

- मनोविज्ञान के क्षेत्र में भी प्रायः मुख्य अनुसन्धान से पूर्व इसका प्रयोग अग्रगामी अध्ययन (Pilot Study) में किया जाता है।

8.7.3 काई–वर्ग परीक्षण के लाभ एवं परिसीमायें–

(क) लाभ– काई–वर्ग परीक्षण के निम्न लाभ हैं।

- यदि आँकड़े आवृत्ति में हो तो काई–वर्गका प्रयोग किया जाता है।
- काई–वर्ग परीक्षण द्वारा यह पता आसानी से चल जाता है कि प्राप्त आवत्तियाँ (Obtained Frequencies) किसी प्राकल्पना (Hypothesis) या सिद्धान्त पर आधारित आवृत्तियों के आकार में अच्छी तरह फिट (fit) बैठता है या नहीं।

(ख) परिसीमाएँ– काई–वर्ग परीक्षण की कुछ परिसीमाएँ (Limitation) भी हैं जो निम्न–

- काई–वर्ग परीक्षण द्वारा मात्र यह पता चलता है कि किसी एक चर पर वर्गीकरण दूसरे चर पर वर्गीकरण से असंयोगवश सम्बन्धित है या नहीं।
- काई–वर्ग परीक्षण ऐसे सम्बन्ध की शक्ति के बारे में कुछ नहीं कहता है।
- काई–वर्ग परीक्षण का उपयोग उन आँकड़ो पर नहीं हो सकता है जिनकी अभिव्यक्ति प्राप्तांको के रूप में व्यक्त हुई है, तथा जिन्हें आवृत्ति या प्रतिशत समानुपात में बदलना संभव नहीं है।
- काई–वर्ग परीक्षण एक अत्यन्त ही सरल प्रकार की सांख्यिकी है इसकी सरलता एवं सुगमता का लाभ उठाकर इसका प्रयोग प्रायः शोधकर्त्ता वैसी परिस्थिति में भी कर देते हैं, जहाँ पर इसे नहीं करना चाहिए।

8.7.4 काई–वर्ग परीक्षण की गणना के विभिन्न चरण–

काई–वर्ग परीक्षण के अन्तर्गत निम्नलिखित चरणों का प्रयोग करते हैं–

- प्रेक्षित आवृत्तियों को उनको उपयुक्त कोष्ठकों (Cells) में लिखना।
- इसके बाद प्रत्याशित आवृत्तियों को उनके उपयुक्त कोष्ठकों (Cells) में लिखते हैं।
- प्रेक्षित आवृत्तियों में से प्रत्याशित आवृत्तियों को घटाकर अलग–अलग अन्तर ज्ञात करते हैं।
- प्रत्येक $f_o - f_e$ के मान को वर्गित (Square) करना अथवा $(f_o - f_e)^2$ ज्ञात करते हैं।
- प्रत्येक वर्गित मान को उससे सम्बन्धित प्रत्याशित आवृत्तियों के मान से विभाजित करते हैं।
- इस प्रकार प्राप्त प्रत्येक संवर्ग के मान का योग ज्ञात करते हैं।
- इसके पश्चात स्वतन्त्रता के अंशो (d.f.) को ज्ञात करते हैं।
- प्राप्त काई–वर्ग परीक्षण के मान की सार्थकता की जाँच दिये गये स्वतन्त्रता के अंशो पर सम्बन्धित सारणी में सार्थकता के विभिन्न स्तरों (0.05 अथवा 0.01) पर देखते हैं।

8.7.5. काई–वर्ग परीक्षण की गणना –

काई–वर्ग परीक्षण में प्रत्याशित आवृत्त्यिों की गणना के लिए प्रायः तीन निम्नलिखित परिकल्पनाओं का प्रयोग किया जाता है–

(क) समान वितरण की परिकल्पना (Hypothesis of Equal Distribution)

(ख) प्रसामान्य वितरण की परिकल्पना (Hypothesis of Normal Distribution)

(ग) स्वतन्त्र वितरण की परिकल्पना (Hypothesis of Independent Distribution)

(क) समान वितरण की परिकल्पना–

इस विधि के अन्तर्गत एक तालिका बनाई जाती है। तालिका की पहली पंक्ति में प्रेक्षित आवृत्तियाँ होती हैं तथा दूसरी पंक्ति में प्रत्याशित आवृत्तियाँ होती हैं जोकि शून्य उपकल्पना पर निर्भर करती है। इसके अन्तर्गत यह शून्य परिकल्पना बना ली जाती है कि प्रत्याशित आवृत्तियाँसभी वर्गो में समान होती हैं।

उदाहरण 1–

एक परीक्षण में व्यक्तियों से राजनीति के सम्बन्ध में प्रश्न पूछा गया कि क्या आप वर्तमान राजनैतिक नेताओं की प्रतिष्ठा को दृष्टिगत रखते हुए राजनीति में प्रवेश करना पसन्द करेंगे। परीक्षण के आधार पर व्यक्तियों के आंकन की आवृत्तियाँ नीचे दी गई हैं,अब यदि यह मान लिया जाता है कि समस्त व्यक्तियों की पसन्द समान है, तब उस स्थिति में क्या प्रेक्षित आवृत्तियों में यहाँपर सार्थक अन्तर देखने में आता है।

	पक्ष	तटस्थ	विपक्ष	योग
प्रेक्षित (f_o)	40	25	25	90
प्रत्याशित (f_e)	30	30	30	90
($f_o - f_e$)	10	–5	–5	
$(f_o - f_e)^2$	100	25	25	
$(f_o - f_e)^2/ f_o$ or x^2 =	3.33	0.833	0.833	

x^2 = (3.33 + 0.833 + 0.833)

= 4.999

d.f. = (Colums – 1) (Rows – 1)

or (r – 1) (C – 1) = (3 – 1) (2 – 1) = 2

x^2 की सारणी को 2d.f. पर देखने से ज्ञात होता है कि 5 प्रतिशित विश्वास के स्तर पर यह मान 5.99 तथा 1 प्रतिशत विश्वास के स्तर पर यह मान =9.21 होना चाहिए।

परन्तु प्रस्तुत उदाहरण में x^2 का मान इन दोनों स्तरो से नीचे है अतः एवं यहाँ यह विश्वास हो जाता है कि व्यक्तियों के पसन्दों में किसी भी विश्वास के स्तर पर सार्थक अन्तर देखने में नहीं आता है अतः यहाँ पर शून्य उपकल्पना को किसी भी स्तर पर अस्वीकृत नहीं किया जा सकता है।

(ख) प्रसामान्य वितरण की परिकल्पना (Hypothesis of Normal Distribution) के आधार पर काई.वर्ग की गणना –

समान वितरण के अतिरिक्त एक स्थिति ऐसी भी हो सकती है,जबकि हमारी परिकल्पना प्रसामान्य वितरण पर आधारित हो। ऐसी स्थिति में प्रत्याशित आवृत्तियों (f_o) को ज्ञात करने का आधार प्रसामान्य वितरण के सिद्धान्त पर आधारित होते हैं। इस विधि में हम इस परिकल्पना का निर्माण करते हैं कि प्रेक्षित आवृत्तियों में सामान्य वितरण पाया जाता है।

उदाहरण 2—एक समायोजन सूची के परिणाम के आधार पर 50 विद्यार्थियों को समायोजन स्तर पर निम्न तीन श्रेणियों में विभाजित किया गया है। यदि समायोजन के स्तर पर विद्यार्थियों के वितरण का आधार प्रसामान्य वितरण मान लिया जाये, तब बताइये कि क्या इस आधार पर तथा परीक्षण के आधार पर प्राप्त विभिन्न श्रेणियों में विद्यार्थियों की संख्याओं में सार्थक अन्तर देखने में आते हैं।

	समायोजन के आधार पर 50 विद्यार्थियों की तीन श्रेणियाँ—			
समायोजन स्तर	**असन्तोष जनक**	**सन्तोष जनक**	**अधिक सन्तोष जनक**	**योग**
प्रेक्षित संख्या (f_o)	16	24	10	50

हल—

प्रसामान्य वितरण के सिद्धान्त के अनुसार एक वितरण अपने मध्यमान से $\pm 3\sigma$के अर्न्तगत वितरित रहता है, प्रस्तुत उदाहरण में सभी विद्यार्थियों की संख्या तीन श्रेणियों में विभाजित है अतएव प्रत्येक श्रेणी 6/2 = 3 की दूरी तक फैली है। और अधिक समझने के लिए नीचे दिये गये प्रसामान्य वितरण में तीन श्रेणियों की स्थिति दी गई है।

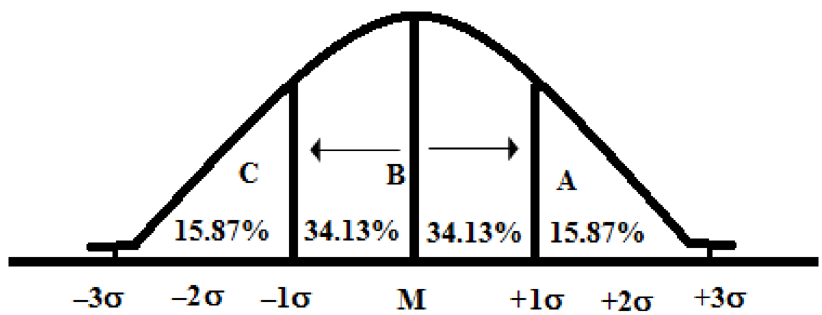

A) श्रेणी में विद्यार्थियों की संख्या = 50 − 34.13 = 15.87 प्रतिशत

B) श्रेणी में विद्यार्थियों की संख्या = 34.13 + 34.13 = 68.25 प्रतिशत

C) श्रेणी में विद्यार्थियों की संख्या = 50 − 34.13 = 15.87 प्रतिशत

चूँकि प्रस्तुत उदाहरण में विद्यार्थियों की कुल संख्या 50 है। अतः प्रसामान्य वितरण के आधार पर प्रत्येक श्रेणी में प्रत्याशित विद्यार्थियों की संख्या निम्न होगी।

A) श्रेणी 15.87/2 = 7.935 अथवा 8

B) श्रेणी 68.25/2 = 34.13 अथवा 34

C) श्रेणी 15.87/2 = 7.935 अथवा 8

x^2 का मान

समायोजन स्तर	**असन्तोष जनक**	**सन्तोष जनक**	**अधिक सन्तोष जनक**	**योग**
f_o	16	24	10	50
f_e	8	34	8	50
$f_o - f_e$	8	−10	2	
$(f_o - f_e)^2$	64	100	4	

$(f_o - f_e)^2/f_e)$	8	2.94	.5	

$x^2 = 8 + 2.94 + .5 = 11.44$

सार्थकता के लिए x^2 की आवश्यक मान–

5% स्तर पर 5.99

1% स्तर पर 9.21

प्राप्त x^2 का मान उपरोक्त दोनों मानों से अधिक अर्थात 11.44 है, अतः यहाँ पर शून्य उपकल्पना को अस्वीकृत किया जायेगा, और 1% विश्वास के स्तर पर कहा जा सकता है कि विद्यार्थियों में समायोजन के स्तर पर सार्थक अन्तर होता है।

- **कम आवृत्तियाँ तथा काई–वर्ग परीक्षण–**

जब किसी अध्ययन में प्रेक्षित आवृत्तियाँ कम रहती है तब ऐसी स्थिति में प्रत्याशित आवृत्तियों के मानो में कुछ संशोधन की आवश्यकता पड़ती है। इस तरह के संशोधन को येटस संशोधन (Yates Correction) कहते है तथा इसका मान –0.5 होता है। इस प्रकार के संशोधन के अन्तर्गत $f_o - f_e$ के मान में से 0.5 की संख्या घटा दी जाती है जिससे काई वर्ग परीक्षण के परिणाम के सार्थकता स्तर में वृद्धि हो जाती है। इस संशोधन को एक उदाहरण के द्वारा समझाा जा सकता है।

उदाहरण 3– एक विद्यार्थी ने 16 प्रश्नों में से 12 सही उत्तर दिये। काई–वर्ग परीक्षण का उपयोग करके यह ज्ञात किजिए कि प्राप्त परिणाम शून्य परिकल्पना के अनुरूप है।

	सही उत्तर	**गलत उत्तर**	**योग**
f_o	12	4	16
f_e	8	8	16
$f_o - f_e$	4	–4	2

संशोधन (.5) 3.5 3.5

$(f_o - f_e)^2 = 12.25 \quad 12.25$

$\frac{(f_o - f_e)^2}{f_e} = \frac{12.25}{8} \quad \frac{12.25}{8}$

$x^2 = 1.53 + 1.53 = 3.06$

d.f. = 1 पर काई वर्ग का मान–

5% स्तर पर 2.76

1% स्तर पर 5.412

प्राप्त काई वर्ग का मान 5 प्रतिशत स्तर पर सार्थकता के लिए आवश्यक मान से अधिक है जबकि 1 प्रतिशत स्तर पर सार्थकता के मान से कम है अतएवं अध्ययनकर्त्ता की शून्य परिकल्पना 5 प्रतिशत स्तर पर अस्वीकृत की जाती है।

- **2x2 की आसंग सारणी में काई–वर्ग की गणना–**

इस विधि का सूत्र निम्न है– $x^2 = \underline{N (AD – BC)^{2\,2}}$

(A+B)(C+D)(B+D)(A+C)

उदाहरण 4–

एक कक्षा में लड़कों तथा लड़कियों को एक चित्र दिखाया गया और सौन्दर्यात्मक आधार पर उसका आंकन सुन्दर तथा असुन्दर दो श्रेणियों में किया गया। शून्य परिकल्पना के आधार पर बताइयें कि क्या लड़कों तथा लड़कियों के आंकन में सार्थक अन्तर है।

लिंग	सुन्दर	असुन्दर	योग
लड़के	16	10	26
लड़किया	10	20	30
योग	26	30	56

2x2 आसंग सारणी

A 16	B 10	A+B 16+10= 26
C 10	D 20	C+D 10+20= 30
A+C 26	B+D 30	A+B+C+D 56

सारणी के अनुसार

$$A + B = 26$$
$$B + D = 30$$
$$C + D = 30$$
$$A + C = 26$$
$$AD = 16 X20 = 320$$
$$BC = 10X10 = 100$$
$$N = 16 + 10 + 10 + 20 = 56$$

सूत्र के अनुसार

$$x^2 = \frac{56\,(320 - 100)^2}{26 \text{ x } 30 \text{ x } 30 \text{ x } 26}$$

$$x^2 = \frac{56\,(220)^2}{26 \text{ x } 30 \text{ x } 30 \; 26}$$

$$x^2 = \frac{2710400}{608400} = 4.454$$

$$d.f. = (r - 1)\,(C - 1)$$
$$= (2 - 1)\,(2 - 1) = 1$$

1 d.f. पर सार्थकता के लिए आवश्यक x^2 का मान–

5 प्रतिशत स्तर पर 3.84

1 प्रतिशत स्तर पर 6.635

प्रस्तुत उदाहरण में प्राप्त काई–वर्ग का मान 5 प्रतिशत विश्वास के स्तर पर सार्थक है परन्तु 1 प्रतिशत विश्वास के स्तर पर सार्थक नहीं हैं।

- **काई वर्ग तथा प्रेक्षित आवृत्तियों की प्रतिशत के आधार पर गणना –**

वैसे तो प्रेक्षित आँकड़ों को प्रतिशत में परिवर्तित करके काई–वर्ग परीक्षण का उपयोग करना गलत होता है फिर भी यदि ऐसा करना पड़ता है तब उस स्थिति में प्राप्त काई–वर्ग के प्रतिशत के मान को मूल आँकड़ो के अनुपात में कम करना पड़ता है अर्थात इसमें भी येट्स संशोधन (5%) करना पड़ता है।

(ग) स्वतन्त्र वितरण की परिकल्पना (Hypothesis of Independent Distribution)-

काई–वर्ग परीक्षण के अन्तर्गत अभी तक हम इस उद्देश्य को लेकर अध्ययन किये कि क्या दो घटनाओं के मध्य प्रेक्षित आवृत्तियों (f_o)तथा प्रत्याशित आकृत्तियों (f_e) में समानता है या कोई सार्थक विचलन है। इसके अतिरिक्त अभी तक के अध्ययन में प्रेक्षित आवृत्तियों का आधार प्रायः एक चर ही रहा है, लेकिन ऐसे चर के आधार एक से अधिक भी हो सकते है, ऐसी स्थिति में, चर के स्वरूप पर कोई प्रतिबन्ध नहीं रहता है और इस प्रकार की परिकल्पना को स्वतन्त्रता की परिकल्पना कहा जाता है। इसके अन्तर्गत एक चर के कई भाग हो सकते है तथा उन भागों के समरूप दूसरे प्रेक्षित चर भी हो सकते है। इस प्रकार के चरो के प्रयोग हेतु बनने वाली सारणी को आसंग सारणी (Contigency Table) कहते है।

उदाहरण 5–

एक कक्षा में लड़के तथा लड़कियों की तीन पर्यटन स्थलों के बारे में पसन्द जानने के लिए अध्ययन किया गया। अध्ययन के परिणाम नीचे दिये गये है। क्या लड़के और लड़कियों की पर्यटन स्थलों के पसन्द में सार्थक अन्तर है।

लिंग/पर्यटन स्थल	पचमढ़ी	शिमला	नैनीताल	योग
लड़के	25	35	30	90
लड़कियाँ	15	50	25	90
योग	40	85	55	180

ऐसी स्थिति में प्रत्याशित आवृत्तियाँ ज्ञात करने के लिए हमें लड़कों तथा लड़कियों का योग करना होता है उसके बाद प्रत्येक पर्यटन स्थलों के लिए लड़के और लड़कियों के संयुक्त पसन्द के आधार पर दोनों के लिए अलग–अलग प्रत्याशित आवृत्तियाँ निकालते है। लड़के तथा लड़कियों का योग = 90+90 = 180 है। इस संख्या में 25+15 = 40 पंचमढ़ी के लिए, 35+50 = 85 शिमला के लिए तथा 30+25 = 55 नैनीताल के लिए पसन्द करते है। अतः यहाँ पर प्रत्येक लिंग के लिए प्रत्याशित आवृत्तियाँ ज्ञात करने के लिए निम्न प्रकार से गणना करते हैं– जबकि

180 की संख्या में पचमढ़ी की पसन्द 40 है।

तब 90 की संख्या में $\frac{40x90}{180} = 90$

180 की संख्या में शिमला की पसन्द 65 है

तब 90 की संख्या में शिमला $\frac{85x90}{} = 42.5$

180

इसी तरह से 180 की संख्या में नैनीताल की पसन्द 55 है

तब 90 की संख्या में नैनीताल $\frac{55 x 90}{180} = 27.5$

लड़के तथा लड़कियां की संख्या समान होने के कारण दोनों की पसन्द की प्रत्याशित आवृत्तियाँ निम्न हुई–

लिंग/पसन्द	**पंचमढ़ी**	**शिमला**	**नैनीताल**	**योग**
लड़के	20	42.5	27.5	90
लड़कियाँ	20	42.5	27.5	90
योग	40	85	55	180

x^2 की गणना

लड़के f_o	25	35	30	90
f_e	20	42.5	27.5	90
$f_o - f_e$	5	7.5	2.5	
$(f_o - f_e)^2$	25	56.25	6.25	
$\frac{(f_o - f_e)^2}{f_e}$	1	1.61	.08	
लड़कियाँ f_o	15	50	25	90
f_e	20	42.5	27.5	90
$f_o - f_e$	–5	7.5	2.5	
$(f_o - f_e)^2$	25	56.25	6.25	
$\frac{(f_o - f_e)^2}{f_e}$	1	1.61	.08	

$x^2 = 1 + 1.61 + .08 + 1 + 1.61 + .08 = 5.38$

d.f $= (r – 1) (C – 1) = (2 – 1) (3 – 1)$

$= 1 x 2 = 2$

2 d.f. पर सार्थकता के लिए x^2 की आवश्यक मान–

5% विश्वास के स्तर पर = 5.99

1% विश्वास के स्तर पर = 9.21

उपरोक्त उदाहरण में प्राप्त x^2 का मान 5 प्रतिशत विश्वास के स्तर पर सार्थक है। परन्तु 1 प्रतिशत विश्वास के स्तर पर सार्थक नहीं है। अतः यहाँ पर 5 प्रतिशत विश्वास के स्तर पर शून्य उपकल्पना को अस्वीकृत किया जाता है।

8.7.6 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न :–

निर्देश : अपना उत्तर नीचे दिए गऐ स्थान में लिखें। इस इकाई के अंत में दिये गए उत्तरों से अपने उत्तर की जांच करें।

- x^2 शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम किस सन् में किया गया।

- काई वर्ग परीक्षण का आविष्कार सर्वप्रथम किसने किया।

- काई–वर्ग परीक्षण को सामान्य उद्‌देश्य सांख्यिकी किसने कहाँ है।

8.8 सांख्यिकीय तालिका–

टी–तालिका

जबकि d.f. 24 है, तब 2.06 का t का मान .05 विश्वास के स्तर पर सार्थक है, तथा 2.80 का मान 0.01 विश्वास के स्तर पर सार्थक है।

Degrees of Freedom	**Probability (P)**			
	0.1	**0.05**	**0.05**	**0.01**
1	t=6.34	t=12.71	t=31.82	t=63.66
2	2.92	4.30	6.96	9.92
3	2.35	3.18	4.54	5.84
4	2.13	2.78	3.75	4.60
5	2.02	2.57	3.36	4.03
6	1.94	2.45	3.14	3.71
7	1.90	2.36	3.00	3.50
8	1.86	2.31	2.90	3.36
9	1.83	2.26	2.82	3.25
10	1.81	2.23	2.76	3.17
11	1.80	2.20	2.72	3.11
12	1.78	2.18	2.68	3.06
13	1.77	2.16	2.65	3.01

14	1.76	2.14	2.62	2.98
15	1.75	2.13	2.60	2.95
16	1.75	2.12	2.58	2.92
17	1.74	2.11	2.57	2.90
18	1.73	2.10	2.55	2.88
19	1.73	2.09	2.54	2.86
20	1.72	2.09	2.53	2.84
21	1.72	2.08	2.52	2.83
22	1.72	2.07	2.51	2.82
23	1.71	2.07	2.50	2.81
24	1.71	2.06	2.49	2.80
25	1.71	2.06	2.48	2.79
26	1.71	2.06	2.48	2.78
27	1.70	2.05	2.47	2.77
28	1.70	2.05	2.47	2.76
29	1.70	2.04	2.46	2.76
30	1.70	2.04	2.46	2.75
35	1.69	2.03	2.44	2.72
40	1.68	2.02	2.42	2.71
45	1.68	2.02	2.41	2.69
50	1.68	2.01	2.40	2.68
60	1.67	2.00	2.39	2.66
70	1.67	2.00	2.38	2.65
80	1.66	1.99	2.38	2.64
90	1.66	1.99	2.37	2.63
100	1.66	1.98	2.36	2.63
125	1.66	1.98	2.36	2.62
150	1.66	1.97	2.35	2.61
200	1.65	1.97	2.35	2.60
300	1.65	1.97	2.34	2.59
400	1.65	1.96	2.34	2.59
500	1.65	1.96	2.33	2.59
1000	1.65	1.96	2.33	2.58
∞	1.65	1.96	2.33	2.58

काई–वर्ग के मान की सार्थकता की जाँच की तालिका

उदाहरणार्थ यदि 2d.f. पर x^2 का मान 6.01 है, (और हमारी निराकरणीय परिकल्पना द्विपक्षीय है) तब यह मान .05 विश्वास के स्तर पर सार्थक है, क्योंकि यह मान यहाँ दिये गये आवश्यक

मान 5.991 से अधिक है, परन्तु यह मान (6.01) विश्वास के .01 स्तर पर सार्थक नहीं है, क्योंकि यह Table में दिये आवश्यक मान 9.210 से कम है।

d.f.	0.10	0.05	0.02	0.01
1	2.706	3.841	5.412	6.635
2	4.605	5.991	7.824	9.210
3	6.251	7.815	9.837	11.345
4	7.779	9.488	11.668	13.277
5	9.236	11.070	13.388	15.086
6	10.645	12.592	16.033	16.812
7	12.017	14.067	15.622	18.475
8	13.362	15.507	18.168	20.090
9	14.684	16.919	19.679	21.666
10	15.987	18.307	21.161	23.209
11	17.275	19.675	22.618	24.725
12	18.549	21.026	24.054	26.217
13	19.812	22.362	25.472	27.688
14	21.064	23.685	26.873	29.141
15	22.307	24.996	28.259	30.578
16	23.542	26.296	29.633	32.000
17	24.769	27.587	30.995	33.409
18	25.989	28.869	32.346	34.805
19	27.204	30.144	33.687	36.191
20	28.412	31.410	35.020	27.566
21	29.615	32.671	36.343	38.932
22	30.813	33.924	37.659	40.289
23	32.007	35.172	38.968	41.638
24	33.196	36.415	40.270	41.980
25	34.382	37.652	41.566	44.314
26	35.563	38.885	42.856	45.642
27	36.741	40.113	44.140	46.963
28	37.916	41.337	45.419	48.278
29	39.087	42.557	46.693	49.588
30	40.256	43.773	47.962	50.892

8.9 सारांश–

प्राचल सांख्यिकी का सम्बन्ध प्रायः एक समष्टि के किसी एक विशेष प्राचल से होता है। ऐसे आंकड़ों के आधार ही प्राचल के विषय में आंकलन लगाया जाता है। इसी कारण ऐसे आंकड़ों को प्राचल आंकड़ें कहा जाता है। इस प्रकार के आंकड़ों का अध्ययन मानक त्रुटि (Standard

Error), टी–परीक्षण (t-test) तथा प्रसरण विश्लेषण के आधार पर किया जाता है। अप्राचल सांख्यिकी वह सांख्यिकी है जो जिस समष्टि से प्रतिदर्श लिया जाता है, के बारे में कोई विशेष शर्त नही रखती है चूँकि इस प्रकार की सांख्यिकी में समष्टि के बारे में कोई शर्त नही होती है। अतः इसे वितरण मुक्त सांख्यिकी भी कहा जाता है। टी–परीक्षण का उपयोग प्रायः छोटे आकड़ो के बीच मध्यमानो की सार्थकता की जाँच के लिए किया जाता है। इस परीक्षण का प्रतिपादन डब्लू0एम0 गैसेट (W.M. Gosset) द्वारा किया गया। प्रायः इस प्रकार के परीक्षण का उपयोग विद्यार्थियों द्वारा ही किया जाता है, इसी कारण से इसे विद्यार्थी का परीक्षण भी कहा जाता है।

काई–वर्ग परीक्षण का सामाजिक विज्ञानों में विशेष महत्व हैं। इस परीक्षण का अविष्कार Helmert (1876) और कार्ल पियरसन (1900) ने किया। इस परीक्षण को हम परिमाणात्मक तथा गुणात्मक दोनों प्रकार के प्रदत्तों पर उस समय प्रयोग कर सकते है जब हम दो तरह की आवृत्तियों में पायी जाने वाले सम्बन्धों की सार्थकता का मापन करना चाहते है। काई–वर्ग में प्रत्याशित आवृत्तियों की गणना के लिए प्रायः तीन प्रकार की परिकल्पनाओं का प्रयोग किया जाता है– समान वितरण की परिकल्पना, प्रसामान्य वितरण की परिकल्पना और स्वतन्त्र वितरण की परिकल्पना।

8.10 शब्दावली–

- काई–वर्ग परीक्षण (x^2)– काई–वर्ग परीक्षण प्रेक्षित और प्रत्याशित आवृत्तियों के भिन्नताओं की मात्रा का वर्णानात्मक माप है।
- प्रेक्षित आवृत्ति (0bserved frequency)– काई–वर्ग परीक्षण में प्रेक्षित आवृत्तियाँ वह होती है जो अनुसन्धानकर्त्ता अपने अध्ययन के आधार पर प्राप्त आंकड़े को आवृत्ति के रूप में प्राप्त करता है।
- प्रत्याशित आवृत्ति (Expected Frequencies) – प्रत्याशित आवृत्ति इस प्रकार की आवृत्ति होती है जो किसी सिद्धान्त पर आधारित होती है।
- टी–परीक्षण (t-test)– टी–परीक्षण या टी– अनुपात वास्तव में दो माध्यों के अन्तर तथा इस अन्तर के मानक त्रुटि का एक अनुपात होता है।

8.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर–

- टी–परीक्षण का प्रयोग उस समय किया जाता है जब प्रतिदर्श का आकार छोटा होता है।
- टी– परीक्षण का सूत्र–

$$t = \frac{M_1 - M_2}{\sqrt{\left(\frac{\Sigma d_1^2 + \Sigma d_2^2}{N_1 + N_2 - 2}\right)\left(\frac{N_1 + N_2}{N_1 N_2}\right)}}$$

- टी– परीक्षण का सर्व प्रथम प्रयोग डब्लू–एम0गोसेट (W.M. Gosset) ने सन्1908 में किया
- काई–वर्ग शब्द का प्रयोग सर्व प्रथम सन् 1900 में किया गया ।

- काई–वर्ग परीक्षण का आविष्कार हेल्मर्ट (1876) और कार्ल पियरसन (1900) ने किया।
- काई–वर्ग परीक्षण को गिलफोर्ड (1956) ने सामान्य उद्देश्य सांख्यिकी कहा है।

8.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची एवं सहायक पाठ्य सामग्रीः–

1. Anastasi, Anne, Psychological Testing, New York: The MacMillan Co., 1954.
2. Garrett, H.E., Statistics in Psychology and Education, Bombay: Vakils, Feffer and Sinons P.Ltd. 1967.
3. भागर्व एम0 (1999) आधुनिक मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं मापन, हरप्रसाद भार्गव, आगरा।
4. सिंह, अरूण कुमार (2002) मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में सांख्यिकी, नोवेल्टी एण्ड कम्पनी, पटना–8।
5. कपिल, एच. के. (1994) सांख्यिकी के मूलतत्त्व, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
6. रामजी श्रीवास्तव (2003), मनोविज्ञान, शिक्षा तथा समाजशास्त्र में सांख्यिकीय विधियाँ, मोतीलाल बनारसीदास बंगलोरोड, दिल्ली।

8-13 निबन्धात्मक प्रश्न–

- प्राचल सांख्यिकी तथा अप्राचल सांख्यिकी की तुलना कीजिए।
- एक कक्षा के 10लड़कों तथा 10 लड़कियों पर एक परीक्षण किया गया, जिसका परिणाम नीचे दिया गया है, यहां पर शोधकर्ता ने शून्य उपकल्पना बनाई है। टी– परीक्षण का प्रयोग करके बताइये कि शोधकर्ता की उपकल्पना यहां सत्य है।

लड़को का प्राप्तांक	12	15	14	11	10	6	7	13	9	10
लड़कियों का प्राप्तांक	12	14	16	18	20	6	8	9	10	11

- टी–परीक्षण का उपयोग कब करते हैं। टी–परीक्षण तथा क्रान्तिक अनुपात परीक्षण के बीच अन्तर को स्पष्ट कीजिए।
- काई–वर्ग परीक्षण से आप क्या समझते हैं इसकी उपयोगिता तथा विभिन्न चरणों के विषय में सविस्तार वर्णन कीजिए।
- एक परीक्षण में तीन रंगो के विषय में विद्यार्थियों की पसन्द को नीचे दिया गया है, बताइयें क्या रंग–पसन्द के आधार पर विद्यार्थियों में सार्थक अन्तर है।

रंग	**गुलाबी**	**हरा**	**नीला**	**योग**
विद्यार्थियों की संख्या	20	10	12	42

- आर्थिक स्तर के आधार पर एक चिकित्सालय में मानसिक रोगियों की विभिन्न रोगों से पीड़ित होने की संख्या निम्न है, क्या यहां विभिन्न आर्थिक स्तरों के आधार पर रोगों के होने में सार्थक अन्तर है।

स्तर/रोग	Psychotic	Neurotic	Organic	Total
Upper	80	60	10	150
Middle	60	30	20	110
Lower	50	40	30	120
योग	190	130	60	380

इकाई-9 परीक्षण विश्वसनीयता

इकाई संरचना

9.1 प्रस्तावना

9.2 उद्देश्य

9.3 विश्वसनीयता का अर्थ

9.4 विश्वसनीयता को ज्ञात करने के विधियाँ

9.4.1 पुनर्परीक्षण विधि

9.4.2 समान प्रारूप विधि

9.4.3 अर्द्ध-विच्छेद विधि

9.4.4 तर्कयुक्त समानता विधि

9.5 परीक्षण प्राप्तांकों की विश्वसनीयता को प्रभावित करने वाले कारक

9.5,1 बाह्य कारक

9.5.1 आतंरिक कारक

9.6 परीक्षण प्राप्तांकों की विश्वसनीयता को कैसे उन्नत बनाया जाए

9.7 सारांश

9.8 अभ्यास प्रश्न

9. 9 संदर्भ ग्रंथ

9.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

9.12 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

9.1 प्रस्तावना

विश्वसनीयता का अर्थ जानने से पहले यह आवश्यक है कि आप यह जानें कि विश्वसनीयता की आवश्यकता कहाँ एवं कब होती है। प्रत्येक संस्थान को अपने-अपने उद्देश्यों की पूर्ति के अनुसार परीक्षण

की आवश्यकता होती है। उदाहरण के लिए एक अध्यापक को अपने विद्यार्थी की मानसिक स्थिति के बारे में जानने के लिए मानसिक परीक्षण की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार निर्देशक संस्थान का संदर्षनकर्ता, मनोवैज्ञानिक, शिक्षा शास्त्री, सैन्य अधिकारी एवं शोधकर्ता आदि अपने-अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए परीक्षण की रचना करते है। ऐसी स्थिति में यह आवश्यक है कि परीक्षण की रचना करते समय परीक्षण रचना के सामान्य सिद्धांतों का ध्यान रखा जाए जिससे परीक्षण की रचना त्रुटिपूर्ण रूप से हो सकें और परीक्षण अपने उद्देश्यों की पूर्ति कर सकें।

9.2 उद्देश्य:

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप

- विश्वसनीयता का अर्थ जान पायेंगे।
- विश्वसनीयता को ज्ञात करने के विधियाँ जान पायेंगे।
- परीक्षण प्राप्तांकों की विश्वसनीयता को प्रभावित करने वाले कारकों को बता पायेंगे।
- परीक्षण प्राप्तांकों की विश्वसनीयता को उन्नत बनाने के तरीके जान पायेंगे।

9.3 विश्वसनीयता का अर्थ:

विश्वसनीयता का शाब्दिक अर्थ है विश्वास करना। विश्वसनीयता का अर्थ है कि एक परीक्षण के निष्कर्ष आवश्यक रूप से समान आने चाहिए चाहे वह किसी दूसरे शोधकर्ता के द्वारा किया जाए। अन्य शोधकर्ता भी उस परीक्षण के निष्कर्ष को उसी स्थिति में समान निष्कर्ष ही प्रस्तुत करें। तभी वह परीक्षण अपनी विश्वसनीयता का प्रमाण दे सकता है तथा यह तथ्य इस बात को भी स्वीकार करता है कि सभी शोधकर्ता परिकल्पना को स्वीकार करते हैं। उदाहरण के लिए अगर आप समय परीक्षण के लिए स्टॉप वॉच का इस्तेमाल कर रहें है तो आप यह अवश्य ही ज्ञात कर लें कि यह मशीन विश्वसनीय है और यह आपको सही समय बताएगी। अतः मशीन की विश्वसनीयता ही आपके परीक्षण की विश्वसनीयता को निर्धारित करेगी। समय परीक्षण को जानने के लिए वैज्ञानिक उसका मापन कई प्रकार से करते हैं ताकि उस परीक्षण की विश्वसनीयता बनी रहे।

इसी प्रकार कई उदाहरणों में मानव के निष्कर्ष की विश्वसनीयता तथा वैधता पर भी संदेह किया जाता है। यह मानव की स्थिति, समय तथा व्यवहार पर भी निर्भर करती है। इस प्रकार के परीक्षण की विश्वसनीयता कम ही रहती है। विश्वसनीयता एक परीक्षण की वैधता को जानने के लिए अति आवश्यक है तथा इससे परीक्षण के निष्कर्ष भी मजबूत होते हैं।

दूसरे शब्दों में एक विश्वसनीय परीक्षण सदैव विभिन्न योग्यताओं का एकरूपता से मापन करता है चाहे वह परीक्षण कितनी ही बार क्यों न किया जाए।

सैद्धान्तिक रूप से -

"विश्वसनीयता को निरीक्षित प्राप्ताकों (Observed Scores) तथा सत्य प्राप्ताकों (Time Score) के मध्य अन्तरों का मापक समझा जाता है।'' एक परीक्षण में निरीक्षित तथा सत्य प्राप्ताकों का होना आवश्यक है। निरीक्षित प्राप्तांक वह प्राप्तांक है जिसे छात्र वास्तविक रूप से प्राप्त करता है तथा सत्य प्राप्तांक वह प्राप्तांक है जिसे विद्यार्थी परीक्षण के समय प्राप्त करता है।

यहाँ पर यह ध्यान देने योग्य बात है कि विश्वसनीयता का मापन नहीं किया जा सकता है, इसका अनुमान लगाया जा सकता है। उदाहरण के लिए यदि न्यूरोरिजम गुण को मापन के लिए एक परीक्षण की रचना की जाती है तो यह परीक्षण कितनी बार भी किया जाऐ उतनी बार ही उसके निष्कर्ष समान होने चाहिए। अगर वह परीक्षण वही निष्कर्ष देता है तो यह परीक्षण की विश्वसनीयता है।

विश्वसनीयता को कुछ विद्धानों ने निम्न प्रकार से परिभाषित किया है।

एनेस्टेसी (Anastasi) 1957 के अनुसार ''परीक्षण विश्वसनीयता विभिन्न अवसरों या समान पदों के विभिन्न विन्यासों में एक ही व्यक्ति के संगति प्राप्ताकों की प्राप्ति की ओर इंगित करती है।'' (The reliability of a test refers to the consistency of scores obtained by the same individuals on different occasions or with different sets of equivalent items)

गैरिट (Garrett,H.E.) 1996 के अनुसार ''एक परीक्षण या मानसिक मापन यन्त्र की विश्वसनीयता उस संगति पर निर्भर करती है जो उन व्यक्तियों की योग्यता का अनुमान लगाती है, जिनके लिए उसका प्रयोग होता है। (The reliability of a test of any measuring instrument depends upon the consistency with which it gauges the ability to whom it is applied)

गिलफोर्ड (Guilford) 1954 के अनुसार ''विश्वसनीयता प्राप्त परीक्षण प्राप्ताकों में वास्तविकता विचरण अनुपात है।''

9.4 विश्वसनीयता को ज्ञात करने के विधियाँ:

परीक्षण की विश्वसनीयता को ज्ञात करने के लिए विभिन्न प्रकार की परीक्षण विधियों का प्रयोग करते हैं लेकिन हम यहाँ मुख्य रूप से उपयोग में आने वाली विधियों को दो भागों में विभाजित कर सकते है।

9.4.1 पुनर्परीक्षण विधि

परीक्षण-विश्वसनीयता ज्ञात करने की यह अत्यधिक प्रचलित विधि है क्योंकि इसमें परीक्षण के एह ही रूप का दो अवसरों पर प्रशासन करना होता है अर्थात् एक ही परीक्षण को दो विभित्र समयों में प्रशासित किया जाता हैं। उनका पुनः परीक्षण कुछ समय, दिन या महीनों के अन्तरों से किया ज्ञात कर लिया जाता है। अतएव यह विधि देखने में सरल है।

इस विधि की कुछ अपनी परिसीमाएं हैं। चूँकि इसमें एक ही परीक्षा दो बार प्रशासित की जाती है, अतएव विश्वसनीयता पर अभ्यास एवं स्मृति के प्रभाव से उनके फलांक अत्यधिक आते हैं। यदि उनको दोनों

परीक्षण देने के मध्य कम समय दिया गया तो स्मृति के प्रभाव से उनके फलांक अत्यधिक आते हैं। अतएवं यदि एक ही परीक्षण को दो विभित्र समयों में प्रशासित किया जाये और उनके समय का अन्तर कम (कुछ दिन) हो तो विश्वसनीयता को अभ्यास एवं स्मृति जैसे प्रभावित करते हैं किन्तु यदि उनको पुनर्परीक्षण अधिक समय (6महिने) बाद किया जाये तो बालक के मानसिक विकास एवं अनुभव सम्बन्धी तत्व उसे प्रभावित करेंगे।

9.4.2 समान प्रारूप विधि

परीक्षण-विश्वसनीयता ज्ञात करने की इस विधि के अन्तर्गत परीक्षण को दो रूपों में निर्मित किया जाता है तथा एक ही समूह पर उन्हें दो भित्र अवसरों (एक अवसर पर प्रथम प्रारूप तथा द्वितीय अवसर पर समान प्रारूप) पर प्रशासित कर दोनों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यह विश्वसनीयता गुणांक-परीक्षण के दो पहलुओं कालिक स्थिरता के नाम से भी जाना जाता है क्योंकि इसमें परीक्षण के दो समान प्रारूप उपलब्ध होते हैं। यद्यपि दो परीक्षणों को पूर्णतया समान रूप से निर्मित करना असम्भव है फिर भी कुछ आधारभूत एवं मान्य कसौटियों के आधार पर दो समान प्रारूपों को एक ही उदेश्य की प्राप्ति के लिए स्वतन्त्र रूप से निर्मित किया जा सकता है। इस विधि की सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि इसमे अभ्यास एवं स्मृति का कम प्रभाव पड़ता है क्योंकि दोंनों प्रारूपों में पदों का स्वरूप लगभग एक-सा होता है न कि पद बिलकुल वैसे ही हो जैसे प्रथम प्रारूप में किन्तु इस विधि की भी कुछ कारणों से आलोचना की जाती है। इन्ही परिसीमाओं के कारण इसका प्रयोग संकुचित रहता है।

9.4.3 अर्द्ध-विच्छेद विधि

जब परीक्षण की विश्वसनीयता उसकी आन्तरिक संगति ज्ञात करने निकालनी होती है तो उसकी सर्वाधिक लोकप्रिय विधि अर्द्ध-विच्छेद विधि है। इस विधि में जिस परीक्षण की विश्वसनीयता ज्ञात करनी होती है उस परीक्षण का प्रशासन एक समूह के व्यक्तियों पर कर लिया जाता हैं प्रशासन के बाद परीक्षण को दो बराबर भागों में बाँट दिया जाता है। परीक्षण को दो अर्द्ध या दो बराबर भागों में बाँटने की दो विधियाँ हैं। पहली विधि विषम-सम विधि कहलाती है। इस विधि में परीक्षण के सम पदों को एक भाग या अर्द्ध में रखते हैं तथा परीक्षण के विषम पदों को दूसरे भाग या अर्द्ध में रखते हैं। उदाहरण के लिए, यदि एक परीक्षण में 50 पद हैं तो सभी सम पदों अर्थात 2, 4, 6, 8, 10........50 को एक भाग में रखेंगे। इसी प्रकार के विषम पदों अर्थात् 1, 3, 5, 7, 9............49 पदों को दूसरे अर्द्ध या भाग में रखते हैं। इस प्रकार प्रत्येक भाग में 25-25 पद उपरोक्त क्रम-संख्या के होंगे।

परीक्षण को दो अर्द्ध या बराबर भागों में बाँटने की दूसरी विधि प्रथम बनाम द्वितीय अर्द्ध विधि कहलाती है। उदाहरण के लिए, यदि परीक्षण में 50 पद हैं तो प्रथम अर्द्ध भाग में 1 से 25 संख्या तक के पद होंगे तथा द्वितीय अर्द्ध भाग में 25 से 50 संख्या तक के पद होंगे। अर्द्ध-विच्छेद विधि से विश्वसनीयता ज्ञात करने के लिए विषम-सम विधि का उपयोग बहुधा अधिक किया जाता है। परीक्षण का प्रशासन करने के

बाद परीक्षण को उपरोक्त में से किसी एक विधि द्वारा दो भागों में बाँट दिया जाता है। इस प्रकार से दो भागों में बाँटने से प्राप्तांकों के दो सेट प्राप्त हो जाते हैं। प्राप्तांकों के इन सेटों के बीच विश्वसनीयता ज्ञात करने के लिए स्पीयरमैन-ब्राउन सूत्र (Spearman Brown’s Formula) का प्रयोग किया जाता है।

$$r_{tt} \frac{2r}{1+r}$$

यहाँ

R_{tt} = सम्पूर्ण परीक्षण का विश्वसनीयता -गुणांक

r = आधे परीक्षण का विश्वसनीयता-गुणांक

गणना के पश्चात् सहसम्बन्ध गुणांक का जो मान प्राप्त होता है उसके आधार पर परीक्षण की विश्वसनीयता का ज्ञान हो जाता है। सहसम्बन्ध गुणांक का मान जितना अधिक है परीक्षण होता उतना ही अधिक विश्वसनीयता होता है तथा सहसम्बन्ध गुणांक का मान जितना कम होता है। परीक्षण की विश्वसनीयता उतनी ही कम होती है।

9.4.4 तर्कयुक्त समानता विधि (Kuder-Richardson formula or Method of Rational Equivalence)

कूडर-रिचर्डसन के नाम से जाने वाली इस विधि के अन्तर्गत परीक्षण के विभिन्न विधियों के दोषों का निवारण होता है। इस विधि के अन्तर्गत विभिन्न पदों का पारस्परिक सम्बन्ध एवं पदों का समस्त परीक्षण से सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। जिसे ’आन्तरिक संगति गुणांक’ (coefficient of internal consistency) के नाम से व्यक्त किया जाता है। पदों का विश्लेषण करने के लिए पद कठिनता सूचांक विधि (item difficulty index method) का प्रयोग किया जाता है। पद कठिनता प्रत्येक पद के उत्तर को जानने का अनुपात है। उदाहरण के लिए ‘P’ का चिन्ह पद की कठिनता का सूचांक है और पद ‘X’ P= 0.67 है इसका अर्थ है कि पद ‘X’ का उत्तर 74% विद्यार्थियों ने सही दिया है। पदों की विश्वसनीयता को ज्ञात करने के लिए कूडर-रिचर्डसन सूत्र संख्या 20 का प्रयोग किया जाता है।

$$KR_{20} = \left(\frac{n}{n-1}\right) \left(\frac{\sigma 2-\sum pq}{\sigma 2}\right)$$

यहाँ

n = परीक्षण में पदों की संख्या

σ^2 = सम्पूर्ण परीक्षण के सांख्याकों का विचलन

p = प्रत्येक पद के सही उत्तरों का अनुपात

q = प्रत्येक पद के गलत उत्तरों का अनुपात

यहाँ कूडर-रिचर्डसन विधि के अर्न्तगत सूत्र संख्या 20 विश्वसनीयता ज्ञात करने के विशेष पदों के लिए उपयोग की जाती है जहाँ पद के प्राप्तांक 0 या 1 हो (उदाहरण के लिए सही या गलत) परीक्षण के सभी एकांश समजातीय होने चाहिये अर्थात प्रत्येक एकांश द्वारा एक ही क्षमता या गुण समान अनुपात में मापा जाना चाहिये।

9.5 परीक्षण प्राप्तांकों की विश्वसनीय को प्रभावित करने वाले कारक (Factors Influencing the Reliability of Test Scores):

किसी भी परीक्षण प्राप्तांकों की विश्वसनीयता कई कारकों से प्रभावित होती है। इन कारकों को परीक्षण विशेषज्ञों ने (test experts)ने निम्नांकित दो भागों में बाँटा है-

(अ). बाहय कारक (Extrinsic factors)

(ब) आन्तरिक कारक (Intrinsic factors)

9.5,1 बाहय कारक (Intrinsic factors) - बाहय कारक से तात्पर्य उन कारकों से होता है जो परीक्षण (test) से संबंधित नहीं होते हैं फिर भी उनका प्रभाव परीक्षण प्राप्तांकों (test scores) की विश्वसनीयता पर पड़ता है। ऐसे कारकों में निम्नांकित अधिक प्रमुख हैं-

1. **समूह विभिन्नता (Group variability.** अध्ययनों से यह स्पष्ट हो गया है कि जब प्रतिदर्श या परीक्षार्थियों का समूह ऐसा होता है जिसमें समता अधिक होती है, तो ऐसी परिस्थिति में परीक्षण प्राप्तांकों की विश्वसनीयता कम हो जाती है। दूसरे तरफ यदि प्रतिदर्श ऐसा है कि उसमें कई कारणों से विभिन्नता (heterogeneity) है, तो वैसी परिस्थिति में परीक्षण प्राप्तांकों की विश्वसनीयता बढ़ जाती है। समूह में समता अधिक होने से परीक्षण के प्राप्तांकों में विभिन्नता कम हो जाती है और इससे तब वास्तविक प्रसरण भी कम हो जाती है। जब वास्तविक प्रसरण कम हो जाता है, तो स्वभावतः परीक्षण की विश्वसनीयता (reliability) भी कम हो जाती है।
2. **परीक्षार्थियों द्वारा अटकलबाजी** (Guessing by examinees)- परीक्षण प्राप्तांकों की विश्वसनीयता (reliability) पर परीक्षार्थियों द्वारा उत्तर देते समय किये गये अटकलबाजी का भी प्रभाव पड़ता है। द्विविकल्पी अनुक्रिया एकांशों में अटकलबाजी के बाधार पर एकांशों के सही उत्तर देने की संभावना 50% होती है परन्तु बहु-विकल्पी अनुक्रिया एंकाशों में यह संभावना कम हो जाती

है अटकलबाजी का दो कुप्रभाव कुल प्राप्तांक पर पड़ता है। पहला तो यह कि इस तरह के अटकलबाजी से परीक्षार्थी का कुल प्राप्तांक अनावश्यक रूप से बढ़ जाता है जिसका परिणाम यह होता है कि परीक्षण प्राप्तांकों की विश्वसनीयता मिथ्या ढंग से अधिक ऊँचा हो जाता है। दूसरा, अटकलबाजी से त्रुटि प्राप्तांक में वृद्धि होती है जिससे प्राप्त प्रसरण में त्रुटि प्रसरण का योगदान बढ़ता है और परीक्षण प्राप्तांकों की विश्वसनीयता कम हो जाती है।

3. **वातावरण की अवस्थाएँ** (Environmental conditions) - वातावरण के विभिन्न पहलुओं जैसे रोशनी, ठंडक, गर्मी आदि का भी प्रभाव परीक्षार्थी पर पड़ता है और इस तरह से उसके परीक्षण प्राप्तांक प्रभावित हो जाते हैं। अध्ययनों से पता चलता है कि यदि वातावरण के इन पहलुओं को नियंत्रित नहीं रखा जाता है, तो इसका कुप्रभाव परीक्षण प्राप्तांकों पर पड़ता है। ऐसे प्राप्तांकों में त्रुटि प्रसरण अधिक हो होते हैं और अन्ततोगत्वा, परीक्षण प्राप्तांकों की विश्वसनीयता कम हो जाती है।
4. **परीक्षार्थियों का क्षणभंगुर अस्थिरता** (Momentary fluctuations of the examinees)- अध्ययनों से यह भी पता चलता है कि परीक्षार्थियों में क्षणभंगुर, अस्थिरता की स्थिति होती है जिसका परिणाम यह होता है कि कभी तो परीक्षण प्राप्तांक बढ़ जाता है और कभी घट जाता है इससे परीक्षण प्राप्तांकों की विश्वसनीयता प्रभावित हो जाती है। परीक्षार्थियों में क्षणभंगुर, अस्थिरता की स्थिति कई कारणों से जैसे अचानक ऊपर से हवाई जहाज के गुजरने पर उत्पन्न आवाज से ,गत रात ठीक ढंग से नींद नहीं आने से उत्पन्न चिन्ता आदि से पैदा होता देखा गया है। इन सबों से परीक्षण प्राप्तांकों में त्रुटि अंको का योगदान बढ़ाता है और फिर परीक्षण प्राप्तांकों की विश्वसनीयता कम होती है।

9.5.2 आंतरिक कारक (Extrinsic factors)-

आन्तरिक कारक से तात्पर्य वैसे कारकों से होता है जो परीक्षण से सम्बन्धित होते हैं और परीक्षण प्राप्तांकों की विश्वसनीयता को प्रभावित करते हैं। ऐसे कारकों में निम्नांकित प्रमुख हैं-

1. **परीक्षण की लम्बाई (Length of the test)** - परीक्षण प्राप्तांकों पर परीक्षण की लम्बाई यानी एकांशों की संख्या का सीधा प्रभाव पड़ता है। यदि परीक्षण में एकांशों की संख्या अधिक होती है, यानी परीक्षण की लम्बाई की अधिक होती है। इसके दो कारण बतलाये गये हैं। पहला तो यह कि परीक्षण की लम्बाई अधिक होने से प्राप्तांकों में विभिन्नता अधिक हो जाती है और इससे परीक्षण की विश्वसनीयता बढ़ जाती है। दूसरा कारण यह है कि लम्बे परीक्षण द्वारा परीक्षार्थियों के ज्ञान या क्षमता के बारे में छोटे परीक्षण की अपेक्षा अधिक संगत सूचनाएँ मिल जाती हैं। इससे परीक्षण प्राप्तांकों की विश्वसनीयता बढ़ जाती है।

जब किसी परीक्षण की लम्बाई को अतिरिक्त समरूप एकांशों द्वारा दुगुना या तीन गुना या कई गुना बढ़ा दिया जाता है, तो परीक्षण प्राप्तांकों की विश्वसनीयता बढ़ जाती है। इस बढ़े हुए परीक्षण की विश्वसनीयता की जाँच स्पीयरमैन-ब्राऊन सूत्र के आधार पर किया जाता है। यह सूत्र निम्नांकित हैं-

$$r_{nn} = \frac{(n)(r_{tt})}{1 + (n-1)r_{tt}}$$

r_{nn}= (Reliability of the lengthened test)

n= परीक्षण की बढ़ी हुई लम्बाई की गुणा की संख्या (Number of the times the test has been increased)

r_{tt} =मूल परीक्षण की विश्वसनीयता (Reliability of the original test)

मान लिया जाए कि एक परीक्षण की एक परीक्षण में 40 एकांश (item) हैं जिनकी विश्वसनीयता 0.60 है। इस बढ़े हुए लम्बाई वाले परीक्षण की विश्वसनीयता सूत्र 13 के अनुसार इस प्रकार होगी-

$$r_{nm} = \frac{(3)(0.60)}{1 + (3-1)0.60} = 0.818 = 0.82$$

स्पष्ट हुआ कि जब परीक्षण की लम्बाई तिगुनी कर दी गयी तो परीक्षण प्राप्तांकों की विश्वसनीयता 0.60 से बढ़कर 0.82 हो गयी।

2. **एकांशों में समरूपता**(Homogeneity of items)- परीक्षण प्राप्तांकों की विश्वसनीयता पर एकांशों की समरूपता का भी प्रभाव पड़ता है। एकांशों की समरूपता के दो पहलू होते हैं। पहला पहलू परीक्षण में एक एकांशों का दूसरे एकांशों से सहसम्बन्ध का है तथा दूसरा पहलू एक एकांश से दूसरे एकांश द्वारा मापे जाने वाले शीलगुण या कार्य की समरूपता का है। जब परीक्षण के एकांश ऐसे होते हैं जिसमें समरूपता कम होती है, अर्थात् जिनके एकांशों में एक-दूसरे के साथ सहसम्बन्ध नहीं है, तो ऐसे एकांशों पर आधारित परीक्षण प्राप्तांकों की विश्वसनीयता कम होती है। परन्तु दूसरे तरफ यदि एकांश का स्वरूप इसके विपरीत है, अर्थात् सभी एकांशों द्वारा एक ही तरह की क्षमता या शीलगुण का मापन होता है तथा एकांशों के बीच आपस में सहसम्बन्ध अधिक है, तो ऐसी स्थिति में परीक्षण प्राप्तांकों की विश्वसनीयता अधिक होती है।
3. **एकांश की कठिनता स्तर** (Difficulty level of items)- परीक्षण प्राप्तांकों की विश्वसनीयता एकांशों की कठिनता स्तर द्वारा भी प्रभावित होती है। यदि एकांश बहुत अधिक कठिन होते हैं, तो वैसी परिस्थिति में परीक्षार्थीयों की वैयक्तिक विभिन्नता का मापन नहीं होता है क्योंकि ऐसे एकांशों के प्रति सभी परीक्षार्थी एक समान ढंग से उत्तर देते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि प्राप्तांकों की

विश्वसनीयता कम हो जाती है। कुछ परीक्षण विशेषज्ञों जैसे हुसेक तथा लिभिंगस्टोन का कहना है कि यथासम्भव परीक्षण की कठिनता स्तर ऐसी हो जो परीक्षार्थियों के लिए कष्टकर न हो तो अच्छा है क्योंकि कठिनता स्तर अधिक होने से परीक्षार्थी अटकलबाजी करना प्रारम्भ कर देता है जिससे त्रुटि प्रसरण में वृद्धि हो जाती है और परीक्षण की विश्वसनीयता गुणांक कम हो जाती है।

4. **एकांशों की विभेदन शक्ति** (Discrimination power of items - परीक्षण प्राप्तांकों की विश्वसनीयता परीक्षण के विभेदन शक्ति पर भी निर्भर करती है। यदि परीक्षण के एकांश ऐसे हैं जिनमें विभेदन शक्ति है तो इससे एकांश-कुल परीक्षण सहसम्बन्ध अधिक हो जाता है और तब परीक्षण की विश्वसनीयता गुणांक भी अधिक हो जाती है। लेकिन यदि परीक्षण में ऐसे एकांश होते हैं जिनमें विभेदन शक्ति कम होती है तो इससे एकांश-कुल परीक्षण सहसम्बंध कम हो जाता है और परीक्षण की विश्वसनीयता गुणांक भी खिसककर नीचे आ जाती है।
5. **अंकन में वस्तुनिष्ठता**: अंकनकर्ता विश्वसनीयता (Objectivity in scores: Scorer reliability) - अगर परीक्षण के एकांशों के अंकन में वस्तुनिष्ठता होती है, तो इससे अंकनकर्ता विश्वसनीयता बढ़ती है। अंकनकर्ता विश्वसनीयता से तात्पर्य अनुक्रियाओं के एक ही सेट को विभिन्न अंकनकर्ताओं द्वारा किये गये अंकन में सहमति की मात्रा से होता है। यह मात्रा जितनी ही अधिक होती है, अंकनकर्ता विश्वसनीयता भी उतनी ही अधिक होती है और तब परीक्षण प्राप्तांकों की विश्वसनीयता भी अधिक ऊँची हो जाती है।

इस तरह से हम देखते हैं कि परीक्षण प्राप्तांकों की विश्वसनीयता कई कारकों द्वारा प्रभावित होते है। इन कारणों में परीक्षण की लम्बाई तथा परीक्षण प्राप्तांकों में विभिन्नता सर्वाधिक अधिक महत्वपूर्ण माना गया है।

9.6परीक्षण प्राप्तांकों की विश्वसनीयता को कैसे उन्नत बनाया जाए (How to Improve the Reliability of Test Scores?)

सामान्यतः किसी परीक्षण प्राप्तांकों की विश्वसनीयता को उन कारकों को नियंत्रित करके उन्नत बनाया जा सकता है जिसका प्रभाव उस पर अच्छा नहीं पड़ता है। इसके अलावा परीक्षण प्राप्तांके की विश्वसनीयता को उन्नत बनाने के लिये निम्नलिखित सुझावों को अधिक महत्वपूर्ण बतलाया गया है-

1. परीक्षार्थियों के समूह में विषमता होनी चाहिए। दूसरे शब्दों में, परीक्षार्थियों में पाये जाने वाले क्षमता या शीलगुण के ख्याल से विभिन्नता होनी चाहिए।
2. यथासम्भव एकांशों में समरूपता होनी चाहिए।
3. परीक्षण की लम्बाई अधिक होनी चाहिए। दूसरे शब्दों में, इनमें एकांशों की संख्या पर्याप्त होनी चाहिए।

4. जहॉं तक सम्भव हो परीक्षण की कठिनता स्तर मध्य श्रेणी की यानी 0.40 से 0.60 के बीच होनी चाहिए।
5. एकांशों में विभेदन शक्ति अधिक होनी चाहिए।
6. एकांशों के अंकन में वस्तुनिष्ठता अधिक होनी चाहिए।

उपर्युक्त कारकों के होने से परीक्षण प्राप्तांकों की विश्वसनीयता गुणांक में पर्याप्त मात्रा में वृद्धि हो जाती है।

9.7 सारांश:

- विश्वसनीयता मनोवैज्ञानिक परीक्षण की एक महत्वपूर्ण विशेषता है जो परीक्षण प्राप्तांकों के बीच संगति की मात्रा को प्रदर्शित करता है।
- विश्वसनीयता के दो पहलू होते हैं - कालिक तथा आन्तरिक संगति। इन दोनों संगतियों का मापन सह-सम्बन्ध गुणांक ज्ञात करके किया जाता है।
- विश्वसनीयता आंकलन की निम्नलिखित विधियाँ हैं - परीक्षण-पुनर्परीक्षण विधि, समान-प्रारूण विधि, अर्द्ध-विच्छेद विधि, तर्कयुक्त समानता विधि।
- परीक्षण प्राप्तांक को प्रभावित करने वाले अनेक कारक हैं – वाह्य कारक तथा आंतरिक कारक। इन कारकों में परीक्षण की लम्बाई तथा परीक्षण की प्राप्तांकों में विभिन्नता सबसे महत्वपूर्ण है।
- परीक्षण प्राप्तांक की विश्वसनीयता को बढाने के कुछ उपाय भी दिये गये हैं। इन उपायों में 6 कारकों को उजागर किया गया है।

9.8 अभ्यास प्रश्न:

1. परीक्षण प्राप्तांकों की विश्वसनीयता पर एकांशों की समरूपता का भी प्रभाव पड़ता है। सत्य /असत्य

2. परीक्षण की लम्बाई विश्वसनीयता को प्रभावित नहीं करती है। सत्य /असत्य

3. एकांशों के अंकन में वस्तुनिष्ठता अधिक होनी चाहिए। सत्य /असत्य

4. एकांशों के कठिनता स्तर अधिक होने से परीक्षण की विश्वसनीयता गुणांक कम हो जाती है। सत्य /असत्य

9.10 संदर्भ ग्रंथ:

(1) फ्रीमैन, फैंक एस. (1971) थ्योरी एण्ड प्रैक्टिस ऑफ साइकोलोजिकल टेस्टिंग, नई दिल्ली, आक्सफोर्ड।

(2) भार्गव महेश (2001) आधुनिक मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं मापन आगरा, नेशनल।

9.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर:

1. सत्य
2. असत्य
3. सत्य
4. सत्य

9.12 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न:

1. विश्वसनीयता को ज्ञात करने के विधियाँ का विस्तार से वर्णन कीजिये।
2. विश्वसनीयता को परिभाषित कीजिये। परीक्षण प्राप्तांकों की विश्वसनीयता को कैसे उन्नत बनाया जा सकता है ?

इकाई 10 - वैधता: अर्थ एवं प्रकार, परीक्षण वैधता ज्ञात करने की विधियाँ

इकाई संरचना

10.1 प्रस्तावना

10.2 वैधता एवं विश्वसनीयता में सम्बन्ध

10.3 उद्देश्य

10.4 परीक्षण वैधता: अर्थ एवं महत्व

10.5 वैधता के प्रकार

10.5.1 आन्तरिक कसौटियाँ

10.5.2 बाह्य कसौटियों के आधार पर

10.6 वैधता गुणांक ज्ञात करने की विधियाँ

10.7 वैधता को प्रभावित करने वाले कारक

10.8 सारांश

10.9 शब्दावली

10.10 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

10.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची

10.12 निबन्धात्मक प्रश्न

10. 1 प्रस्तावना

किसी भी परीक्षण के अन्तिम रचना के पश्चात् वैधता एवं विश्वसनीयता प्राप्त करके उसका मूल्यांकन किया जाता है। परीक्षण का मानकीकरण हो अथवा नहीं किन्तु वैधता एवं विश्वसनीयता के अभाव में परीक्षण रचना निःसन्देह व्यर्थ है। अन्य शब्दों में, परीक्षण रचना करने के बाद यह आवश्यक नहीं है कि उसका मानकीकरण किया जाये किन्तु उसकी वैधता एवं विश्वसनीयता को ज्ञात करना नितान्त आवश्यक होता है। अतः प्रस्तुत अध्याय में परीक्षण-रचना के प्रथम महत्वपूर्ण पक्ष-वैधता पर विस्तार से प्रकाश डाला जायेगा।

परीक्षण रचना के पश्चात् उसका मूल्यांकन करना आवश्यक होता है तभी परीक्षण की उपयोगिता बढ़ सकती है। आपने ईकाई 9 में मूल्यांकन की प्रथम विधि विश्वसनीयता के महत्व एवं प्रकार के बारे में

विस्तार से अध्ययन किया है। इस इकाई में हम मूल्यांकन की दूसरी विधि वैधता के अर्थ एवं प्रकार के बारे में विस्तार से अध्ययन करेंगें।

10.2 वैधता एवं विश्वसनीयता में सम्बन्ध

परीक्षण विश्वसनीयता से हमारा आशय परीक्षण में विश्वास करना या परीक्षण में आस्था रखने से है। उदाहरणार्थ, यदि परीक्षण के द्वारा किसी विद्यार्थी की पुनः पुनः परीक्षा ली जाय और उसमें वह निश्चित अंक ही प्राप्त करे तो वह परीक्षण विश्वसनीय कहलायेगा। परीक्षण वैधता में यह देखा जाता है कि जिस उद्देश्य हेतु परीक्षण का निर्माण हो रहा है, उस उद्देश्य की पूर्ति हो रही है अथवा नहीं। यदि परीक्षण अपने उद्देश्यों की पूर्ति कर लेता है तो वह परीक्षण वैध कहलायेगा। अब प्रश्न उठता है कि क्या परीक्षण रचना के इन दोनों पहलुओं में कोई सम्बन्ध है ? उत्तर केवल यही है कि जहाँ वैधता के लिए विश्वसनीयता का होना अत्यन्त आवश्यक है वहाँ विश्वसनीयता वैधता की कोई गारण्टी नहीं देता है। उदाहरणार्थ, यह सम्भव है कि एक विश्वसनीय परीक्षण वैध न हो किन्तु एक वैध परीक्षण का विश्वसनीय होना आवश्यक है। उदाहरणार्थ, यदि किसी परीक्षण का विश्वसनीयता गुणांक शून्य है अतएव वह किसी से सह-सम्बन्धित नहीं हो सकता। एक घड़ी के उदाहरण से इस कथन को अधिक स्पष्ट किया जा सकता है। मान लीजिए एक घड़ी में किसी अमुक क्षण नित्य 4 बजते हैं जबकि रेडियो समय के अनुसार उसी क्षण प्रतिदिन 4 बजकर 10 मिनट होते हैं। ऐसी स्थिति में घड़ी विश्वसनीयता कहलायेगी किन्तु वैध नहीं होगी क्योंकि वह प्रत्येक दिन उस क्षण एक वैधता तो बताती है किन्तु वह समय का मापन शुद्ध रूप से नहीं करती है। यदि यह घड़ी रेडियो समय के अनुसार चले और प्रत्येक दिन प्रत्येक क्षण यही समय बताये जो रेडियो समय के अनुसार है तो वह घड़ी विश्वसनीय एवं वैध दोनों ही कहलायेगी। इसी भाँति मनोवैज्ञानिक परीक्षण भी विश्वसनीय होने के साथ-साथ वैध होना चाहिए। किसी परीक्षण विश्वसनीयता शून्य हो तो वह किसी अन्य परीक्षण के साथ सह सम्बन्धित नहीं होगा। इस सम्बन्ध में फ्रीमैन लिखते हैं कि एक वैध परीक्षण की आवश्यक दशा यह है कि वह पर्याप्त मात्रा में विश्वसनीय होना चाहिए। यदि परीक्षण का विश्वसनीयता गुणांक शून्य है तो वह किसी कसौटी से सम्बन्धित नहीं होगा।

10.3 उद्देश्य

इस अध्याय को पढ़ने के पश्चात् आप निम्न तथ्य को समझने में सक्षम होंगे

- वैधता का अर्थ
- परीक्षण में वैधता का महत्व
- वैधता का महत्व एवं उसके प्रकार एवं
- वैधता गुणांक ज्ञात करने की विधियाँ

10.4 परीक्षण वैधता का अर्थ एवं महत्व

जैसा कि आप जानते हैं कि एक मनोवैज्ञानिक परीक्षण का मूल्यांकन पहले विश्वसनीयता के द्वारा तथा फिर वैधता के द्वारा ज्ञात किया जाता है। परीक्षणकर्ता अपने परीक्षण के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए संतुष्ट वैध कसौटियों का चयन एवं उपयुक्त वैधता-मात्रा का मापन करते हैं। वैधता का परीक्षण के उद्देश्यों से धनिष्ठ सम्बन्ध है, एक अवैध परीक्षण कभी भी उपयुक्त उद्देश्यों की पूर्ति नहीं करता है।

साधारण शब्दों के वैधता का अर्थ है कि एक परीक्षण कितनी शुद्धता एवं प्रभावकता से परीक्षण के उन विशिष्ट एवं सामान्य उद्देश्यों का मापन करता है जिसके हेतु उस परीक्षण की रचना की गयी है। एक परीक्षण के लिए वैधता का होना नितान्त आवश्यक है जिससे कि परीक्षण का उपयुक्त विधि से प्रशासित किया जा सकें तथा उसके निष्कर्षो की व्याख्या की जा सकें।

वैधता को विभिन्न मनोवैज्ञानिकों ने निम्न शब्दों में परिभाषित किया है।

क्रैनबैक (Cronback) 1951 के शब्दों में "किसी परीक्षण की वैधता उसकी वह सीमा है, जिस सीमा तक वह, वहीं मापता है जिसके लिए उसका निर्माण किया गया है।'' (Validity is the extent to which a test measures what it purports to measure) फ्रीमैन (Freaman) 1971के शब्दों में ''वैधता का सूचकांक उस मात्रा को व्यक्त करता है जिस मात्रा तक एक परीक्षण उस तथ्य को मापता है, जिसके मापन हेतु यह बनाया गया हो, जबकि उसकी तुलना किसी स्वीकृत कसौटी से की जाती है। (An index of validity shows the degree to which a test measures what it purports to measure, when compared with accepted criteria) ऐनेस्टेसी (Anastasi) 1988 के अनुसार ''एक परीक्षण की वैधता इस पर निर्भर करती है कि वह परीक्षण क्या मापन करता है और किस पर कार्य करता है। (The validity of a test concerns what the test measures and how well it does so).

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर यह निष्कर्ष होता है कि एक परीक्षण की वैधता का उसके उद्देश्यों से घनिष्ठ सम्बन्ध है। वैधता परीक्षण के उद्देश्यों पर निर्भर करती है। दूसरे शब्दों में एक मापन करने वाना यन्त्र अभूर्त रूप से वैध नहीं होता है बल्कि एक विशिष्ट उद्देश्य के लिए ही वैध होता है। यदि एक परीक्षण के लिए कई उद्देश्य होते है तो उसकी वैधता भी उनके उद्देश्यों के अनुसार परिवर्तन होती रहती है। उदाहरण के लिए एक परिवार के वातावरण की वैधता के लिए परीक्षण अत्याधिक वैध हो सकता है और वही परीक्षण परिवार के सदस्यों के लिए सामान्य वैध हो सकता है। अतः परीक्षण निर्माण के पदों का चयन एवं निर्माण करते समय उसके उद्देश्यों को स्पष्ट करना चाहिए।

10.5 वैधता के प्रकार

वैधता को प्रायः आन्तरिक एवं बाह्य कसौटियों के आधार पर विभाजित किया जाता है।

10**.5.1 आन्तरिक कसौटियाँ**(Internal Criteria): इस विधि के अन्तर्गत प्रायः परीक्षण पदों का उपपरीक्षण एवं सम्पूर्ण परीक्षण के प्रत्येक पद का आपस में सह-सम्बन्ध ज्ञात करते हैं आन्तरिक कसौटियों के आधार पर वैधता निम्न हैं -

1. संक्रिया वैधता (Operational validity)
2. अंकित वैधता (Face validity)
3. विषय-वस्तु वैधता (Content or curricular validity)
4. तर्कसंगत वैधता (Logical validity)
5. कारक वैधता (Factories validity)

बाह्य कसौटियाँ(External Criteria): इस विधि के अन्तर्गत प्रायः परीक्षण के अन्य बाह्य मान्य साधनों का प्रयोग किया जाता है जैसे अन्य व्यक्तियों के निर्णय एवं विचार, रिकार्ड/रिपोर्ट आदि। ये कसौटियाँ निम्न हैं-

1. पूर्व कथित वैधता (Predictive validity)
2. निर्मित वैधता (Constructive validity)
3. एकीभूत वैधता (Concurrent validity)

आन्तरिक कसौटियों के आधार पर वैधता के प्रकार

I. **संक्रिया वैधता (Operational validity)-**जब हम किसी परीक्षण की रचना करते हैं तो उसके प्रत्येक पदों का विश्लेषण करना आवश्यक हो जाता है क्योंकि विश्लेषण करते समय हम यह ज्ञात करने की कोशिश करते हैं कि अमुक पद उसके उद्देश्यों की पूर्ति करेगा या नहीं। पदों का विश्लेषण करने की इस विधि को संक्रिया-वैधता कहते हैं। संक्रिया वैधता को ज्ञात करने के लिए निरीक्षण विधि का प्रयोग किया जाता है।

II. **अंकित वैधता (Face validity)-** इस विधि के अन्तर्गत पदो के स्वरूप तथा स्वभाव द्वारा ही वैधता ज्ञात की जाती है। इस प्रकार की वैधता में प्रायः यह देखा जाता है कि उपयुक्त पद परीक्षण के उद्देश्यों की पूर्ति कर पाता है या नहीं। उदाहरण के लिए यदि हम कक्षा 8 के छात्रों में गणित तथा विज्ञान विषय के अन्तर्गत उनकी उपलब्धि-स्तर जानना चाहते हैं तो परीक्षण के पदों को स्वरूप इस प्रकार होना चाहिए कि पद देखकर ही पता चल जाय कि अमुक पद गणित तथा विज्ञान विषय के अन्तर्गत उपलब्धि स्तर को जानने के लिए बनाया गया है। अधिकांषतः इस विधि का प्रयोग मुख्य रूप से किया जाता है। इस विधि के अन्तर्गत परीक्षण का निर्माण करते समय विषय-विशेषज्ञों की सहायता ली जाती है।

III.**विषय-वस्तु वैधता (Content or curricular validity)-** बैकबुरनी तथा वाइट (2007) के अनुसार इस विधि के अर्न्तगत परीक्षण का प्रत्येक पद उस ज्ञान एवं निष्पादन का न्यादर्ष होना

चाहिए जिस उद्देश्य हेतु परीक्षण की रचना हो रही है। परीक्षण का प्रत्येक पद परीक्षण की विषय-वस्तु से सम्बधित होना चाहिए तथा वह उसके उद्देश्यों की भी पूर्ति करता हों। उदाहरण के लिए यदि हम सीखने की विकलांगता से सम्बंधित परीक्षण बना रहे हैं तो हम उस विषय-वस्तु से सम्बन्धित पाठ्य-पुस्तकों का विश्लेषण करें जिससे हमें भिन्न-भिन्न स्तर के लिए प्रसंगों के लिए पदों का चुनाव कर सकें। अतः परीक्षण के विषय से संबंधित सभी पाठ्यक्रम का गहन अध्ययन भी आवश्यक है जिससे पदो के उद्देश्यों की पूर्ति हो सकें।

IV. **तर्कसंगत वैधता (Logical validity)-** यह तथ्य तो स्पष्ट है कि किसी भी परीक्षण का सम्बन्ध केवल उसके विशिष्ट उद्देश्यों से होना चाहिए। उदाहरणार्थ यदि किसी परीक्षण का उद्देश्य क्रियात्मकता का मापन करना है तो उसमें हमें क्रियात्मकता के मापन से सम्बन्धित प्रश्न ही सम्मिलित करने चाहिए। यदि उस परीक्षण के पद उन्हीं विषयों से सम्बन्धित हो जिनका माप करने के लिए ही परीक्षण की रचना हुई है तो उस परीक्षण के तर्कसंगत वैधता होती है। इस प्रकार की वैधता को ज्ञात करने के लिए परीक्षण पदों का तार्किक रूप से अवलोकन किया जाता है तथा यह ज्ञात किया जाता है कि वास्तव में परीक्षण पद अपने विशिष्ट उद्देश्यों के अनुकूल है।

V. **कारक वैधता (Factories validity)-** कारक वैधता विधि का प्रयोग प्रायः उस स्थिति में किया जाता है जब एक ही परीक्षण में विभिन्न कारकों का मापन एक साथ होता है तब हमें विभिन्न कारकों का कारक विश्लेषण किया करते हैं। कारक विश्लेषण में प्रत्येक कारक का तथा एक कारक का दूसरे कारक के साथ सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। इस प्रकार की वैधता ज्ञात करने की विधि को कारक वैधता कहते हैं। प्रायः मानसिक एवं व्यक्तित्व परीक्षण में कारक वैधता का प्रयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए यदि हम परिवार के वातावरण को ज्ञात करने के लिए परीक्षण का निर्माण करते हैं तो हम परिवार के वातावरण से सम्बन्धित सभी कारकों का विश्लेषण करते हैं तथा इन सभी कारकों (आपसी सम्बन्ध, नैतिक विचार, निर्णय लेने की सक्षमता आदि कारकोंद्ध का सम्पूर्ण परीक्षण से सम्बन्ध ज्ञात करते हैं। इसी प्रकार कौटिल की 16 पी0एफ0 व्यक्तितत्व परीक्षण में कारक विश्लेषण किया गया है।

10.5.2 बाह्य कसौटियों के आधार पर वैधता के प्रकार:

I. **पूर्व कथित वैधता (Predictive validity)-** पूर्वकथित वैधता मुख्यतः किसी भी तथा व्यवसायिक मापन के प्रयोग की जाती है। यदि हम अभिक्षमता परीक्षण में व्यक्ति की योग्याताओं का मापन करते हैं तो उस परीक्षण के आधार पर हम यह भविष्यवाणी करते हैं कि अमुक व्यक्ति किस व्यवसाय में सफल हो सकता है तथा किस व्यवसाय में असफल हो सकता है। पूर्वकथित वैधता में प्रायः हम परीक्षण के गुण, विषय तथा योग्यता के बारे में भविष्यवाणी करते हैं। इस विधि के अन्तर्गत

प्रायः परीक्षण के अंकों तथा बाद मं विषय से सम्बन्धित प्राप्त किए गए अंकों से सहसम्बन्ध किया जाता है।

II. **निर्मित वैधता (Constructive validity)-** मापन के क्षेत्र में निर्मित वैधता एक नवीन प्रकृति है जिसे क्रोनबैक ने प्रतिपादित किया। इस प्रकार की वैधता का स्वरूप जटिल होता है क्योंकि इसमें परीक्षण को किसी विशेष रचना या सिद्धान्त के रूप में जाँचा जाता है। किसी भी परीक्षण की निर्मित वैधता ज्ञात करने के लिए कुछ विशेष रचना या सिद्धान्त का होना आवश्यक है। उदाहरणार्थ, बुद्धि-मापिका को विद्यालय ग्रेड, नेतृत्व योग्यता, आलोचनात्मक विचार, सृजनात्मकता आदि से सम्बन्धित किया जाता है क्योंकि बद्धि का इन सभी कारकों से कुछ न कुछ सम्बन्ध है। यदि बुद्धि-परीक्षण का इन पहलुओं से सम्बन्ध ज्ञात किया जाये और सह-सम्बन्ध उच्च आये तो यह परीक्षण वैध होगा। इसी प्रकार से सृजनात्मकता का परीक्षण भी वैध समझा जायेगा यदि उन व्यक्तियों द्वारा उच्च अंक प्राप्त किये जायें जो विभिन्न रूचियाँ या पसन्द रखते हैं तथ मौलिक ढंग से विचार एवं व्यवहार करते हैं। इसके अतिरिक्त, विभिन्न मानकीकृत परीक्षणों के द्वारा भी किसी परीक्षण की निर्मित वैधता को ज्ञात किया जा सकता है। ऐसी स्थिति में अपने द्वारा बनाये गये परीक्षण के निष्कर्षों की अन्य मानकीकृत परीक्षणों के निष्कर्षों से तुलना करते हैं तथा दोनों के मध्य वैधता-गुणांक की मात्रा ज्ञात करते हैं। अतएव निर्मित वैधता ज्ञात करने के लिए परीक्षण-निर्माता परीक्षण के अनुकूल किन्हीं निश्चित कसौटियों की रचना कर लेता है तथा उसका फिर सम्बन्ध ज्ञात करता है।

दूसरे शब्दों में जब किसी परीक्षण-निर्माता का उद्देश्य यह जानना हो कि एक व्यक्ति ने क्यों अमुक प्रकार के प्राप्तांकों या किन सम्बन्धों के आधार पर विभिन्न प्राप्तांक प्राप्त किये हैं, इस प्रकार के सैद्धान्तिक सम्बोधों को ही अन्वय वैधता कहते हैं चूँकि इस प्रकार वैधता ज्ञात करने में दीर्घ समय तक निरीक्षण, अनेक तथ्यों का संकलन एवं निर्मित उपकल्पनाओं की पुष्टि करनी पड़ती है, अतः इसका प्रयोग कैसे प्रचलित है। इस प्रकार की वैधता को ज्ञात करने की प्रमुख विधियाँ अग्रलिखित हैं।

(अ) **आयु-विभेदीकरण-** अनेक बुद्धि परीक्षणों के वैधीकरण से आयु को एक कसौटी के रूप में माना जाता है। स्टेनफोर्ड बिने तथा अन्य विद्यालय परीक्षणों की जाँच आयु के सन्दर्भ में होती है। जिससे यह ज्ञात किया जा सके कि क्या आयु के बढ़ने के साथ-साथ परीक्षण प्राप्तांक भी बढ़ते हैं। क्योंकि यह माना जाता है कि आयु की वृद्धि के साथ-साथ बुद्धि भी बढ़ती है तथा एक निश्चित अवधि पर स्थिर हो जाती है। अतः यदि परीक्षण वैध है तो प्राप्तांक आयु के साथ-साथ बढ़ने चाहिए। व्यक्तिगत मापन के क्षेत्र में इस कसौटी का अत्यन्त सीमित उपयोग है।

(ब) **अन्य परीक्षणों से सह-सम्बन्ध-** किसी मान्य मानकीकृत एवं नवीन परीक्षण के मध्य सह-सम्बन्ध इंगित करता है कि नवीन परीक्षण उस गुण का मापन करता है जिसे मान्य मानकीकृत परीक्षण करता है।

(स) **आन्तरिक संगति -** प्रायः समस्त प्रकार के विशेष रूप से व्यक्तित्व परीक्षणों के प्रकाशित मैनुअलों से यह दृष्टिगत होता है कि अमुक परीक्षण की वैधता 'आन्तरिक संगति' से ज्ञात की गयी। इसमें परीक्षण के योग प्राप्तांक ही कसौटी समझे जाते हैं तथा इनके आधार पर दो अन्तिम समूहों का चयन कर लिया जाता है तथा सह-सम्बन्ध विधि के आधार पर पदों का चयन कर लिया जाता है। आन्तरिक संगति वस्तुतः एकरूपता का माप है। इस विधि का संकुचित रूप से प्रयोग किया जाता है क्योंकि बाहरी तथ्यों की अनुपस्थिति में यह कहना कठिन है कि यह किन प्रत्ययों का माप करता है।

III. **एकीभूत वैधता (Concurrent validity)-**

एकीभूत वैधता ज्ञात करने के लिए परीक्षण को वर्तमान सूचनाओं से सह-सम्बन्धित किया जाता है। उदाहरणार्थ, एक बुद्धि-परीक्षण को उपलब्धि प्राप्तांकों से इसीलिए सह-सम्बन्धित किया जाता है जिससे उपलब्धि परीक्षण द्वारा वर्तमान स्थिति से सम्पर्क बना रहे। एकीभूत वैधता ज्ञात करने में पूर्वकथित तथा मापने वाले मापकों को लगभग एक ही समय दिया जाता है। उदाहरणार्थ, किसी समूह पर चिन्ता मापन वाले परीक्षण तथा मनोचिकित्सकों द्वारा उसी समूह के व्यक्तियों की चिन्ता की मात्रा का मूल्यांकन दोनों को एक ही समय में किया जाता है तथा दोनों विधियों के द्वारा प्राप्त प्राप्तांकों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात कर लिया जाता है। यहाँ पर परीक्षण के माध्यम से चिन्ता मापन तथा मनोचिकित्सकों द्वारा चिन्ता का मापन दोनों ही लगभग एक समय में हुए हैं, इसीलिए इसे एकीभूत वैधता के नाम से सम्बोधित करते हैं। एकीभूत वैधता ज्ञात करने के लिए एक नवीन परीक्षण के साथ पुराने निर्मित परीक्षण की वैधता को जाँचा जाता है, यदि वे एक ही शीलगुण का मापन करते हों। उपलब्धि परीक्षणों की वैधता ज्ञात करने के लिए प्रायः एकीभूत वैधता का प्रयोग किया जाता है क्योंकि यह समय के अनुसार परिवर्तनों पर प्रकाश डालती है।

पूर्वकथित तथा एकीभूत वैधता में अन्तर- दोनों में दो आधारों पर भेद दृष्टिगत है- (i) पूर्वकथित वैधता व्यक्ति के भविष्य के व्यवहार से सम्बन्धित रहती है तथा भविष्य में निष्पादन का मापन करती है जबकि एकीभूत वैधता व्यक्ति के वर्तमान व्यवहार से सम्बन्धित रहती है तथा वर्तमान में निष्पादन का मापन करती है, (ii) पूर्वकथित वैधता का प्रायः अभिक्षमता एंव रूचि-परीक्षणों के लिए महत्व है, जबकि एकीभूत वैधता प्रायः उपलब्धि परीक्षणों के लिए महत्वपूर्ण होती है।

10.5.3 वैधता-गुणांक तथा क्रौस वैधता

परीक्षण वैधता को प्रायः किसी वैधता गुणांक के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। वैधता-गुणांक परीक्षण प्राप्तांकों तथा किसी कसौटी के आधार पर प्राप्त प्रदत्तों के मध्य रेखीय सह-सम्बन्ध की मात्रा को इंगित करता है। परीक्षण की कार्यक्षमता के लिए वैधता-गुणांक कसौटियों पर विभिन्न व्यक्तियों के निष्पादन के विभेदीकरण में एक सरल आलेखीय चित्रण प्रदान करता है। वैधता-गुणांक किसी प्रतिदर्श के परीक्षण प्राप्तांकों तथा कसौटी प्राप्तांकों के मध्य सह-सम्बन्ध की गणना कर ज्ञात किया जाता है।

क्रास वैधता से तात्पर्य परीक्षण की वैधता को पुन: स्थापित करने से है। किसी भी परीक्षण की वैधता कुछ निश्चित उद्देश्यों व परिस्थितियों के लिये ही होती है। किसी अन्य उद्देश्यों व परिस्थितियों में परीक्षण प्रयोग करने पर वैधता परिणाम नही प्राप्त होते हैं। उदाहरण के लिए आज से पन्द्रह वर्ष पूर्व तैयार किया गया बुद्धि, व्यक्तित्व परीक्षण वर्तमान में वैद्य नही भी हो सकता है। इसी प्रकार किसी अन्य देश के लिये बनाया गया परीक्षण भारत देश के लिए वैध नही हो सकता है। जब किसी परीक्षण का उपयोग किन्ही अन्य उद्देश्यों या परिस्थितियों में करना चाहते है तब पहले उसका क्रास वैधकरण करते हैं। इसमें माना जाता है कि परीक्षण की वैधता परिस्थितिनुसार परिवर्तित हो सकती है इसलिए नवीन परिस्थितियों में वैधता का प्रमाण पुन: एकत्रित करना चाहिए। स्पष्ट है कि नवीन परिस्थिति में परीक्षण की वैधता सुनिश्चित करने के उपरान्त ही परीक्षण का तर्कसंगत ढंग से प्रयोग किया जा सकता है।

10.6वैधता गुणांक ज्ञात करने की विधियाँ

सह-सम्बन्ध विधियाँ : सामान्य रूप से किसी भी प्रकार के मनोवैज्ञानिक परीक्षण की वैधता ज्ञात करने के लिए विभिन्न सह-सम्बन्ध-सरल सह-सम्बन्ध, द्विपांक्तिक सह-सम्बन्ध, चतुष्कोष्ठिक सह-सम्बन्ध तथा बहु सह-सम्बन्ध का प्रयोग किया जाता है।

1. **सरल सह-सम्बन्ध-** वैधता ज्ञात करने के इस विधि में परीक्षण प्राप्तांकों तथा अन्य किसी कसौटी पर प्राप्त प्राप्तांकों के मध्य क्रम-अन्तर विधि या प्रोडक्ट मोमेण्ट विधि से सह-सम्बन्ध की मात्रा ज्ञात की जाती है तथा वही मात्रा वैधता गुणांक के नाम से सम्बोधित की जाती है।
2. **द्विपांक्तिक सह-सम्बन्ध** - वैधता-गुणांक ज्ञात करने के लिए द्विपांक्तिक सह-सम्बन्ध का प्रयोग उस स्थिति में किया जाता है जबकि किसी तथ्य का मापन दो श्रेणियों या दो विमाओं पास-फेल, सन्तोषजनक-असन्तोषजनक, समयोजित-असमायोजित के अन्तर्गत किया जाता है। इस सह-सम्बन्ध को निम्न सूत्र की सहायता से ज्ञात किया जा सकता है।

$$r_{bi} = \frac{Mp-Mq}{\sigma t} x \frac{Pq}{u}$$

यहाँ -

r_{bi} = द्विपांक्ति सह-सम्बन्ध गुणांक

Mp = प्रथम श्रेणी के व्यक्तियों के प्राप्तांकों का मध्यमान

Mq = द्वितीय श्रेणी के व्यक्तियों के प्राप्तांकों का मध्यमान

σt = मानक विचलन

p = प्रथम श्रेणी वाले समूह में समानुपात

q = द्वितीय श्रेणी वाले समूह में समानुपात

u = प्रसामान्य वक्र के क्रम सूचक जो p तथा q को अलग करता है।

1. **बिन्दु द्विपांक्तिक सह-सम्बन्ध**- वैधता गुणांक ज्ञात करने के लिए बिन्दु द्विपांक्तिक सह-सम्बन्ध का प्रयोग उस स्थिति में किया जाता है जबकि किन्हीं प्राप्तांकों का वास्तविक द्विभाजन सम्भव न हो और प्रायः व्यावहारिक रूप से एक ही चर के प्राप्तांकों का द्विभाजन किसी एक मापदण्ड के आधार पर कर लेते हैं। ऐसे द्विभाजन को एक प्रकार से वास्तविक द्विभाजन ही मान लिया जाता है। कहने का तात्पर्य यह है कि यहाँ चर का विभाजन वास्तविक होता है। वास्तविक द्विभाजन के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं- स्त्री-पुरुष, जीवित-मृत, निष्ठ-अनिष्ट। इस सह-सम्बन्ध को निम्न सूत्र की सहायता से ज्ञात किया जा सकता है-

$$r_{pbi} = \frac{Mp - Mq}{\sigma t}\sqrt{pq}$$

2. **चतुष्कोष्ठिक सह-सम्बन्ध-** मनोवैज्ञानिक परीक्षणों में जब द्विचर प्रदतों का स्वरूप इस इस प्रकार होता है कि xतथा y दोनों चरों को स्वेच्छा से दो भागों में बाँट दिया जाता है तो उन दोनों चरों के बीच सहसम्बन्ध ज्ञात करना होता है तो उस परिस्थिति में चतुष्कोष्ठिक सह-सम्बन्ध की गणना की जाती है। उस परिस्थिति में 2x2 तालिका होती है।

इस प्रकार के सह-सम्बन्ध को ज्ञात करने के लिए निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है।

$$r_{cos\text{-}p} = \cos\left(\frac{180^0}{1+\sqrt{ad/bc}}\right)$$

यहाँ a,b,c,d 2x2 तालिका के चार सेल की आवृतियाँ होती हैं।

3. **बहु सह-सम्बन्ध-** जब दो या अधिक चरों के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात करना होता है तब बहु सह-सम्बन्ध विधि का प्रयोग होता है। मापकों के प्राप्तांकों को सांख्यिकी रूप से मिश्रित किया जाता है तथा तीसरे मापक से सह-सम्बन्धित कर बहु सह-सम्बन्ध ज्ञात कर लिया जाता है। यह स्वतंत्र चरों के बीच अंतर सह-सम्बन्धों से सम्बंधित होता ही है साथ ही साथ इन स्वतंत्र चरों का आस्रितचर के साथ के सम्बंधों पर भी प्रकाश डाला जाता है।

4. **अनुमानतः तालिका** - परीक्षण की पूर्वकथित वैधता ज्ञात करने की महत्वपूर्ण एवं सुगम विधि अनुमानतः तालिका है जो यह भविष्यवाणी करती है कि किसी अमुक बुद्धि-लब्धि का बालक

किस प्रकार का कार्य करने में सफल होगा या किस अभिक्षमता वाला बालक अमुक कार्य को कुशलता से करेगा। यह अनुमानतः पर आधारित होता है, इसीलिए यह विश्वसनीय समझी जाती है।

5. **कारक विश्लेषण विधि** - परीक्षण की वैधता ज्ञात करने के लिए कारक विश्लेषण भी एक अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं प्रभावशाली सांख्यिकीय विधि है। इसके द्वारा विभिन्न परीक्षणों उसके उपयोगों तथा व्यक्तिगत पदों के विभिन्नताओं में भी समानताओं का अध्ययन किया जाता है। दूसरे शब्दों में, क्या विभिन्न उप-परीक्षणों या पदों में भी कुछ समान तत्व हैं अथवा नहीं? यदि हैं तो उन तत्वों का स्वरूप क्या है ? उनमें आपसे सम्बन्ध कैसा है ? आदि प्रश्नों का समाधान कारक विश्लेषण द्वारा किया जाता है। उदाहरणार्थ, कैटिल की 16 पी.एफ. प्रश्नावली को 25 छात्रों के समूह पर प्रशासित किया गया। इस प्रश्नावली के 16 कारकों पर प्रत्येक छात्र को प्राप्तांक प्राप्त होंगे। यदि इन 16 कारकों पर प्राप्त प्राप्तांकों में आपसी सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाये तो प्रत्येक कारक का शेष अन्य कारकों के साथ सह-सम्बन्ध गुणांक ज्ञात होगा। जैसा प्रायः पाया जाता है, प्रत्येक कारक का कुछ कारकों के साथ सह-सम्बन्ध अधिक होगा तो कुछ के साथ कम होगा। इस आधार पर यह व्याख्या की जाती है कि जिन दो कारकों के मध्य सह-सम्बन्ध अधिक होगा वे सम्भवतया एक सी ही योग्यता का या समान पहलू का मापन करते हैं। इसके विपरीत, जिन कारकों के मध्य सह-सम्बन्ध कम होगा वे सम्भवतया भिन्न योग्यता या पहलुओं का मापन करते हैं, अतएव कारक विश्लेषण विधि द्वारा विभिन्न कारकों या उप-परीक्षणों के मध्य समानता या भिन्नता को जाना जाता है। मुख्य रूप से परीक्षण क्षेत्र में कारक विश्लेषण के छः रूपों का उल्लेख होता है।

I. आर-प्रविधि
II. पी-प्रविधि
III. क्यू-प्रविधि
IV. ओ-प्रविधि
V. टी-प्रविधि
VI. एल-प्रविधि

निष्कर्ष स्वरूप यह कहा जा सकता है कि कारक विश्लेषण व्यावहारिक तथा सामाजिक विज्ञानों को एक अत्यन्त महत्वपूर्ण शोध-प्रविधि है। चरों तथा प्रत्ययों को समझने के लिए इसकी उपयोगिता निःसन्देह अधिक है। इस विधि की सहायता से थर्स्टन ने बुद्धि के स्वरूप की, गिलफोर्ड जिमरमैन ने स्वभाव के अध्ययन की, स्टीफेन्सन ने नैदानिक मनोविज्ञान में व्यक्तित्व की व्याख्या की। इस विधि का सबसे प्रभावशाली उपयोग विश्व के महान मनोमिति शास्त्री रेमण्ड वी. कैटिल ने किया। इस प्रविधि की सहायता

से उन्होंने बहुविचलीय विधि को प्रचलित किया एवं व्यक्तित्व मनोविज्ञान में उल्लेखनीय शोध कार्य किये।

10.7 वैधता को प्रभावित करने वाले कारक (Factors Affecting Validity)

परीक्षण की वैधता को प्रभावित करने वाले निम्न कारक है-

(1) अस्पष्ट निर्देश (Unclear Instruction)- परीक्षण के सम्बन्ध में यदि परीक्षार्थियों को स्पष्ट निर्देश नही दिये जाते हैं तो परीक्षण की वैधता कम हो जाती हैं। जैसे प्रश्नों के उत्तर किस तरह से देने है या समय सीमा क्या हो जैसी अन्य बातों को परीक्षार्थियों को ठीक ढंग से न मालूम होने के कारण परीक्षण की वैधता कम हो जाती है।

(2) अभिव्यक्ति का माध्यम (Medium of Expression)- यदि परीक्षण परीक्षार्थियों की मातृ भाषा या उनके क्षेत्रीय भाषा में निर्मित किया जाता है तो वे परीक्षण के प्रश्नों को ठीक प्रकार से समझकर उनका उत्तर दे जैसे हिन्दी भाषी छात्रों के लिए अंग्रेजी भाषा में बने गणित परीक्षण का प्रयोग करने पर परीक्षण की वैधता अत्यन्त कम प्राप्त हो सकेगी।

(3) प्रश्नों की भाषा एवम शब्दावली (language and Vocabulary of Items)- परीक्षण यदि परीक्षार्थियों के लिए अत्यधिक क्लिष्ट शब्द तथा साहित्यिक भाषा में होगा तो भी परीक्षण की वैधता कम प्राप्त हो सकेगी।

(4) प्रश्नों का कठिनाई स्तर- परीक्षण में पय्रुक्त अत्यधिक सरल व कठिन प्रश्नों से भी परीक्षण वैधता घट जाती है। इसके अतिरिक्त प्रारम्भ में कठिन प्रश्नों के रखे जाने से भी छात्र अधिक समय उन पर लगा देते

हैं ।

(5) प्रश्नों की वस्तुनिष्ठता- वस्तुनिष्ठ परीक्षणों की वैधता अधिक होती है जबकि निबन्धात्मक परीक्षणों की वैधता कम पायी जाती है।

(6) पक्ररणों का अवांछित भार- परीक्षण में यदि मापी जा रही योग्यता की सभी विमाओं को परीक्षण में सम्मिलित नही किया गया है कुछ को अंवाछित भार दे देने के कारण भी परीक्षण परिणामों की वैधता कम हो जाती है।

(7) मापन का उद्देश्य (Objective of Measurement) कोई भी परीक्षण जिन निश्चित उद्देश्यों को ध्यान में रखकर निर्मित किया जाता है परीक्षण की वैधता उन्ही निश्चित उद्देश्यों के लिये हो वैध होती है। अन्य उद्देश्यों लिये वह वैध नही होगा।

(8) परीक्षण की लम्बाई (Length of the Test)- परीक्षण में प्रश्नों की संख्या बढ़ाने से न केवल विश्वसनीयता बढ़ती है अपितु वैधता भी बढ़ जाती है। किन्तु परीक्षण की लम्बाई बढ़ाते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि प्रश्नों के प्रकार रूप, विषय वस्तु कठिनाई स्तर आदि में कोई परिवर्तन नही आना

चाहिए। परीक्षण की लम्बाई तथा उसकी वैधता के सम्बन्ध को निम्न सूत्र से व्यक्त किया जा सकता है।

$$rc_{(nx)} = \frac{(n)(r_{cx})}{\sqrt{n+n(n-1)r_{tt}}}$$

यहाँ-

$rc_{(nx)}$ = बढे हुए परीक्षण की वैधता

r_{cx} = वर्तमान परीक्षण की वैधता

n = परीक्षण की लम्बाई बढ़ाये जाने की गुणा की संख्या

r_{tt} = परीक्षण की विश्वसनीयता

(9) सांस्कृतिक प्रभाव- (Cultural Influences)- किसी सामाजिक आर्थिक स्तर, वर्ग रचना, शैक्षिक विभिन्नता आदि का छात्र की बुद्धि अभिक्षमता, रूचि तथा अभिवृत्ति पर प्रभाव पड़ता है अत: एक सांस्कृतिक परिस्थिति में बना परीक्षण दूसरी सांस्कृतिक परिस्थिति में रहने वाले परीक्षार्थियों या प्रयोज्यों के लिए उपयुक्त नही होता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि सांस्कृतिक तत्व परीक्षण-वैधता को प्रभावित करते है।

(10) प्रतिक्रिया प्रवृत्ति (Response Sets)- प्रतिक्रिया प्रवृत्ति से तात्पर्य छात्र की परीक्षण पर उत्तर देने की आदत से है। जैसे सहमति प्रवृत्ति में व्यक्ति बिना सहमत हुए भी अधिकांश प्रश्नों पर हाँ, सत्य या सहमति पर निशान लगाता है। उसी प्रकार अनिश्चय की प्रवृत्ति वाला छात्र अधिकांशत: अनिश्चितता, उदासीनता, आदि पर निशान लगाता है। परीक्षण प्राप्तांकों को प्रभावित करके उनकी वैधता को कम कर देती है।

10.8 सारांश

1. परीक्षण की अंतिम दशा में उसे दृढ़ता प्रदान करने के लिए वैधता आवश्यक है।
2. वैधता और विश्वसनीयता में अंतर्सम्बंध मंध म्बन्ध है। परीक्षण की वैधता के लिए उसका विश्वसनीय

   होना आवश्यक है।
3. परीक्षण की वैधता वह सीमा है जिस सीमा तक वह नहीं मापता है जिसके लिए उसको बनाया गया है।
4. वैधता के लिए दो कसौटियाँ हैं - आन्तरिक कसौटी एवं बाह्य कसौटी।
5. परीक्षण वैधता के प्रकारों का निर्धारण भी इन्हीं कसौटियों पर किया जाता है।
6. वैधता गुणांक परीक्षण प्राप्तांकों तथा किसी कसौटी के आधार पर प्राप्त प्रदत्तों के मध्य रेखीय
7. सह सम्बन्धों की मात्रा को इंगित करता है।

8. कारक विश्लेषण वैधता ज्ञात करने की महत्वपूर्ण कसौटी है।

10.9 शब्दावली

(1) वैधता: किसी कसौटी के साथ सहसंबंध वैधता है।

(2) वैधता गुणांक: वैधता गुणांक परीक्षण प्राप्तांक तथा परीक्षण कसौटी के मध्य सम्बन्ध है।

10.10 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. वैधता को परिभाषित करें।
2. वैधता और विश्वसनीयता के मध्य क्या अंतर है?
3. वैधता गुणांक किसे कहते हैं ?

10.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची

(1) फ्रीमैन, फैंक एस. (1971) थ्योरी एण्ड प्रैक्टिस ऑफ साइकोलोजिकल टेस्टिंग, नई दिल्ली, आक्सफोर्ड।

(2)मार्गन महेश (2001) आधुनिक मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं मापन आगरा, नेशनल।

10.12 निबन्धात्मक प्रश्न

1. वैधता को परिभाषित करें। वैधता गुणांक ज्ञात करने की विधियों का वर्णन करें।
2. वैधता और विश्वसनीयता में अंतर बताइये। वैधता ज्ञात करने की विधियों का वर्णन करें।

इकाई-11 परीक्षण मानकीकरण

इकाई संरचना

11.1 परीक्षण मानकीकरण का अर्थ

11.2 परीक्षण मानकीकरण की प्रक्रिया

11.6 मानक के प्रकार समूह प्रकार

11.6.1 आयु मानक

11.6.2 श्रेणी मानक

11.6.3 शतांशीय मानक

11.6.4 प्रतिमान प्राप्तांक मानक

11.7 सार संक्षेप

11.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न-

11.9 पारिभाषिक शब्दावली

11.10 संदर्भ ग्रंथ

11.1 परीक्षण मानकीकरण का अर्थ

साधारण शब्दों में, परीक्षण मानकीकरण से हमारा आशय ऐसी प्रक्रिया से है जिसमें विषय-वस्तु, विधि एवं निष्कर्ष सभी समरूप से निश्चित हों तथा जिसके लिए किन्हीं निश्चित मानकों को निर्धारित किया जाता हो। कुछ मनोवैज्ञानिकों ने परीक्षण मानकीकरण के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त किये हैं। सी.वी. गुड -के अनुसार, ‘‘एक मानकीकृत परीक्षण वह परीक्षण है जिसमें विषय-वस्तु का चयन अनुभव के आधार पर किया गया हो, जिसके मानक ज्ञात हो, जिसके प्रशासन एवं फलांकन की समरूप विधियों को विकसित किया गया हो तथा फलांकन को वस्तुनिष्ठ विधि से किया गया हो।

एल.जे. क्रौनबेक-के शब्दों में ‘‘किसी मानकीकृत परीक्षण में प्रक्रिया, फलांकन, मूल्यांकन आदि सभी निश्चित होते हैं, जिससे इसका प्रयोग विभिन्न अवसरों पर किया जा सके। इसमें मानकों की सारणी तथा किसी समूह के प्रतिनिधित्वकारी विद्यार्थियों का सम्भावित प्राप्तांक ज्ञात रहता है।

11.2 परीक्षण मानकीकरण की प्रक्रिया

परीक्षण मानकीकरण प्रक्रिया के मुख्य रूप से तीन पहलू हैं:

(1) **परीक्षण**-निर्माता पदों, विषय वस्तु या परीक्षण सामग्री का मानकीकरण करता है। जब हम परीक्षण के प्रारम्भिक रूप को केवल कुछ व्यक्तियों पर प्रशासित कर अन्तिम रूप से उस परीक्षण के लिए पदों का चयन करते हैं तब हम प्रत्येक पद का विश्लेषण करते हैं तथा केवल उन्हीं दो का चयन करते हैं जो विभेद-मूल्य एवं कठिनता स्तर की दृष्टि से उपयुक्त हों। अतएव इसी प्रक्रिया के अन्तर्गत हम पदों का चयन करते समय ही उसका मानकीकरण कर लेते हैं।

(2) परीक्षण की अन्तिम रूप से जाँच करने के पश्चात् परीक्षण विधियों का मानकीकरण किया जाता है। इसके अन्तर्गत परीक्षण की प्रशासन विधि, उसके लिए निर्देश, समय-सीमा, फलांकन विधि, प्रतिदर्श आदि अन्य महत्वपूर्ण तत्वों का निश्चय होता हैं।

(3) अन्त में, परीक्षण मानकीकरण प्रक्रिया का सबसे महत्वपूर्ण सोपान निष्कर्षों का मानकीकरण है। इसके लिए परीक्षण के अन्तिम रूप का एक विशाल समूह (जैसे दो या तीन हजार व्यक्तियों) पर प्रशासन किया जाता है। तत्पश्चात् निम्नलिखित तीन विधियों के द्वारा फलांकों का सांख्यिकी विवेचन करके निष्कर्षों का मानकीकरण किया जाता है।

(अ) मध्यमान एवं मानक विचलन विधि- इस विधि में सम्पूर्ण समूह का आवृत्ति वितरण तैयार किया जाता है तथा प्रत्येक अन्तराल में योग आवृत्तियों का पाया जाता है। इसके पश्चात् समूह के मध्यमान फलांकों की गणना की जाती है जो समस्त समूह की औसत उपलब्धि की ओर इंगित करते हैं। समूह में व्यक्ति की क्या स्थिति है इसे मानक विचलन के द्वारा ज्ञात किया जाता है, जो मध्यमान में विचलित होने वाली वास्तविक मात्रा का निश्चय करता है।

(ब) शततमक विधि- सन्दर्भ बिन्दु निर्धारित करने की यह एक आलेखीय विधि है। यहाँ पर वितरण का सम्पूर्ण प्रसार जितना सम्भव हो सके उतने शतांशीय समूहों में विभक्त हो जाता है। शततमक विधि प्राप्तांकों के वितरण का विश्वसनीय चित्र प्रदान करता है। उदाहरणार्थ, हम 10^{th}, 20^{th}, 30^{th} जी, 40^{th}, 70^{th}, 90^{th} आदि शतांशीय की गणना करते हैं। मान लीजिए, किसी उपलब्धि परीक्षण में नीलम के 45 अंक हैं तथा उसका शतांशीय मान 70जी है, जो यह इंगित करता है कि नीलम, जिसके उस परीक्षण पर 45 अंक हैं, समूह की 70 प्रतिशत लड़कियों से अच्छी तथा 30 प्रतिशत लड़कियों से निम्न निष्पादन वाली है। इसके अतिरिक्त, मान लीजिए, यदि कादम्बरी एक परीक्षण पर 51 अंक पाती है तब प्रतिशत मापनी पर उसका स्थान निश्चित करने के लिए उसके प्राप्तांकों की निकटवर्ती शतांशीय प्राप्तांकों से तुलना की जाती है। मान लीजिए, 45 अंक पाने वाली नीलम के 70^{th} शतांशीय तथा 54 अंक पाने वाले के 80^{th} शतांशीय फलांक हैं, तब हम यह पायेंगे कि कादम्बरी के 51 अंक इन दोनों शतांशीय के मध्य होंगे। अतएव इस स्थिति में यह कहा जा सकता है कि कादम्बरी समूह के 20 प्रतिशत व्यक्तियों से निम्न है किन्तु निश्चित रूप से समूह के 70 प्रतिशत व्यक्तियों से श्रेष्ठ भी है।

(स) आयु आधार-विधि- आयु के आधार पर भी परीक्षण मानकों को निर्धारित किया जाता है क्योंकि कई परीक्षण इस प्रकार के होते हैं जहाँ मानक निर्धारित करने में आयु एक महत्वपूर्ण तथ्य है जैसे बुद्धि परीक्षण।

11.3 मानक

अभी यह बताया जा चुका है कि परीक्षण मानकीकरण प्रक्रिया में मानकों को निर्धारित किया जाता है। किसी भी प्रकार के मानसिक या मनोवैज्ञानिक परीक्षण में मूल-प्राप्तांकों को प्राप्त करने के बाद परीक्षण-निर्माता के सम्मुख यह समस्या आती है कि परीक्षण पर प्राप्त मूल प्राप्तांकों से उनका क्या आशय है तथा उनको किस प्रकार से विवेचित किया जाये। उदाहरणार्थ, संस्कृत की परीक्षा में मदन ने 20 समस्याएँ हल कीं, अंग्रेजी परीक्षण में ओम ने 30 पदों को शुद्ध रूप से हल किया, संगीत परीक्षण की समस्त समस्याओं को राकेश ने 50 मिनट में हल कर दिया अथवा अशोक ने किसी बुद्धि परीक्षण पर 40 अंक प्राप्त किया। अतएव हमने देखा कि यहाँ पर इन मूल प्राप्तांकों का स्वयं में कोई अर्थ या अस्तित्व नहीं है, यहाँ तक कि इसके बाह्य स्तर पर भी हमें कुछ ज्ञात नहीं होता। अशोक ने बुद्धि परीक्षण से 40 अंक प्राप्त किये। यहाँ हमें नहीं मालूम कि यह 40 अंक 40 में से प्राप्त किये हैं अथवा 100 या 125 या अन्य किन्हीं अंकों में से। यदि हम यह भी कहें कि उसने 80 में से 40 अंक प्राप्त किये हैं, तो 50 प्रतिशत से भी हमारा कुछ आशय नहीं निकलता। इसीलिए यहाँ पर इनका कोई अर्थ नहीं लगाया जा सकता जब तक कि हमारे पास तुलना करने को कोई निश्चित प्रतिमान न हो। इसके अतिरिक्त, एक ही व्यक्ति दो निष्पादनों में तुलना करने के लिए भी निश्चित प्रतिमानों की आवश्यकता होती है। उदाहरणार्थ, अतुल को हिन्दी परीक्षण में 44 तथा गणित परीक्षण में 18 अंक प्राप्त हुए, तो इस स्थिति में एक साधारण व्यक्ति उसे हिन्दी विषय में अधिक अच्छा समझेगा क्योंकि उसमें अधिक अंक प्राप्त किये हैं जबकि मानसिक मापन में अंकों का स्वयं में कोई महत्व नहीं होता है। यहाँ अंकों का महत्व उसके मानकों पर आधारित होता है। अतुल को हिन्दी में 44 अंक प्राप्त हुए, जबक इस विषय पर कक्षा के छात्रों का औसत 50 है तथा गणित में 18 अंक मिले जबकि इसमें औसत 12 अंक ही हैं, अतः मापन की इस वैज्ञानिक विचारधारा के अनुसार उसके गणित में अच्छे प्राप्तांक हैं।

अतएव मनोवैज्ञानिक एंव शैक्षिक मापन में प्राप्तांकों का अर्थ समझने एवं उनकी विवेचना करने हेतु कुछ व्यापक, एकरूप, वस्तुनिष्ठ एवं स्थायी प्रतिमानों की आवश्यकता होती है तथा यह प्रतिमान मानक के रूप में स्थापित किये जाते हैं, दूसरे शब्दों में, परीक्षण-प्राप्तांकों की विवेचना मानकों के रूप में की जा सकती है। ग्रीन एवं अन्य के शब्दों में "परीक्षण निष्कर्षों का विवेचन करने के लिए मानक निश्चित रूप से मानकीकरण का एक अत्यन्त" महत्वपूर्ण पक्ष है, मानकों के अभाव में परीक्षण प्राप्तांकों को विवेचित नहीं किया जा सकता है।

11.4 मानक का अर्थ

किसी भी परीक्षण पर मानक वह प्राप्तांक है जिसे किसी विशेष समूह द्वारा प्राप्त किया गया हो। दूसरे शब्दों में, "मानक से तात्पर्य कार्य के उस नमूने से है जिसे समस्त समूह के द्वारा प्रदर्शित किया गया हो।" मानक के आधार पर किसी भी परीक्षण के द्वारा समूह के दो व्यक्तियों की तुलना की जा सकती है तथा किसी समूह के अमुक व्यक्ति की क्या स्थिति है इसको भी ज्ञात किया जा सकता है। यहाँ स्मरणीय है कि मानक एवं प्रतिमान दोनों में अन्तर है। जहाँ मानक किसी विशिष्ट समूह के वास्तविक निष्पादन का वर्णन करते हैं वहाँ प्रतिमान निष्पादन के वांछित स्तर को ही व्यक्त करते हैं। दूसरे शब्दों में, मानक किसी विशिष्ट समूह के व्यक्तियों के वास्तविक मानक का औसत प्राप्तांक है, जैसे- 12 वर्ष के लड़के या चौथी कक्षा के बच्चे आदि, जबकि प्रतिमान एक वांछित उद्देश्य रखता है जो प्राप्त मानक से कम या अधिक भी हो सकता है तथा यह केवल बेहतर स्थितियों में पाया जाता है।

सामान्य रूप से मूल-प्राप्तांक तभी अर्थपूर्ण होता है जबकि वह किसी विशेष समूह से सम्बन्धित हो। कोई भी प्राप्तांक निरपेक्ष रूप से कभी उच्च, निम्न, श्रेष्ठ, अश्रेष्ठ नहीं होता है। साधारण रूप से व्यक्ति के प्राप्तांक को समूह में सम्बन्धित करने की दो सामान्य विधियाँ हैं- पहली विधि के अन्तर्गत उसके प्राप्तांकों की समूह की क्रमोत्तर श्रंखला से तुलना की जाती है तथा यह देखा जाता है कि वह किस श्रंखला से तुलित होता है। श्रंखला में बहुधा प्रत्येक समूह किसी विद्यालय श्रेणी या वास्तविक आयु के लोगों को प्रदर्शित करता है। दूसरी विधि में व्यक्ति के समूह के प्रतिशत में या समूह के मानक विचलन के रूप में व्यक्त किया जाता है।

11.5 मानकों के प्रकार

किसी भी मनोवैज्ञानिक परीक्षण में व्यक्ति के प्राप्तांकों की विवेचना करने के लिए मुख्य रूप से चार प्रकार के मानकों का प्रयोग किया जाता है।

11.6 समूह प्रकार

11.6.1 आयु मानक

11.6.2 श्रेणी मानक

11.6.3 शतांशीय मानक

11.6.4 प्रतिमान प्राप्तांक मानक

अब हम यहाँ उपर्युक्त प्रकार के मानकों का विस्तृत रूप से अध्ययन करेंगे।

11.6.1 आयु मानक

प्रायः ऐसे बुद्धि परीक्षणों में जहाँ आयु के कारण परिवर्तन दिखायी देने की सम्भावना हो, आयु मानक निर्धारित किये जाते हैं। आयु मानक से आशय किसी विशेष आयु समूह के औसत निष्पादन से है।

उदाहरणार्थ, यदि हम 10 वर्ष आयु वाली कुछ लड़कियों का प्रतिनिधित्व प्रतिदर्श लेकर उनकी लम्बाई मापें तथा औसत लम्बाई ज्ञात कर लें, तो हम पायेंगे कि यह औसत लम्बाई 10 वर्ष आयु की लड़कियों के मानक निर्धारित करती है। इस प्रकार 7, 8, 9, 11, 12, 13 वर्ष आयु की लड़कियों को औसत लम्बाई ज्ञात की जा सकती है। इस प्रकार, प्रत्येक आयु की लड़कियों की औसत लम्बाई या मानक निर्धारित करने के बाद किसी भी लड़की की लम्बाई के सम्बन्ध में विवेचना की जा सकती है। एक लड़की जिसकी लम्बाई 4 फुट 1 इंच है तथा वह एक 12 वर्ष आयु लम्बी औसत लड़की के समान लम्बी है, किन्तु यदि हम उसकी वास्तविक आयु को देखें तो यह निर्णय कर लेंगे कि वह लड़की अपनी आयु के अनुसार, लम्बी, औसत या छोटी है। उपर्युक्त उदाहरण में यदि लड़की की आयु 10 वर्ष है तो वह अधिक लम्बी तथा यदि 13 वर्ष है तो कम लम्बी मानी जायेगी।

बहुधा आयु मानकों का उपयोग विद्यालय स्थितियों में बच्चों का बौद्धिक स्तर ज्ञात करने तथा विभिन्न प्रकार के उपलब्धि परीक्षण के प्राप्तांकों का विवेचन करने के लिए होता है। मान लीजिए, यदि एक 9 वर्ष का बालक किसी शब्द भण्डार परीक्षण पर 25 प्राप्तांक पाता है एवं किसी सामान्य समूह में इस आयु के बालक का औसत प्राप्तांक 30 है, अतः यह कथन इंगित करता है कि अमुक छात्र ने अपने आयु-स्तर से निम्न औसत अंक प्राप्त किये। यह जानने के लिए कि वह कितना निम्न औसत है, हम उस आयु समूह को ज्ञात करेंगे जो 25 प्राप्तांक के सदृश्य है। यद्यपि सदैव ऐसा सम्भव नहीं होता कि प्रत्येक प्राप्तांक सदृश्य कोई आयु समूह हो। शैक्षिक परिवेश में बच्चों की उन्नति समझने में प्राप्तांकों का विवेचन उपयोगी होता है। विभिन्न भौतिक, दैहिक एवं मनोवैज्ञानिक विशेषताओं, जैसे- लम्बाई, धार, बुद्धि आदि के लिए मानकों की अत्यधिक आवश्यकता पड़ती है।

आयु मानक किस प्रकार ज्ञात किये जाते हैं यह समझने के लिए, जी.सी. आहूजा के 13 से17 वर्ष के बच्चों के लिए 'सामूहिक बुद्धि परीक्षण' पर ज्ञात आयु मानक को उदाहरणार्थ तालिका 1 में प्रस्तुत किया जा रहा है। तालिका 1 देखने से स्पष्ट है कि आयु मानक प्रत्येक आयु स्तर के औसत व्यक्ति के निष्पादन पर आधारित होते हैं। यह उसी आयु समूह के व्यक्ति के निष्पादन एवं विवेचन की रूपरेखा प्रस्तुत करते हैं जिस आयु समूह पर आधारित हैं। चूँकि आयु मानकों को सुगमतापूर्वक ज्ञात कर लिया जाता है इसलिए इनका प्रयोग व्यापक रूप से प्रचलित है। इस प्रकार के मानकों की सर्वप्रमुख सीमा यह है कि इसमें वर्षों की वृद्धि इकाई स्पष्ट रूप से अनुपयुक्त है क्योंकि 5 से 6 वर्ष की वृद्धि 10 से 11 वर्ष के अनुरूप नहीं होती, फिर भी इनका प्रयोग प्रारम्भिक विद्यालय वर्षों तक ही उपयुक्त होता है, किशोरावस्था तथा वयस्कावस्था के पश्चात् इनका कोई महत्व नहीं होता है।

तालिका-1

आयु सीमा मानक

वर्ष	महीने से		वर्ष	महीने तक		लड़के	लड़कियाँ
13	0	-	13	2		68	66
13	3	-	13	5		69	67
13	6	-	13	8		70	68
13	9	-	13	11		71	69
14	0	-	14	2		72	70
14	3	-	14	5		73	71
14	6	-	14	8		74	72
14	9	-	14	11		74	72
15	0	-	15	2		75	73
15	3	-	15	5		76	74
15	6	-	15	8		77	74
15	9	-	15	11		77	75
16	0	-	16	2		77	75
16	3	-	16	5		78	76
16	6	-	16	8		78	76
16	9	-	above				

आयु मानकों के अनुरूप- प्रायः समस्त बुद्धि परीक्षणों में आयु मानकों 'मानसिक आयु' के रूप में तथा उपलब्धि परीक्षणों में 'शैक्षिक आयु' के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। विद्यालय में पढ़ाये जाने वाले लगभग समस्त विषयों की जाँच करने में बहुधा आयु मानकों का प्रयोग 'शैक्षिक आयु' के रूप में होता है। किसी भी विषय के उपलब्धि परीक्षण को एक विशाल सामान्य समूह पर प्रशासित कर प्रत्येक आयु स्तर के बच्चों के लिए औसत प्राप्तांक ज्ञात कर लिया जाता है। फिर, परीक्षण की भविष्य में उपयोगिता जानने

के लिए, किसी अमुक व्यक्ति के प्राप्तांकों को उसके आयु मानकों से तुलित किया जाता है। मान लीजिए एक नौ वर्ष का बालक सात वर्ष की आयु वाले बालक के समान प्राप्तांक पाता है, इसका आशय यह हुआ है कि वह अपने आयु समूह से पीछे है। इस प्रकार के आयु प्राप्तांक को अधिकांशतः व्यक्ति की शैक्षिक आयु से सम्बोधित करते हैं। यह व्यक्ति की शैक्षिक उन्नति का भी विवेचन करती है। इस प्रकार बुद्धि परीक्षणों में आयु मानकों को बहुधा 'मानसिक आयु' के रूप में प्रयोग किया जाता है। एक बालक के प्राप्तांकों को मानसिक आयु के रूप में उसके आयु मानक से तुलित करके यह ज्ञात किया जाता है कि कोई बालक अपनी आयु के औसत बालकों से अधिक या कम बुद्धि वाला है। ऐसे प्राप्तांकों को,जो इस प्रकार आयु मानकों के साथ तुलित किया जाता है, मानसिक आयु के नाम से सम्बोधित करते हैं। यदि 6 वर्ष का बालक 7 वर्ष के बालक के समान क्रियाएँ करता है तो उसकी मानसिक आयु 7 वर्ष मानी जायेगी।

इस प्रकार के मानसिक आयु मानक को आर.पी. श्रीवास्तव एवं किरन सक्सेना' ने 7 से 11 वर्ष के लिए निर्मित अपने 'सामान्य मानसिक योग्यता परीक्षण में ज्ञात किया है। जिन्हें निम्न तालिका में प्रदर्शित किया जा रहा है –

तालिका-2

मानसिक आयु मानक

मूल प्राप्तांक	मानसिक आयु	वर्ष महीने
1	4	8
5	5	4
10	6	2
15	7	-
20	7	10
25	8	8
30	8	6
35	9	4
40	11	3
45	12	-
60	14	6
80	19	6
100	24	6

11.6.2श्रेणी मानक

आयु मानक की समस्त विशेषताएँ श्रेणी मानक में निहित हैं, अन्तर केवल इतना है कि मूल प्राप्तांकों का सन्दर्भ समूह आयु समूह की अपेक्षाकृत श्रेणी समूह हो जाता है। इसमें एक परीक्षण को विद्यालय की विभिन्न कक्षाओं जैसे- सातवीं, आठवीं, नवीं एवं दसवीं के प्रतिनिधित्व समूह को देकर, प्रत्येक श्रेणी के औसत अंकों में ज्ञात कर लिया जाता है। इस प्रकार के मानकों का प्रयोग अधिकांश रूप से विद्यालयों में ही किया जाता है। इनकी विवेचना करने में श्रेणी का ध्यान रखा जाता है। यदि एक सातवीं श्रेणी का बालक नवीं श्रेणी के औसत अंकों को प्राप्त कर लेता है तो वह श्रेष्ठ बालक समझा जाता है। इसके विपरीत, यदि एक नवीं श्रेणी का बालक सातवीं श्रेणी के औसत अंकों को ही प्राप्त करता है तो वह निम्न स्तर का बालक समझा जायेगा, श्रेणी-मानक की भी लगभग वही कमियाँ हैं जो आयु मानक की। यह आवश्यक नहीं है कि समस्त श्रेणियों में वृद्धि समान रूप से हो। इनको भी अत्यधिक सुगमतापूर्वक ज्ञात किया जा सकता है। उपलब्धि परीक्षणों में अधिकांश रूप से श्रेणी मानक ही निर्धारित किये जाते हैं। इस प्रकार श्रेणी मानक प्रत्येक श्रेणी स्तर के औसत बालकों के निष्पादन से सम्बन्धित होते हैं। यहाँ पर प्रमिला आहूजा द्वारा मानकीकृत 'सामूहिक बुद्धि परीक्षण- '9 से 13' तक के बच्चों के लिए प्राप्त श्रेणी मानकों को तालिका 3 में प्रस्तुत किया जा रहा है।

श्रेणी मानक

श्रेणी	**श्रेणी मानक**	
	लड़किया	लड़के
पाँचवीं	27	27
छठी	38	38
सातवीं	50	48
आठवीं	58	58

प्राप्तांकों को श्रेणी मानकों की तुलना करने पर अध्यापक को संकेत मिलता है कि बालक किस प्रकार उन्नति कर रहा है।

श्रेणी मानक के प्रारूप- प्रायः श्रेणी मानकों को लब्धि प्राप्तांकों के रूप में व्यक्त किया जाता है। बुद्धि परीक्षणों में इन्हें बुद्धि लब्धि के नाम से जाना जाता है। इसका सूत्र निम्नांकित है।

$$\text{बुद्धि लब्धि} = \frac{\text{मानसिक आयु} \times 100}{\text{वास्तविक आयु}}$$

मान लीजिए, यदि एक आठ वर्ष का बालक किसी बुद्धि परीक्षण पर वही प्राप्तांक पाता है जो औसत दस वर्ष का बालक पाता है, तो उसकी बुद्धि लब्धि 125 है। प्रायः 100 बुद्धि लब्धि को औसत बुद्धि लब्धि माना जाता है। बुद्धि लब्धि के समान ही शैक्षिक लब्धि को निम्न सूत्र से ज्ञात किया जाता है।

$$\text{शैक्षिक लब्धि} = \frac{\text{शैक्षिक आयु } x100}{\text{वास्तविक आयु}}$$

जहाँ बुद्धि लब्धि बालकों की बुद्धि को व्यक्त करती है वहाँ शैक्षिक लब्धि विद्यालय के बच्चों की सम्बन्धित उन्नति को व्यक्त करती है।

11.6.3 शततमक या शतांशीय मानक

आयु एवं श्रेणी मानकों के द्वारा हम एक व्यक्ति के प्राप्तांक को उस आयु या श्रेणी समूह से ज्ञात करते हैं जिसमें उसके औसत को ज्ञात किया गया है किन्तु व्यक्ति को स्वयं की आयु एवं श्रेणी समूह में तुलना करने के लिए हम शतांशीय मान का प्रयोग करते हैं। यही नहीं, विभिन्न वितरणों के प्राप्तांकों के मध्य तुलना करने के लिए शतांशीय को अत्यधिक सरल विधि समझा जाता है। इसी प्रकार, शैक्षिक स्थितियों में जब कई छात्रों का अध्ययन किया जाये या विभिन्न विद्यालयों के छात्रों के मध्य तुलना की जाये तो यह उपयोगी रहता है कि उन क्रमों को शततक्रम में रूपान्तरित किया जाये, साधारण रूप से, "शतांशीय, मापनी पर ऐसा बिन्दु है जिसके नीचे किसी वितरण का एक निश्चित प्रतिशत पड़ता है" । किसी भी प्राप्तांक की गणना करने के लिए हमें मध्यांक, चतुर्थांश तथा शतांशीय ज्ञात करनी होता है तथा उस प्रतिशत की गणना भी की जाती है जो प्राप्तांक के नीचे होते हैं क्योंकि कोई भी व्यक्ति जो उस प्राप्तांक को पाता है वह उसका शतांशीय मूल्य होता है। उदाहरणार्थ, दुर्गानन्द सिन्हा एवं मीरा वर्मा के "नैतिक निर्णय परीक्षण" पर तीन आयु समूहों के शतांशीय मानक निम्न प्रकार ज्ञात किये गये-

तालिका-4

परीक्षण प्राप्तांकों के समानार्थक शतांशीय

शतांशीय मूल प्राप्तांक	**6-7 वर्ष**	**8-9 वर्ष**	**10-11 वर्ष**	**विवेचन**
99	33.50	44.50	53.00	Very high ability of moral judgement
95	29.50	410.15	48.00	
90	27.25	37.60	45.50	
80	22.25	45.50	40.85	High ability of moral judgment
75(Q3)	19.50	311.55	38.45	
70	18.40	30.00	37.40	Average ability of moral judgment
60	16.20	27.00	34.50	
50(Mdn)	14.20	24.10	30.35	
40	12.75	22.12	27.80	low ability of moral judgment
30	110.25	20.00	25.45	
25(Q3)	10.50	19.25	24.15	Very low ability of moral judgment
20	9.80	17.90	22.50	
10	7.10	5.52	18.25	
1	4.50	4.60	9.50	
N	100	100	100	
Mean	15.75	25.30	310.55	
Median	14.20	24.10	30.35	
SD	7.05	8.65	10.00	

अतएव हम उपर्युक्त परीक्षण में देखते हैं कि 6-7 वर्ष आयु समूह के बच्चों का 10.50 मूल प्राप्तांक 25th शतांशीय 8-9 वर्ष आयु समूह के बच्चों का 27.00 मूल प्राप्तांक 60th शतांशीय एवं 10-11 वर्ष आयु समूह के बच्चों का 48.00 मूल प्राप्तांक 95th शतांशीय के सदृश है।

शतांशीय मानकों का प्रयोग लगभग समस्त प्रकार के मनोवैज्ञानिक एवं शैक्षिक परीक्षणों में व्यापक रूप से किया जाता है। चूँकि इनका प्रयोग एक ही सामान्य समूह के समस्त व्यक्तियों पर प्रत्येक

स्थिति में सम्भव होता है, इसलिए इनके सम्बन्ध में कहा जा सकता है कि ‘‘शतांशीय मानक किसी विशेष समूह में व्यक्ति के प्राप्तांकों के विवेचन का आधार प्रदान करते हैं’’ अतएव शतांशीय मान किसी विशेष समूह के व्यक्ति के फलांकों की विवेचना करते हैं। यदि एक परीक्षण को विभिन्न आयु, श्रेणी, व्यवसाय या धार्मिक समूह पर प्रशासित करें तो विभिन्न समूहों पर आधारित शतांशीय मान ज्ञात करने के लिए अनेक तालिकाओं की आवश्यकता होगी।

11.6.4 प्रतिमान प्राप्तांक मानक

शतांशीय मानक की सबसे प्रमुख कमी यह है कि इसमें प्राप्तांकों की इकाई स्पष्ट रूप से समान नहीं होती है, अतएव परीक्षण निर्माता को ऐसी इकाइयों की ओर दृष्टिपात करना होता है जो समस्त प्रसार तक समरूप से अर्थपूर्ण हो। इसी उद्देश्य हेतु प्रतिमान प्राप्तांक मानकों का प्रयोग आज अत्यधिक प्रचलित हैं। इन मानकों को z प्राप्तांक मानक से ही सम्बोधित किया जाता है। यह मानक विचलन किसी समूह के प्राप्तांकों के प्रसार का एक मापन है। प्रतिमान प्राप्तांक मानक सामान्यीकृत समूह पर आधारित होते हैं। इस प्रकार के मानकों को z प्राप्तांक(z score) मानक के रूप में ज्ञात किया जाता है। उदाहरण के लिए प्रमिला आहूजा के ’सामूहिक बुद्धि परीक्षण 9 से 13 वर्ष के बच्चों के लिए, पर प्रतिमान प्राप्तांकों को z प्राप्तांक के रूप में निम्न प्रकार ज्ञात किया गया।

तालिका-5

विचलन प्राप्तांक का सिगमा प्राप्तांकों में रूपान्तरण

सम्बन्धित मानक से किसी प्राप्तांक का विचलन	सिगमा प्राप्तांक	ऋणात्मक
0	0.00	0.00
1	0.05	0.05
5	0.27	0.27
10	0.54	0.54
15	0.81	0.81
20	10.07	10.07
25	10.34	10.34
30	10.61	10.61
40	2.15	2.15

50	2.69	2.69
55	2.95	2.95
60	3.22	3.22
65	3.49	3.49
70	3.76	3.76
74	3.97	3.97

इस प्रकार से शतांशीय मानकों की भाँति प्रतिमान मानक भी किसी विशेष समूह के सन्दर्भ में व्यक्ति के प्राप्तांकों के आधार पर उसके निष्पादन की विवेचना करते हैं। चूँकि ये बिल्कुल समान इकाइयों को व्यक्त करते हैं, इसलिए ये शतांशीय से भिन्न होते हैं। इसकी मूल इकाई सन्दर्भ समूह का मानक विचलन है तथा व्यक्ति का प्राप्तांक समूह के मध्यमान से नीचे तथा ऊपर मानक विचलन इकाइयों की संख्या में व्यक्त होता है।

प्रतिमान प्राप्तांक मानकों को सिग्मा प्राप्तांक मानक के अतिरिक्त अन्य मानकों में भी व्यक्त किया जा सकता है। अतः अन्य प्रकार के मानकों का उदाहरण सहित वर्णन करेंगे।

(अ) T प्राप्तांक मानक

(ब) स्टेन प्राप्तांक मानक

(स) स्टेनाइन प्राप्तांक मानक

(द) बुद्धि लब्धि विचलन मानक

(अ) T प्राप्तांक मानक - इस प्रकार के मानक का प्रयोग मेंक्कॉले ने किया। ये वे मानक हैं जिनके प्राप्तांकों को सामान्यीकृत समूह में प्राप्त किया जाता है तथा जिनका मध्यमान 50 एवं मानक विचलन 10 होता है। उदाहरण के लिए, तालिका 6 में ओझा एवं रे चौधरी के शाब्दिक बुद्धि परीक्षण पर प्राप्त T प्राप्तांक मानकों को प्रस्तुत किया जा सकता है।

(ब) स्टेन प्राप्तांक मानक - इस प्रकार के मानक का प्रयोग सर्वप्रथम आर.बी. कैटिल ने किया था। ये मानक उस सामान्यीकृत समूह पर आधारित होते हैं जिनका मध्यमान 5 तथा मानक विचलन 2 होता है इस प्रकार के मानकों में मूल प्राप्तांकों को 1से 10 तक के स्टेन प्राप्तांकों में तथा कभी-कभी इन स्टेन प्राप्तांकों को शतांशीय में रूपान्तरित कर दिया जाता है। स्टेन मापनी पर औसत प्राप्तांक 5.5 होता है न कि 5.0, क्योंकि इन दस बिन्दुओं के प्रसार में कोई भी शून्य नहीं होती है। 4, 5, 6 एवं 7 अंक वालों को औसत 1, 2, 3 वालों को निम्न तथा 8, 9 एवं 10 वालों को उच्च श्रेणी में रखा जाता है।

(स) स्टेनाइन प्राप्तांक मानक - स्टेनाइन प्राप्तांक मानक नौ बिन्दुओं पर आधारित होता है। इसमें बिन्दु निम्नतम से उच्चतम के क्रम में बढ़ते हैं। शतांशीय की भाँति इसकी इकाइयाँ समान होती हैं। जैसे- 8 एवं

9 इकाई में वही अन्तर होगा जो 4 एवं 5 इकाई में, अतः स्टेनाइन में समस्त मापनी तक समान अन्तर ही प्रदर्शित होता है। इस प्रकार के मानकों को उदहारणस्वरूप चटर्जी के 'अभाषिक प्राथमिकता प्रपत्र' 962 से प्रस्तुत किया जा रहा है। (देखिए तालिका 8) स्टेनाइन की तैयारी तथा विवेचना सुगम तथा शीघ्र हो जाती है, जब एक समूह के छात्रों पर गणना की जाये, तो स्टेनाइन पर्याप्त रूप से शुद्ध तथा परीक्षण से परीक्षण सीधे तुलना योग्य होती है। जब भी स्थानीय मानकों की आवश्यकता होती है या चयन उद्देश्यों में जहाँ कि विभिन्न परीक्षणों के अंक जोड़े जायें स्टेनाइन का प्रयोग अत्यन्त उपयोगी रहता है।

तालिका-6

विभिन्न आयु के अनुसार T प्राप्तांक मानक

मूल प्राप्तांक	T प्राप्तांक मानक						
	13	14	15	16	17	181	19	20
115	88	84	82	80	76	74	72	70
110	84	90	78	76	72	70	68	66
105	80	76	74	72	68	66	64	62
100	76	72	70	68	64	64	60	58
95	72	68	66	64	60	58	56	54
90	68	64	62	60	56	54	52	50
85	64	60	58	56	52	50	48	46
80	60	56	54	52	48	46	44	42
75	56	52	50	48	44	42	40	38
70	52	48	46	44	40	38	36	34
65	48	44	42	40	35	33	31	29
60	48	40	38	35	30	28	26	24
55	40	36	33	30	25	23	21	19
50	35	31	28	25	20	18	16	14
45	30	26	23	20	15	13	11	9

40	26	22	19	16	11	9	7	5
35	21	17	15	12	6	5	3	1
30	17	13	11	8	2	1	-	-
25	12	9	7	4	-	-	-	-
20	8	4	3	-	-	-	-	-
15	4	-	-	-	-	-	-	-
10	-	-	-	-	-	-	-	-
5	-	-	-	-	-	-	-	-

(द) बुद्धि लब्धि विचलन मानक - यह पहले ही कहा जा चुका है कि बुद्धि परीक्षण में प्रायः मानकों को बुद्धि लब्धि के रूप में बिने के अनुसार व्यक्त किया जाता था किन्तु उसकी विधि में कई कमियाँ पाये जाने के फलस्वरूप वैश्लर ने बुद्धि लब्धि विचलन के आधार पर मानकों के प्रयोग का सुझाव दिया। इस पद्धति के प्रयोग में समूह का मध्यमान 100 तथा मानक विचलन 25 निश्चित होता है। इस प्रकार पी.एन. मेहरा के 'मिश्रित प्रकार के सामूहिक बुद्धि परीक्षण 11 से 17+ आयु वालों के लिए प्रस्तुत किया जा रहा है।

अतः हमने लगभग समस्त प्रचलित मानकों के स्वरूप पर उदाहरण सहित प्रकार डाला किन्तु मानकों के स्वरूप को समझने से पूर्व हमें परीक्षण प्राप्तांकों के स्वरूप का अध्ययन करना अत्यन्त आवश्यक होगा। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि जब तक परीक्षण निर्माता परीक्षण प्राप्तांकों के स्वरूप को नहीं समझ पाता परीक्षण का विवेचन भी वह शुद्ध रूप से नहीं कर सकता है।

तालिका-7

विभिन्न रूचि में स्टेनाइन प्राप्तांक मानक

क्षेत्र स्टेनाइन प्राप्तांक

क्षेत्र	1	2	3	4	5	6	7	8	9
FA	0.06	7.16	110.14	15.19	20.25	26.30	310.35	36.41	42&+
L	0.18	19.22	23.26	27.29	30.33	34.37	38.40	410.43	44&+
S	0.17	18.23	24.30	310.38	39.46	47.54	55.62	63.68	69&+
M	0.15	16.21	22.28	29.36	37.45	46.52	53.69	66.66	67&+
AG	0.12	13.15	16.17	18.21	22.24	25.28	29.31	32.35	36&+
T	0.10	110.13	14.16	17.20	210.25	26.32	33.40	410.47	48&+
C	0.8	9.11	12.13	13.15	16.19	20.23	24.29	30.33	34&+
OD	0.2	3.5	6.9	10.14	15.20	210.38	29.35	36.44	45&+
S	0.4	4.8	9.12	13.18	19.25	26.31	32.38	36.46	47&+
HW	0.6	7.10	110.13	14.17	18.21	22.26	27.31	32.31	38&+

तालिका-8

आयु के अनुसार बुद्धि लब्धि विचलन मानक (शाब्दिक बुद्धि परीक्षण पर)

मूल प्राप्तांक	आयु						
	11	12	13	14	15	16	17+
2	79	73	72	67	66	69	61
4	82	77	75	72	70	72	64
6	85	80	78	75	73	75	67
8	88	84	81	79	76	76	70
10	91	88	85	82	79	79	73

12	94	91	88	87	83	82	76
14	97	94	91	91	87	85	79
16	100	98	94	94	90	88	82
18	103	101	98	97	93	91	85
20	106	105	102	101	96	94	88
22	109	108	105	104	100	96	91
24	112	112	108	108	103	98	94
26	115	115	111	112	106	100	97
28	118	118	115	115	109	103	100
30	121	122	118	119	113	106	103
32	124	125	121	122	116	109	106
34	127	129	124	127	119	112	109
26	130	133	128	130	123	114	112
38	133	136	131	134	127	117	115
40	136	139	134	138	120	120	117
42	139	143	137	142	133	122	120
44	142	146	141	145	136	124	123
46	143	149	145	148	139	127	126
48	148	152	148	152	143	130	129

11.7 सार संक्षेप

- परीक्षण मानकीकरण एक ऐसी प्रकिया जिसकी विषय वस्तु विधि व निष्कर्ष सभी निश्चित होते हैं।
- परीक्षण मानकीकरण की प्रकिया के तीन पहलू हैं- परीक्षण सामग्री का मानकीकरण, परीक्षण विधियों का मानकीकरण तथा निष्कर्षों का मानकीकरण।

- मानक से तात्पर्य कार्य के उस नमूने से है जिसे समस्त समूहों के द्रारा प्रदर्शित किया गया है।
- मानक के चार प्रकार हैं आयु मानक, श्रेणी मानक, शतांशीय मानक तथा प्रतिमान प्राप्तांक मानक

11.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न-

अ. मानक को परिभाषित कीजिए तथा उसकी परीक्षण निर्माण मे उपयोगिता बताइए।

द. मानक निर्माण की विधियों का वर्णन कीजिए।

11.9 पारिभाषिक शब्दावली

मानक-मानक ऐसी प्रक्रिया है जिस में परीक्षण की विषय वस्तु, निष्कर्ष व उपयोगिता निश्चित होती है।

11.10 संदर्भ ग्रंथ

(1) फ्रीमैन, फैंक एस) .1971) थ्योरी एण्ड प्रैक्टिस ऑफ साइकोलोजिकल टेस्टिंग, नई दिल्ली, आक्सफोर्ड।

(2)भार्गव महेश)2001) आधुनिक मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं मापन आगरा, नेशनल।

इकाई 12:- मनोवैज्ञानिक परीक्षण का अर्थ, विशेषताएँ एवम उपयोगिताएँ, परीक्षण निर्माण के सामान्य चरण

इकाई संरचना

12.1 प्रस्तावना

12.2 उद्देश्य

12.3 मनोवैज्ञानिक परीक्षण के अर्थ

12.4 मनोवैज्ञानिक परीक्षण की विशेषताएँ

12.5 मनोवैज्ञानिक परीक्षण की उपयोगिता

12.6 मनोवैज्ञानिक परीक्षण के प्रकार।

12.7 परीक्षण निर्माण के सामान्य प्रकार।

12.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

12.9 सांराश

12.10 शब्दावली

12.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

12.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

12.13 लघु-उत्तरीय / दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

12.1 प्रस्तावना:-

मनोविज्ञान में व्यवहारपरक वैज्ञानिक अध्ययनों के लिए मनौवैज्ञानिक परीक्षणों की आवश्यकता होती है। मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की आवश्यकता का उद्गम वैयक्तिक विभिन्नताओं से सम्बन्धित समस्याओं के निदान के फलस्वरूप हुआ। फ्रांसिस गाल्टन (1884) ने वैयक्तिक भिन्नताओं के सन्दर्भ में अपने सामान्य त्रुटि सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। इन्होंने वैयक्तिक भिन्नताओं के अध्ययन के लिए व्यक्ति से संबंधित अनेक विमाओं जैसे बुद्धि, अभिक्षमता, व्यक्तित्व आदि का मापन एवं मूल्यांकन किया तथा इस उद्वेश्य की पूर्ति के लिए इनसे सम्बन्धित परीक्षणों का विकास किया। मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के विकास को सही दिशा 20 वी शताब्दी में ही प्राप्त हुई। 1901 से 1917 के बीच मानकीकृत परीक्षणों ने ही मापन एवं मूल्यांकन को एक नई ऊँचाई दी।

प्रथम विश्व युद्ध एवं द्धितीय विश्वयुद्ध (1918-1946) तक मनोविज्ञान के क्षेत्र में अनेक महत्वपूर्ण मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का निर्माण एवं मानकीकरण किया गया। इन परीक्षणों का प्रयोग व्यक्ति के अभिरूचि, मूल्य, व्यक्तित्व, अभिक्षमता, बुद्धि आदि के मापन एवं मूल्यांकन में किया गया। द्धितीय विश्वयुद्ध के पश्चात मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के विकास में क्रान्ति आ गई। वर्तमान तक अनेक मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का निर्माण हो चुका है जिसके माध्यम से व्यक्ति के जीवन से संबंधित सभी पहुलओं का अध्ययन सार्थक तरीके से किया जा सकता है।

12.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात हम जान सकेगें कि –

- मनोवैज्ञानिक परीक्षण से तात्पर्य क्या है ?
- मनोवैज्ञानिक परीक्षण की कौन-कौन सी विशेषताएं है ?
- मनोवैज्ञानिक परीक्षण की उपयोगिता क्या है ?
- परीक्षण कितने प्रकार के होते हैं?
- परीक्षण के प्रमुख चरण कौन कौन से होते हैं ?

12.3 मनोवैज्ञानिक परीक्षण का अर्थ: व्यहारपरक

व्यवहारपरक विज्ञानों में शोध समस्याओं का वैज्ञानिक अध्ययन करने के लिए तथा उसमें सम्बन्धित महत्वपूर्ण तथ्य एवं ऑकडे संग्रह करने के लिए परीक्षणों का उपयोग किया जाता है। मनोवैज्ञानिक परीक्षण के माध्यम से व्यक्ति की विभिन्न योग्याताओं का मापन एवं उसके व्यक्तित्व और चरित्र का अध्ययन किया जाता है। मनोवैज्ञानिक परीक्षण एक मानकीकृत विधि है जिसके द्वारा व्यक्ति की एक या एक से अधिक मनोवैज्ञानिक गुणों का गुणात्मक या परिणात्मक ढंग से कुछ शाब्दिक या अशाब्दिक प्रतिक्रियाओं के माध्यम से मापन किया जाता है दूसरे शब्दों में मनोवैज्ञानिक परीक्षण के माध्यम से दो या दो से अधिक शीलगुणों का आपस में तुलना की जाती है। मनोवैज्ञानिक परीक्षण को और अधिक अच्छी तरह से समझने के लिए कुछ प्रमुख मनोवैज्ञानिकों के विचारों का उल्लेख करना आवश्यक है जो निम्न हैं–

ऐनेस्टेसी(Anastasi,1971) के अनुसार "मनोवैज्ञानिक परीक्षण आवश्यक रूप से व्यवहार के प्रतिदर्श का एक वस्तुनिष्ठ एवं मानवीकृत मापन है" क्रोनबेक Cronbach's) के अनुसार, " दो या दो से अधिक व्यक्तियों के व्यवहार का तुलनात्मक अध्ययन करने की व्यवस्थित प्रक्रिया को परीक्षण कहते हैं। फ्रीमैन के शब्दों में "मनोवैज्ञानिक परीक्षण वह मानकीकृत यन्त्र होता है जो सम्पूर्ण व्यक्तित्व के एक या अधिक पहलुओं का मापन शाब्दिक या अशाब्दिक अनुक्रियाओं या अन्य प्रकार के व्यवहार के माध्यम से करता है।"

बीन (1923) के अनुसार, "कुछ मानसिक प्रक्रिया शीलगुण या विशेषताओं का गुणात्मक मूल्यांकन करने या परिमाणात्मक ढंग से मापने के लिए उद्दीपनों का संगठित अनुक्रम ही मनोवैज्ञानिक परीक्षण है। "

उपरोक्त परिभाषाओं एवं विचारों से स्पष्ट है कि मनोवैज्ञानिक परीक्षण वह वस्तुनिष्ठ एवं मानकीकृत माध्यम है जिसके द्वारा व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यवहार के विभिन्न मनोवैज्ञानिक पक्षों जैसे - योग्यताओं, रूचियों, क्षमताओं, उपलब्धियों, अभिवृत्तियों एवं व्यक्तित्व विशेषताओं का परिमाणात्मक एवं गुणात्मक अध्ययन किया जाता है।

12.4 मनोवैज्ञानिक परीक्षण की विशेषताएँ -

किसी भी अच्छे मनोवैज्ञानिक परीक्षण के लिए निम्न गुण या विशेषताओं का होना आवश्यक होता है–

1. **वस्तुनिष्ठता** - मनोवैज्ञानिक परीक्षण में वस्तुनिष्ठता का गुण होना आवश्यक होता है। वस्तुनिष्ठता से आशय परीक्षकों के बीच आपसी सहमति से होता है। मनोवैज्ञानिक परीक्षण तभी वस्तुनिष्ठ होता है जब परीक्षण पर परीक्षकों के पूर्वाग्रह, पक्षपात आदि के प्रभाव का अभाव होता है। वस्तुनिष्ठता दो प्रकार की होती है-

i. **एकांशों की वस्तुनिष्ता**:- जिस एकांश या पद के बारे में सभी व्यक्तियों के द्वारा एक ही अर्थ प्रदान किया जाय उसे एकांश की वस्तुनिष्ठता कहते हैं। ऐसा तभी संभव हो सकता है जब सभी पद या एकांश स्पष्ट और सरल शब्दों में हो तथा उनमें बहुल शब्द न हों। एकांशों में पूर्ण वस्तुनिष्ठता के लिए पदों का विश्लेषण भी किया जाता है। पद या एंकाश विश्लेषण एक ऐसी सांख्यिकीय प्रविधि है जिसके माध्यम से ऐसे एंकाशों को अलग कर दिया जाता है जिससे परीक्षण के उद्देश्य की प्राप्ति नही हो सकती है।

ii. **प्राप्तांक अंकन की वस्तुनिष्ठता:-** प्राप्तांक लेखन में वस्तुनिष्ठकता के लिए परीक्षण निर्माणकर्ता प्रत्येक एकांश के लिए एक निश्चित उत्तर तैयार करता है और उसके लिए एक निश्चित अंक भी निर्धारित करता है। जैसे 0, 1, 2, 3, 4, 5 आदि।

2. **विश्वसनीयता**:- विश्वसनीयता से तात्पर्य प्राप्तांकों में संगति से है। दूसरे शब्दों मे यदि किसी परीक्षण को किसी एक व्यक्ति या एक ही समूह पर बार-बार प्रशासित किया जाय और प्रत्येक बार लगभग एक जैसा ही परिणाम प्राप्त हो तो उस परिणाम को विश्वसनीय कहाँ जाता है। परीक्षण की विश्वसनीयता को सह संबंध गुणांक के रूप में व्यक्त किया जाता है। कोई भी मनोवैज्ञानिक परीक्षण 100 प्रतिशत विश्वसनीय नही होता है इसी कारण से विश्वसनीयता गुणांक को दशमलव के रूप में ही व्यक्त् किया जाता है। यह गुणांक जितना अधिक होता है परीक्षण उतना ही अधिक विश्वसनीय होता है जैसे .80, .90, .95 आदि। मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की विश्वसनीयता को विभिन्न विधियों जैसे - पुनः परीक्षण, समान्तरण विधि, अर्द्धविच्छेद विधि आदि द्वारा ज्ञात किया जाता है।

3. **वैधता** - प्रत्येक परीक्षण का निर्माण किसी निश्चित उद्देश्य की पूर्ति हेतु किया जाता है। उस परीक्षण से जिस सीमा तक उस उद्ददेश्य की पूर्ति होती है उसी सीमा तक उस परीक्षण को वैध माना जाता है। यदि किसी परीक्षण का निर्माण बुद्धि परीक्षण के लिए किया जाता है। तो उस परीक्षण के माध्यम से बुद्धि का ही मापन हो न कि उपलब्धि, अभिवृत्ति या व्यक्तित्व का वैधता ज्ञात करने के लिए सह संबध विधि का उपयोग कि जाता है। प्राप्त सहसंबंध गुणाक जितना ही अधिक होता है परीक्षण को उतना ही वैध माना जाता है।
4. **मानक** - कोई भी परीक्षण मानकों के अभाव में पूर्ण नही माना जाता है। किसी प्रतिनिधिक प्रतिदर्श के परीक्षण पर प्राप्त औसत प्राप्तांक को उसी परीक्षण के मानक की संज्ञा दी जाती है। मानक का उद्देश्य परीक्षण पर प्राप्त मूल प्राप्तांक की व्याख्या करना होता है जैसे -यदि ग्रामीण छात्रों का औसत किसी परीक्षण पर 50 एवं शहरी छात्रों का प्राप्तांक 55 है तो दोनों समूहों के लिये ये मान उस परीक्षण के लिए मानक होते हैं। यदि भविष्य में इस परीक्षण का उपयोग ग्रामीण एवं शहरी छात्रों पर किया जाता है तब इनके द्वारा अर्जित प्राप्ताकों की तुलना पूर्व में प्राप्त प्राप्तांकों से निर्मित मानकों से भी की जाती है। मनोवैज्ञानिक परीक्षणों में मानक के कई प्रकार के होते हैं , जैसे- आयु, मानक, वर्गमानक, शत मानक, प्रमाणिक प्राप्तांक मानक आदि।
5. **मानकीकरण**:- किसी परीक्षण को निर्मित करने की प्रक्रिया के अंत में उसे मानकीकृत किया जाता है। इसके अन्तर्गगत एकाशों का विश्लेषण करके उनकी कठिनता स्तर और विभेदन शक्ति की जांच की जाती है। मानकीकरण के लिए नवनिर्मित परीक्षण को किसी बड़े समूह पर प्रशास्ति किया जाता है।
6. **व्यवहारिकता-** एक अच्छे परीक्षण में व्यवहारिकता का होना आवश्यक होता है। परीक्षण के क्रियान्वयन में कम समय लगना चाहिए, एकांशो की संख्या बहुत अधिक नही होनी चाहिए, परीक्षण की अंकन विधि संरल हो तथा परीक्षण मित्व्ययी हो। इनके होने से परीक्षण की उपयोगिता बढ़ जाती है।

12.5 मनोवैज्ञानिक परीक्षण की उपयोगिता

आधुनिक युग में जटिल समस्याओं के समाधान एवं मानव समायोजन को बनाये रखने में परीक्षण की उपयोगिता बढ़ गई है। आज मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का उपयोग शिक्षा, सेना, उद्योग, मानसिक चिकित्सा, व्यवहार सेवा, तथा अनुसन्धान कार्यो में बहुतायत मात्रा में किया जाता है। मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का उपयोग मुख्य रूप से निम्न क्षेत्रों में किया जाता है।

1. **अभिक्षमता के मूल्यांकन हेतु:-** किसी भी कार्य को करने के लिए व्यक्ति में एक निश्चित प्रकार की अभिक्षमता का होना आवश्यक होता है। अभिक्षमता परीक्षण किसी व्यक्ति की वर्तमान योग्यताओं एवं विशेषताओं का मापन करता है। इस परीक्षण से प्राप्त परिणाम के आधार पर यह

अनुमान लगाया जा सकता है कि भविष्य में वह कितना उस विशेष कार्य के लिए उपयोगी हो सकता है। अभिक्षमता परीक्षण से प्राप्त परिणामों के आधार पर ही छात्रों के अध्ययन के लिए वैकल्पिक विषयों के चयन के लिये परामर्श दिया जा सकता है।

2. **नियोजन कि लिए चयन के क्षेत्र में:-** विद्यालयों में छात्र-छात्राओं के वर्गीकरण, रूचि एवं क्षमताओं के अनुकूल उपर्युक्त विषयों का चयन करने, शिक्षा का माध्यम निर्धारित करने, किसी विषय में समस्या का निदान करने, शिक्षक का मूल्यांकन करने, बुद्धि एवं क्षमता के अनुसार शिक्षा प्रदान करने जैसे विभिन्न समस्याओं को दूर करने हेतु मनोवैज्ञानिक परीक्षण का उपयोग किया जाता है।
3. **निर्देशन के क्षेत्र में:-** मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का उपयोग विभिन्न तरह के निर्देशनों जैसे व्यवसायिक निर्देशन, व्यक्तिगत निर्देशन, वैवाहिक समायोजन निर्देशन, पारिवारिक समायोजन निर्देशन, शैक्षिक निर्देशन आदि क्षेत्रों में किया जाता है।
4. **पूर्वकधन करने में:-** मनोवैज्ञानिक परीक्षण के माध्यम से शोधकर्ताओं को कुछ पूर्वानुमान लगाने में भी सहयोग मिलता है। किसी व्यक्ति की बुद्धि, अभिक्षमता आदि का मनोवैज्ञानिक परीक्षण द्वारा उसकी भावी सफलताओं के बारें में अनुमान लगाया जा सकता है।
5. **शोध कार्यो में प्रयोग**:- समाज विज्ञान के क्षेत्र में मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के माध्यम से नए-नए सिद्धान्तों तथा प्रविधियों के शोध में काफी अधिक सहायता मिलती है। ये शोधों के लिए प्रदत्तों को एकत्रित करने में बहुत उपयोगी होते हैं । गुलिकसन (1954) के अनुसार मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का शोध के साथ दोहरा संबंध है। बहुत से मनोवैज्ञानिक परीक्षण शोध के फलस्वरूप पैदा हुए हैं तथा मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के आधार पर बहुत से नये-नये सिद्धान्तों का जन्म हुआ है जिन पर शोध किया जा सकता है।
6. **निदान के क्षेत्र में:-** मनोवैज्ञानिक परीक्षण व्यक्ति के जीवन की विभिन्न समस्याओं जैसे-सीखने की समस्या, व्यवहार की समस्या, एवं व्यक्तिगत समस्याएँ जो व्यक्ति के समायोजन में बाधा उत्पन्न करती हैं उनके निवारण एवं समाधान हेतु उपयोग किया जाता है। मानसिक रोगियों के कई लक्षणों को समझने के लिए भी परीक्षणों का प्रयोग किया जाता है।

12.6 मनोवैज्ञानिक परीक्षण के प्रकार:-

मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का वर्गीकरण एक जटिल समस्या है। मनोवैज्ञानिकों एवं शिक्षाविदों ने परीक्षणों को विभिन्न कसौटियों के आधार पर कई भागों में वर्गीकृत किया है। जो निम्न प्रकार है-

I. **प्रशासन के आधार पर:-** इस कसौटी के आधार पर परीक्षणों को निम्नलिखित दो भागों में बाँटा जा सकता है।

i. **वैयक्तिक परीक्षण:-** वैयक्तिक परीक्षण के अन्तर्गत एक समय पर एक ही व्यक्ति पर परीक्षण प्रशासित किया जाता है। जैसे सभी निष्पादन परीक्षण या बुद्धि के कुछ शाब्दिक परीक्षण इसी श्रेणी के अन्तर्गत आते हैं इन परीक्षणों के प्रयोग में समय या श्रम अधिक लगता है वैयक्तिक परीक्षण का प्रयोग करने के लिए परीक्षक को अधिक कुशल एवं प्रशिक्षित होना चाहिए। इस तरह के परीक्षण को प्रायः स्कूल मनोवैज्ञानिकों या परामर्शदाताओं द्वारा छोटे-छोटे बच्चों को प्रेरित करने तथा उन्हें किसी प्रकार से परीक्षण परिस्थिति के प्रति अनुक्रिया करने आदि के अध्ययन के लिए किया जाता है। चूँकि इन परीक्षणों द्वारा व्यक्ति व्यवहार का गूढ़ एवं गहन अध्ययन होता है इसलिए इनकी विश्वसनीयता एवं वैधता भी अधिक होती है।

ii. **समूह परीक्षण:-** समूह परीक्षण ऐसे परीक्षण को कहा जाता है जिसे एक समय पर एक से अधिक व्यक्तियों पर प्रशासित किया जा सकता है। ऐसे परीक्षणों में समय और श्रम की बचत होती है। ऐसे परीक्षणों के निर्माण से सेना में भर्ती के लिए या उद्योगों में कर्मचारियों के चयन हेतु या विद्यालयों में प्रवेश हेतु एक साथ अनेक व्यक्तियों पर करना संभव होता है। आज के इस व्यस्त युग में समय की बचत, धन की बचत हेतु प्रशिक्षित व्यक्तियों द्वारा प्रशासन सामूहिक रूप से किया जाता है। इस तरह के परीक्षणों के अन्तर्गत आर्मी अल्फा, आर्मी बीटा, मोहनचन्द्र जोशी द्वारा निर्मित सामान्य मानसिक योग्यता परीक्षण तथा एस. जलोटा द्वारा निर्मित मानसिक बुद्धि परीक्षण, समूह परीक्षण को शामिल किया जा सकता है।

II. **फलांकन की कसौटी के आधार पर:-** फलांकन की कसौटी के आधार पर परीक्षण को निम्नांकित दो भागों में विभक्त किया जा सकता है।

i. **वस्तुनिष्ठ परीक्षण:-** वस्तुनिष्ठ परीक्षणों में फलांकन विधि स्पष्ट होती है जिसके कारण परीक्षकों के आत्मगत निर्णय का प्रभाव नही पड़ता हैं। ऐसे परीक्षणों के पदों का उत्तर का फलांकन में सभी परीक्षक एक ही निष्कर्ष पर पहुँचते हैं। इसके अन्तर्गत बहुविकल्प एकांश, सही-गलत एकांश तथा मिलान एकांश वाले परीक्षण आते हैं।

ii. **आत्मनिष्ठ परीक्षण:-** इस प्रकार के परीक्षणों के फलांकन में एकाशों के उत्तरों के मूल्यांकन करने के लिए परीक्षक का निर्णय महत्वपूर्ण होता है। इस प्रकार के परीक्षण में अंक देने की विधि में काफी भिन्नता पायी जाती है। जिसके वजह से पक्षपात की संभावना बढ़ जाती है। कक्षा में छात्र-छात्राओं की उपलब्धि की जाँच के लिए निबन्धात्मक परीक्षा आत्मनिष्ठ परीक्षण इसका उदाहरण है।

III. **अनुक्रिया देने के समय की कसौटी के आधार पर:-**परीक्षण पदों के प्रति अनुक्रिया करने की समय सीमा के आधार पर परीक्षण को दो भागों में बाँटा जा सकता हैं।

i. **क्षमता परीक्षण:-** क्षमता परीक्षण का उद्देश्य यह पता लगाना होता है कि कोई परीक्षार्थी किसी निश्चित विषय क्षेत्र में किस मात्रा में क्षमता रखता है। दूसरे शब्दों में क्षमता परीक्षण वैसे परीक्षण को कहा जाता है जिसके सभी एकांशों का उत्तर देने का पर्याप्त समय छात्रों को दिया जाता है। ऐसे पदों की कठिनता स्तर भिन्न-भिन्न होता है। शक्ति परीक्षण के प्रश्न बढ़ती हुई कठिनाई के क्रम में व्यवस्थित रहते हैं । इस परीक्षण का मुख्य उद्देश्य यह मापना होता है कि व्यक्ति को किसी वस्तु, तथ्य, घटना आदि के विषय में कितना ज्ञान है।

ii. **गति परीक्षण**:- गति परीक्षण के अन्तर्गत एक निश्चित समय सीमा होती है और प्रयोज्य उसी समय सीमा के अन्तर्गत किसी परीक्षण के एकांशों के प्रति अनुक्रिया देता है। ऐसे परीक्षण का मुख्य उद्देश्य यह मालूम करना होता है कि कितनी शीघ्रता से प्रयोज्य किसी दिये हुए कार्य को कर सकता है। लिपिक अभिक्षमता परीक्षण इसी श्रेणी के परीक्षण होते हैं ।

IV. **एकांशों या पदों के स्वरूप की कसौटी के आधार पर:-**एकांशों या पदों के स्वरूप के आधार पर परीक्षण को निम्नंकित चार भागों में बांटा जा सकता है।

i. **शाब्दिक परीक्षण**:- ऐसे परीक्षणों के अन्तर्गत प्रयोजय एकांश एंव निर्देश को स्वंय पढ़ता है तथा उसे समझकर उसका उत्तर देता है। ऐसे परीक्षण द्वारा उन क्षमताओं का मापन होता है जिसमें पढ़ने एवं लिखने का महत्व अधिक होता है। ऐसे परीक्षणों के अन्तर्गत जलोटा सामूहिक सामान्य मानसिक क्षमता परीक्षण, मेहता सामूहिक बुद्धि परीक्षण, पेपर-पेन्सिल परीक्षण आदि को सम्मिलित किया जा सकता है।

ii. **अशाब्दिक परीक्षण:-** अशाब्दिक परीक्षणों के अंतर्गत भाषा को लिखित रूप में प्रयोग नही किया जाता है। ऐसे परीक्षणों के अन्तर्गत निर्देश को छोड़कर सम्पूर्ण सामग्री को चित्रों, ज्यामितीय आकृतियों, रेखाओं, बिन्दुओं तथा निर्जीव एवं सजीव वस्तुओं के तस्वीरों के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। वैसे तो अशाब्दिक परीक्षणों को शाब्दिक परीक्षणों का पूरक मानकर सभी प्रकार के व्यक्तियों पर इसका प्रयोग किया जा सकता है। लेकिन ऐसे अशाब्दिक परीक्षण विशेष रूप से अनपढ़ों, बालकों, की बुद्धि परीक्षा के लिए विकसित किया जाता है। ऐसे परीक्षणों में (Raven's progressive mortise Culture Free Test) को इसके अन्तर्गत सम्मिलित किया जा सकता है। भी कहा जाता है।

iii. **निष्पादन परीक्षण:-** निष्पादन परीक्षण के अन्तर्गत प्रयोज्य को दी गई वस्तुओं, उपकरणों चित्रों या अन्य सामग्रियों को नये ढंग से व्यवस्थित करके समस्या का समाधान करना पड़ता है। ऐसे निष्पादनों में त्रुटियों तथा कार्य में लगे हुए समय की गणना की जाती है निष्पादन परीक्षण का उपयोग छोटी आयु के बच्चों तथा कम मानसिक आयु के व्यक्तियों की क्षमताओं के मापन हेतु किया जाता है। निष्पादन परीक्षणों का उपयोग दो भिन्न संस्कृतियों में विकसित व्यक्तियों तथा

एक ही देश में विभिन्न सांस्कृतिक समूहों के व्यक्तियों की परस्पर तुलना हेतु किया जाता है। कुछ निष्पादन परीक्षण का उदाहरण निम्न है।

क. सेगुइन आकार - पटल परीक्षण

ख. पोर्टियस व्यूह-परीक्षण

ग. कोह ब्लाक डिजाइन परीक्षण

घ. अलेक्जेंडर पास-ऐलांग परीक्षण

ड. चित्र-पूर्ति परीक्षण

iv. **अभाषाई परीक्षण:-** इस प्रकार के परीक्षण के अन्तर्गत भाषा का प्रयोग न तो एकांश में और न ही निर्देश में होता है। प्रयोज्य को मात्र संकेत देकर प्रत्येक एकांश का सही उत्तर बतलाना होता है। कैटल का कल्चर फ्री परीक्षण जो कि एक बुद्धि परीक्षण है, को इसके अन्तर्गत सम्मिलित किया जा सकता है।

V. **मानकीकरण के आधार पर:-**मानकीकरण के आधार पर ऐसे परीक्षणों को दो भागों में बांटा गया है।

i. **शिक्षक या अध्यापक निर्मित परीक्षण:-** शिक्षक निर्मित परीक्षणों का प्रयोग शिक्षकों द्वारा कक्षाओं के भीतर ही छात्र तथा छात्राओं को निष्पादन की जांच करने के लिए किया जाता है। ऐसे परीक्षण के माध्यम से शिक्षक मूलत: एक कक्षा में पढ़ने वाले सभी छात्र-छात्राओं के निष्पादन को आपस में तुलना करते हैं । परीक्षण प्रशासन तथा फलांकन का तरीका स्वंय अध्यापक ही निर्धारित करते हैं । ऐसे परीक्षण का कोई मानक तैयार नही किया जाता है लेकिन कभी कभी यह पाया गया है कि अध्यापक कक्षा के भीतर ही परीक्षण का प्रयोग करने के उद्वेश्य से मानक तैयार कर लेते हैं ।

ii. **मानकीकृत परीक्षण:-** परीक्षण के अन्तर्गत परीक्षण विशेषज्ञ अन्य शिक्षकों एवं पाठ्यक्रम विशेषज्ञों की सहायता से तैयार करते हैं । ऐसे परीक्षण का प्रशासन तथा प्रांप्तांक लेखन का तरीका निश्चित एवं वस्तुनिष्ठ होता है। ऐसे परीक्षण का एक निश्चित मानक भी होता है मानकीकृत परीक्षणों का उपयोग सभी प्रकार के छात्र-छात्राओं पर सरलता पूर्वक किया जा सकता है और इसके द्वारा प्राप्त परिणामों के आधार पर तुलनात्मक निष्कर्ष निकाला जा सकता है।

VI. **उद्देश्य की कसौटी के आधार पर:-**उद्देश्य के आधार पर परीक्षण को चार भागों में बाटा गया है जो निम्न हैं –

i. **बुद्धि परीक्षण**:- बुद्धि परीक्षणों का उद्देश्य सामान्य मानसिक योग्यता का मापन करना होता है। बुद्धि परीक्षणों का उपयोग शिक्षा, उद्योग, सेना, निर्देशन तथा मानसिक चिकित्सा के क्षेत्र में

विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति हेतु किया जाता है। बुद्धि परीक्षणों का उद्देश्य मुख्य रूप से यह ज्ञात करना होता है कि किसी व्यक्ति विशेष में बौद्धिक प्रक्रियाओं जैसे- प्रत्यक्षीकरण, स्मृति, तार्किक चिन्तन, भाषात्मक एवं स्थानागत योग्यताओं के विकास की स्थिति क्या है। बुद्धि परीक्षण शाब्दिक, अशाब्दिक, निष्पादन एवं भाषारहित हो सकते हैं।

ii. **अभिक्षमता परीक्षण:-** अभिक्षमता परीक्षण का उद्देश्य किसी व्यक्ति की वर्तमान योग्यताओं और विशेषताओं का मापन करना होता है। इसके आधार पर व्यक्ति के भविष्य की सम्भावित उपलब्धियों का अनुमान लगाया जाता है। अभिक्षमता परीक्षण प्रकृति एवं आकर में बुद्धि एवं उपलब्धि परीक्षणों से बिल्कुल अलग तरह के नही होते क्योंकि यदि देखा जाय तो सभी मानसिक परीक्षण अभिक्षमता का ही मापन करते हैं। बुद्धि परीक्षण स्कूल कार्यों में दक्षता और उन व्यवसायों में दक्षता का मापन करते हैं जिनकी स्कूल प्रशिक्षण में आवश्यकता होती है। इसी तरह से उपलब्धि परीक्षण भाषा, गणित, विज्ञान व अन्य विषयों में बच्चों की निपुणता का मापन करता है। अभिक्षमता परीक्षण तथा अन्य परीक्षणों के बीच एक महत्वपूर्ण अन्तर यह है कि अभिक्षमता, परीक्षण के अन्तर्गत मुख्य रूप से परीक्षण पूर्णरूप से भविष्य के बारे में अनुमान लगाते हैं । अभिक्षमता, संगीत अभिक्षमता, लिपिक अभिक्षमता, कलात्मक अभिक्षमता, चिकित्सा अभिक्षमता, शिक्षण अभिक्षमता, विधि अभिक्षमता, विज्ञान अभिक्षमता, इंजीनियरिंग अभिक्षमता तथा सृजनात्मक अभिक्षमता आदि को सम्मिलित किया जा सकता है।

iii. **व्यक्तित्व परीक्षण:-** व्यक्तित्व परीक्षण के अन्तर्गत व्यक्तियों के शीलगुण, समायोजन, अभिरूचि, मूल्य आदि का मापन किया जाता है। परवीन (1975) ने व्यक्तित्व परीक्षणों को चार भागों में बाँटा है।

(क) **प्रक्षेपी प्रविधि:-** यह व्यक्तित्व परीक्षण की एक बहुत ही प्रचलित प्रविधि है। इस प्रविधि के अन्तर्गत व्यक्ति के सामने कुछ अस्पष्ट एवं संदिग्ध अवस्थाएँ उपस्थित की जाती हैं और व्यक्ति को उसका प्रत्यक्षीकरण कर उसकी व्याख्या करने को कहा जाता है। व्यक्ति अपने उत्तरों द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से अपने मनोभावों, इच्छाओं आवश्यकताओं, संघर्ष एवं अभिप्रेरणा को अभिव्यक्त करता है। तत्पश्चात परीक्षक उसके द्वारा दी गई प्रतिक्रियाओं का अविश्लेषण करके उसके व्यक्तित्व के बारे में अनुमान लगाते हैं । व्यक्तित्व प्रेक्षेपी प्रविधि के अन्तर्गत टी.ए.टी, शब्द साहचर्य विधि, चित्र साहचर्य विधि, वाक्यपूर्ति परीक्षण आदि को सम्मिलित किया जा सकता है।

(ख) आत्म प्रविधि:- इसके अन्तर्गत साक्षात्कार तथा जीवन चरित्र विधि को सम्मिलित किया जा सकता है। इस प्रविधि के अन्तर्गत वाचिक आख्या पर विशेष बल दिया जाता है तथा अचेतन को कम महत्व दिया जाता है।

(ग) मनोमितिक प्रविधि:- इसके अन्तर्गत ऐसे व्यक्तित्व परीक्षणों को सम्मिलित किया जाता है जो व्यक्तित्व के शीलगुण पर बल देते हैं। इन परीक्षणों में सांख्यिकीय विधियों द्वारा मापे गये विशेषकों का भी उपयोग किया जाता है एवं प्रयुक्त प्रश्नावलियों को प्रदत्त संकलन का आधार माना जाता है इस प्रविधि के अन्तर्गत आइजेंक द्वारा निर्मित मॉडस्ले व्यक्तित्व प्रश्नावली, तथा आर.बी. कैटल द्वारा निर्मित 16 पी0एफ. को सम्मिलित किया जा सकता है।

(घ) वस्तुपरक व्यवहारिक प्रविधि:- इसके अन्तर्गत ऐसे परीक्षणों को रखा जा सकता है जिसमें प्रयोज्य के लिए कुछ विकल्प दिये रहते हैं जिसमें व्यक्ति का अपने हिसाब से सही अनुक्रिया देनी होती है। इस प्रकार के परीक्षण संरचित होते हैं । इस तरह के परीक्षण में निष्पादन परीक्षण को रखा जाता है। प्रयोज्य से निष्पादन प्राप्तांक प्राप्त किये जाते हैं । इस तरह के परीक्षणों में सभी प्रयोज्यों के लिए एक समान उद्दीपक प्रस्तुत किये जाते हैं । इस प्रकार से यह एक प्रमाणीकृत परीक्षण है।

iv. **उपलब्धि परीक्षण:-** उपलब्धि परीक्षण द्वारा किसी विशेष विषय या क्षेत्र में व्यक्तियों द्वारा अर्जित निपुणता का मापन किया जाता है। उपलब्धि परीक्षण विषयों के लिए अलग-अलग होते हैं। इसके अन्तर्गत तीन प्रकार के परीक्षण को सम्मिलित किया जा सकता है। वस्तुनिष्ठ परीक्षण, निबन्धामक परीक्षण तथा निदानात्मक परीक्षण।

12.7 परीक्षण निर्माण के सामान्य चरण -

अपने अपने उदेश्यों को पूर्ति के लिए स्कूल अध्यापक, निर्देशन संस्थान का दर्शनकर्ता, मनोवैज्ञानिक, शिक्षाशास्त्री, समाजशास्त्री, मानवशास्त्री, औद्योगिक प्रबन्धक, सैन्य अधिकारी, शोधकर्ता आदि विभिन्न परीक्षणों की रचना करते हैं, जिनके माध्यम माध्यम से वह व्यक्ति की बुद्धि, उसके व्यक्तित्व की विशेषतायें, अभिवृतियाँ रूचियाँ, अभिक्षमताएं, अर्जित ज्ञान व कौशल आदि का मापन कर उसके व्यवहारों को व्याख्या कर सकें। मनोवैज्ञानिक परीक्षणों में अनेक प्रश्न व कथन होते हैं उन्हें पद कहा जाता है।

परीक्षण रचना से आशय उन मदों व प्रश्नों का अन्तिम रूप से चयन व मूल्यांकन करने से है, जो किसी परीक्षण में सम्मिलित होते हैं । परीक्षण का निर्माण एक तकनीकी प्रक्रिया है और इस संपूर्ण प्रक्रिया को कई चरणों में बाटां गया है। इसके अन्तर्गत प्रायः योजना बनाना, तैयारी करना, जाँच करना, पद विश्लेषण, मूल्यांकन तथा फिर अन्तिम रूप की रचना करना होता है। इन सभी चरणों से गुजरने के बाद ही कोई परीक्षण उपयोग में लाये जाने योग्य बनता है।

प्रायः परीक्षण रचना में निम्न पांच चरणों का प्रयोग किया जाता है।,

1. परीक्षण योजना बनाना ।
2. पद लेखन
3. पदों की जांच

4. परीक्षण का मूल्यांकन करना।
5. परीक्षण के अन्तिम रूप की रचना।

i. **परीक्षण योजना बनाना:-** जिस प्रकार किसी भी कार्य को करने से पूर्व उसकी एक योजना बनानी पड़ती है उसी प्रकार परीक्षण रचना के लिए भी एक निश्चित योजना की आवश्यकता होती है। परीक्षण निर्माता का सर्वप्रथम कार्य परीक्षण योजना की रूपरेखा प्रस्तुत करना है। परीक्षण योजना के अन्तर्गत उसके उद्देश्य, विषयवस्तु, स्वरूप, माध्यम, प्रशासन विधि, प्रतिदर्श जनसंख्या आदि को निर्धारित करते समय उसके विभिन्न चरों,आयु, लिंग, शैक्षिक स्तर, मातृ भाषा, ग्रामीण/शहरी सामाजिक- आर्थिक स्तर आदि के सम्बन्ध में विचार किया जाता है। उद्देश्य स्वयं परीक्षण निर्माता निर्धारित करता है। उद्देश्य के पश्चात् परीक्षण की विषय वस्तु को निश्चित किया जाता है। अतएव हम निश्चित करते हैं कि इसमें किन-किन योग्यताओं या तथ्यों, शाब्दिक, आंकिक, तर्क चित्र-व्यवस्था, सादृश्य -विलोम आदि से सम्बन्धित प्रश्नों को सम्मिलित किया जाना है । इसके अतिरिक्त परीक्षण निर्माता उन व्यक्तियों की क्षमताओं, शैक्षिक स्तर, आयु स्तर आदि का भी ध्यान रखता है जिनके लिए परीक्षण की रचना करनी होती है। साथ ही परीक्षण का स्वरूप कैसा होगा - शाब्दिक तथा अशाब्दिक, उसका माध्यम क्या होगा -हिन्दी, अग्रेंजी या अन्य, उसकी प्रशासन विधि कौन सी होगी - व्यक्तिगत या सामूहिक आदि उसमें कितनी धनराशि, समय लगेगा आदि का ध्यान रखा जाता है।

ii. **पद लेखन:-** परीक्षण की निश्चित व व्यवस्थित योजना बनाने के पश्चात् ही परीक्षण निर्माता परीक्षण के प्रारम्भिक रूप की तैयारी करने लगता है। सर्वप्रथम उद्देश्यों व विषय वस्तु के अनुसार वह विभिन्न पदों का अन्य स्रोतों से चयन एवं लेखन करता है। वह पदों को अपने अनुभवों के आधार पर, उपलब्ध मानकीकृत या निर्मित परीक्षणों में से छाँटकर या अन्य स्रोतों से रचना कर एकीकृत कर लेता है जो उद्देश्यों व विषय-वस्तु के आधार पर तार्किक व व्यवस्थित ढंग से प्रदर्शित किया जाता है।

परीक्षण की रचना हेतु लिखा जाने वाला पद प्रश्न या कथन के रूप में लिखा जाता है। बीन (1953) के अनुसार "पद से तात्पर्य एक ऐसा प्रश्न या पाठ से होता है, कि जिसे प्रायः छोटी इकाइयों मे नही बाँटा जाता है" जैसे क्या आपको अक्सर घबराहट होती है? एक पद का उदाहरण है जिसे अब छोटी इकाइयों में नही बाँटा जा सकता है। पदों का लेखन सरल और सीधी भाषा में किया जाना चाहिए। ऐसे शब्दों का प्रयोग नही करना चाहिए जिनके एक से अधिक अर्थ हों। जहाँ तक सम्भव हो सके कम से कम शब्दों में पदों की रचना की जानी चाहिए।

परीक्षण पदों को एकत्रित करने के साथ ही परीक्षण-निर्माता को पदों के प्रत्युतर प्रकार को भी निर्धारित करना होता है। जैसे कि सत्य/असत्य, हाँ/नही, तुलनात्मक, पांच बिन्दु मापनी या अन्य कोई प्रकार।

iii. **पदों की जांच:-** परीक्षण के पदों का चयन करने तथा उसे लिख लेने के पश्चात् परीक्षण निर्माता के लिए, पदों की विषय-वस्तु तथा उपयुक्तता की जांच पड़ताल करना आवश्यक हो जाता है। इसके लिए वह इस क्षेत्र के दो-तीन विशेषज्ञों से परामर्श लेता है। पदों शब्दों की शुद्धता, परीक्षण सामग्री की पर्याप्तता, पदों का रूप, पदों की व्यवस्था आदि का भी पुनः अवलोकन किया जाता है। परीक्षार्थी व परीक्षण प्रशासक के लिए अलग-अलग सरल भाषा में निर्देश लिखे जाने चाहिये, साथ ही फलांकन प्रक्रिया व कुंजी का भी निर्माण किया जाता है। पदों की जांच दो चरणों में की जाती है।

क. प्रारम्भिक जांच

ख. वास्तविक जांच

क. **प्रारम्भिक जांच:-** प्रारम्भिक जांच के लिए परीक्षण को मूल जनसंख्या के कम से कम 20 व्यक्तियों पर प्रशासित कर उसकी कमियों को दूर किया जाता है। परीक्षण को कम से कम तीन बार नये-नये प्रतिदर्शों पर प्रशासित करना चाहिए। यदि परीक्षण पदों के सही प्रत्युत्तर पाने में अनुमान की अधिक संभावना या अवसर तत्वों का प्रभाव पड़ता हो तो निम्न शुद्धिकरण सूत्र का प्रयोग करना चाहिए।

$$S=\frac{R-W}{N-1}$$

यहाँ-

S= अनुमान के लिए शुद्ध किया फलांक

R= सही प्रत्युत्तरों की संख्या

W= गलत प्रत्युत्तरों की संख्या

N= उपस्थित प्रत्युत्तरों की संख्या

ख. **वास्तविक जांच:-** वास्तविक जांच के अन्तर्गत पद- विश्लेषण की तकनीकी प्रक्रिया का प्रयोग किया जाता है इसमें परीक्षार्थियों की आदर्श संख्या लगभग 400 होनी चाहिए। जिसके द्वारा प्रत्येक पद की वैद्यता व कठिनता स्तर को ज्ञात कर उपयुक्त पदों को परीक्षण में रखा जाता है।

iv. **पद विश्लेषण**:- पदों को लिख लेने व विशेषज्ञों के परामर्श के पश्चात् संशोधन कर लेने के बाद पदों का विश्लेषण किया जाता है। परीक्षण को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए परीक्षण के

समस्त पदों का अलग-अलग अध्ययन किया जाता है, इसे पद-विश्लेषण कहते हैं। पद -विश्लेषण विधि में सम्मिलित सभी पदों का व्यक्गित रूप से अध्ययन किया जाता है जिसके द्वारा यह ज्ञात किया जाता है। किसी सभी पदों में से प्रत्येक पद की किसी समूह के कितने व्यक्तियों ने हल किया है कहने का तात्पर्य है कि इस विधि द्वारा पदों की प्रभावशीलता व उपयुक्तता का अध्ययन किया जाता है। ग्रे (1980) के अनुसार "पद विश्लेषण मूल रूप में पदों की प्रभावशीलता की माप करने के विचार से प्रत्येक पद के प्रति किये गये अनुक्रियाओं के प्रतिरूप का एक परीक्षण है।"

फ्रीमैन का सुझाव है, पदों के मूल्यांकन में दो तकनीकी पहलुओं पर मुख्य रूप से विचार किया जाना चाहिए -

1. प्रत्येक पद का कठिनता स्तर।
2. प्रत्येक पद की विभेदन शक्ति।

1. **पदों की कठिनता:-** परीक्षण योजना के अन्तर्गत परीक्षण के उद्देश्य, विषयवस्तु स्वरूप, माध्यम, प्रशासन विधि, स्तर प्रतिदर्श जनसंख्या आदि को निर्धारित किया जाता है। व्यवस्थित योजना निर्धारण के पश्चात् परीक्षणें पदों का विभिन्न स्रोतों से चयन कर सत्य भाषा में लेखन किया जाता है।

पद, प्रश्न के रूप में लिखा जाता है, लेखन के बाद, विशेषज्ञों द्वारा पदों की उपयुक्तता की प्रारम्भिक तथा वास्तविक जांच की जाती है जिसके द्वारा पदों की शुद्धता का ज्ञान होता है। शुद्धता के साथ ही फलांकन प्रक्रिया व फलांकन कुंजी का निर्माण हो जाता है। इसके अतिरिक्त परीक्षण को प्रभावशाली बनाने के लिए समस्त पदों का पद-विश्लेषण किया जाता है। पद-विश्लेषण द्वारा पदों के कठिनता स्तर व विभेदन शक्ति को ज्ञात किया जा सकता है । जांच के पश्चात् कठिनता स्तर के आधार पर परीक्षण का मूल्यांकन किया जाता है। 50 प्रतिशत कठिनता स्तर को ठीक माना जाता है। अर्थात् परीक्षण के पद उच्च व निम्न समह में भेद दर्शा सके। परीक्षण का मूल्यांकन करके, वैद्यता निश्चित करने के बाद परीक्षण के अन्तिम रूप की रचना करने के बाद परीक्षण के अन्तिम रूप की रचना की जाती है। अन्तिम रचना के परीक्षण का व्यवस्थित ढंग से निर्धारण हो जाता है जिसका वैज्ञानिक ढंग से प्रशासन किया जा सकता है।

पद कठिनता स्तर:- परीक्षण में जितने पद होगें उतने ही स्वतन्त्र रूप से कठिनता स्तर होंगे। परीक्षण के पदों में कठिनता स्तर इंगित करने के लिए किसी पद का सही व गलत उत्तर देने वाले व्यक्तियों का प्रतिशत ज्ञात करा जाता है। किसी समूह के समस्त व्यक्तियों द्वारा हल करने वाले या हल न करनेवाले पद को परीक्षण में सम्मिलित नही किया जाता है। जो पद समूह के पचास प्रतिशत व्यक्तियों द्वारा हल कर लिया जाता है। वह उपयुक्त कठिनता स्तर का समझा जाता है। यह जरूरी नही है कि परीक्षण में केवल ऐसे पद ही सम्मिलित किये जाएं जिन्हें पचास प्रतिशत व्यक्तियों ने हल किया है। बल्कि ऐसे पदों की भी शामिल किया जाता है जिन्हें समूह के श्रेष्ठतम व निम्नतम व्यक्तियों ने भी हल किया हो। कठिनता स्तर से पदों की

क्रमिक रूप व्यवस्थित किया जा सकता हो। इससे यह भी संकेत मिलता है कि परीक्षण में कौन-सा पद पहले मध्य तथा अन्त में आयेगा। पदों का कठिनता स्तर ज्ञात करने को कोई निश्चित उपयुक्त विधि नही है। टाटे के अनुसार पद के कठिनता को ज्ञात करने की सबसे उपयोगी विधि पद को सही हल करने वाले परीक्षार्थियों का अनुपात है अनुपात जितना कम होगा पद उतना ही कठिन होगा। "

इस संबंध में ब्रेडफोर्ड तथा मोरडोक का विचार है कि "विभेदन शीलता की मात्रा को पद कठिनता की सूची के रूप में लिया जा सकता है, समह के 60 प्रतिशत व्यक्तियों द्वारा शुद्ध हल किये गये पद को अति सरल, 10/- व्यक्तियों द्वारा हल किये गये पद को अति कठिन पद तथा 50 प्रतिशत व्यक्तियों द्वारा शुद्ध हल किये गये पद को उपयुक्त कठिनता स्तर का पद समझा जाता है। "

2. **पद की विभेदनशीलता:-** किसी मनोवैज्ञानिक परीक्षण के लिए लिखे गये पदों को एक महत्वपूर्ण विशेषता विभेदन शक्ति कही जाती है। यह माना जाता है कि मापी जाने वाली योग्यता समूह के सभी व्यक्तियों में समान मात्रा में नही पायी जाती हैं। 36 व्यक्ति योग्यता में अधिक तथा कम योग्यता वाले होगें। उदाहणार्थ- यदि हम बुद्धि का मापन कर रहे है तो कुछ व्यक्ति औसत से ऊपर, कुछ औसत स्तर के तथा कुछ औसत से नीचे पाये जायेगें। एक अच्छे परीक्षण की यह विशेषता होनी चाहिए कि व्यक्तियों की योग्यता की मात्रा के आधार पर भेद या अन्तर को स्पष्ट कर सके। अतः इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए पदों के भीतर विभेदन करने की क्षमता पाया जाना अत्यन्त आवश्यक है। पदों की इसी क्षमता को विभेदन शक्ति कहा जाता है।

   बीन के अनुसार "मापे जाने वाले शीलगुण या शीलगुणों के समूह के रूप में श्रेष्ठ व्यक्तियों से अलग करने की किसी पद की क्षमता को विभेदन देशनांक कहा जाता है"

   सभी पद समान मात्रा तक विभेदन करने की क्षमता नही रखते, इसलिए विभेदन शक्ति का देशनांक ज्ञात करना आवश्यक हो जाता है जिससे ऐसे पदों को चुनकर परीक्षण के अन्तिम प्रारूप में सम्मिलित किया जा सके, जिनकी विभेदनशक्ति अधिकतम हो। जिस पद की विभेदनशक्ति .20 या उससे अधिक पायी जाती है। वैसे ही पदों को परीक्षण में रखा जाता है।

v. **परीक्षण का मूल्यांकन करना:-** परीक्षण की जांच के पश्चात् उसका मूल्यांकन किया जाता है। परीक्षण के मूल्यांकन में निम्न पहलुओं को ध्यान में रखा जाता है। सर्वप्रथम परीक्षण का कठिनाई स्तर कैसा है, ज्ञात किया जाता है। परीक्षण का कठिनाई स्तर से ही उसकी शुद्धता का पता चलता है। प्रायः 50 प्रति कठिनता स्तर के पदों को सही समझा जाता है। जिन पदों को उच्च व निम्न दोनों समूह हल कर ले उन्हें परीक्षण में सम्मिलित नही किया जाता है। कठिनाई स्तर की जानकारी के पश्चात् पदों की वैधता तथा विभेदन मूल्य सम्बन्धी अध्ययन किया जाता है। परीक्षण के पद ऐसे होने चाहिये जो उच्च तथा निम्न समूह में अन्तर कर सके। इसके अतिरिक्त परीक्षण में फलांकों का अन्य मानकीकृत परीक्षण फलांकों से सह सबंध ज्ञात कर विश्वसनीयता गुणांक ज्ञात

किया जाता है। तत्पश्चात् परीक्षण का मूल्यांकन किया जाता है। साथ ही परीक्षार्थियों के सुझावों के अनुसार परीक्षण पदों के शब्दों में परिवर्तन किया जाता है।

vi. **परीक्षण के अन्तिम रूप की रचना:-** परीक्षण की प्रारम्भिक व वास्तविक जांच करने के पश्चात एवं सभी दृष्टिकोणों से मूल्यांकन करने के बाद परीक्षण निर्माता उसकी अन्तिम रूप से रचना करता है। प्रायः परीक्षण के अन्तिम रूप में ऐसे पदों का चयन होना चाहिए जो निश्चित विधियों के अनुसार वैध एवं उपयुक्त कठिनता स्तर के हों। इस रूप में निश्चित निर्देशों को भी अन्तिम रूप से स्पष्ट लिखना चाहिए जिससे परीक्षण का प्रशासन वैज्ञानिक ढंग से किया जा सके। परीक्षण की समय सीमा व अंक विधि भी निर्धारित हो जानी चाहिए। परीक्षण के अन्तिम रूप के उपरान्त परीक्षण को वैधता व विश्वसनीयता का निर्धारण किया जाता है। अतः इस स्तर पर परीक्षण के सभी आन्तरिक पहलुओं का व्यवस्थित ढंग से निर्धारण होना चाहिए।

12.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नः-

1. मनोवैज्ञानिक परीक्षण की चार विशेषताएं कौन कौन सी है?
2. मनोवैज्ञानिक परीक्षण की पांच उपयोगिता बताइये?
3. मनोवैज्ञानिक परीक्षण उद्देश्यों के आधार पर कितने के प्रकार के होते है।?
4. मनोवैज्ञानिक परीक्षण के रचना के मुख्य चरण कौन कौन से है?

12.9 सारांश:-

मनोवैज्ञानिकों ने मनोवैज्ञानिक परीक्षण को अत्यधिक विस्तृत अर्थ में परिभाषित किया है इनके अनुसार मनोवैज्ञानिक परीक्षण एक ऐसा मानकीकृत विधि है जिसके द्वारा व्यक्ति के एक या एक से अधिक मनोवैज्ञानिक गुणों का गुणात्मक ढंग से या परिमाणात्मक ढंग से कुछ शाब्दिक या अशाब्दिक प्रतिक्रियाओं के माध्यम से मापन किया जाता है मनोवैज्ञानिक परीक्षण कई प्रकार के होते हैं, जैसे वैयक्तिक परीक्षण, समूह परीक्षण, वस्तुनिष्ठ परीक्षण, आत्मनिष्ठ परीक्षण, क्षमता परीक्षण, गति परीक्षण, शाब्दिक परीक्षण, अशाब्दिक परीक्षण, निष्पादन परीक्षण, अभाषाई परीक्षण आदि। मनोवैज्ञानिक परीक्षण रचना के कुछ मुख्य चरण होते हैं जैसे- परीक्षण की योजना बनाना, पदलेखन, पदों की जाँच, परीक्षण का मूल्यांकन, परीक्षण के अंन्तिम रूप की रचना आदि।

12.10 शब्दावली:-

1.**वैयक्तिक परीक्षण-**वैयक्तिक परीक्षण वैसे परीक्षण को कहा जाता है जिसे एक समय में एक ही व्यक्ति पर प्रशासित किया जाता हैं।

2.**समूह परीक्षण:-** समूह परीक्षण के अन्तर्गत एक समय में एक से अधिक व्यक्तियों पर परीक्षण को प्रशासित किया जाता है।

3.**शाब्दिक परीक्षण** - इसके अन्तर्गत पद या निर्देश को व्यक्ति स्वंय पढ़ता है तथा उसे समझकर उत्तर देता है।

4.**वस्तुनिष्ठता -** वस्तुनिष्ठता से तात्पर्य परीक्षकों के बीच एकांश हेतु आपसी सहमति से होता है।

5.वैद्यता - जब कोई मनोवैज्ञानिक परीक्षण ठीक उसी गुण या क्षमता को मापता है जिसके लिए उसे बनाया गया है तब परीक्षण के इस गुण को परीक्षण की वैधता कहा जाता है।

6.**विश्वसनीयता:-** जब एक परीक्षण को एक समूह पर एक बार प्रशासित करने के कुछ समय पश्चात पुनः उसी समूह पर उसी परीक्षण को प्रशासित किया जाता है और दोनों के परिणाम के बीच जितना अधिक समानता होती है उस परीक्षण को उतना ही अधिक विश्वसनीय माना जाता है।

7.**मानक:-** किसी प्रतिनिधिक प्रतिदर्श के परीक्षण पर प्राप्त औसत प्राप्तांक को उस परीक्षण का मानक कहा जाता है।

12.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. मनोवैज्ञानिक परीक्षण की चार विशेषताएं निम्न है - 1. वस्तुनिष्ठता 2. विश्वसनीयता 3. वैधता 4. मानक
2. मनोवैज्ञानिक परीक्षण की पाँच उपयोगितायें निम्न है - 1. निर्देशन के क्षेत्र में, 2. शोध के क्षेत्र में, 3. निदान के क्षेत्र में, 4, पूर्वकथन में, 5. शैक्षिक उपयोग हेतु ।
3. मनोवैज्ञानिक परीक्षण उद्देश्य के आधार पर निम्न प्रकार के होते हैं- 1. बुद्धि परीक्षण, 2. अभिक्षमता परीक्षण, 3. व्यक्तित्व परीक्षण 4. उपलब्धि परीक्षण
4. मनोवैज्ञानिक परीक्षण रचना की मुख्य चरण निम्न हैं -

1.परीक्षण योजना बनाना।2.पद लेखन 3. पदों की जाँच 4. परीक्षण का मूल्यांकन करना 5. परीक्षण के अन्तिम रूप की रचना।

12.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. Bean, K.L. (1953) Construction of Education and Personnel Tests New York: Mc Grew Hill Book Co.
2. Bharyava, M. (1997), Psychological Test and Measurement, Printer Palace, Agra.
3. Bradfield J.M. & Murdock. H.S.: Measurement and Evaluation in Education, 1975 P.100.
4. Brown F.G. (1970), Principles of Educational and Psychological Testing. New York : Dryden Press.

5. Freeman, Frank, S. (1971), Theory and Practice of Psychological Testing. New Delhi: Oxford & IBH Publishing Co. Pvt. Ltd.
6. Guilford, J.P. (1954), Psychometric Methods. New Delhi: TATA MC Grow hill Publishng Co.
7. Srivastava, Rani.J., (1999), Psychological & Educational Measurement Motilal Banarshi das Publication, Delhi.
9. Tate, M.W.: Statistics in education and Psychology, (1967), P. 205

12.13 लघु-उत्तरीय / दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

लघु-उत्तरीय प्रश्न

1. परीक्षण रचना के आशय से आप क्या समझते है ?
2. परीक्षण योजना किस प्रकार बनाई जाती है ?
3. परीक्षण के अन्तिम रूप की रचना किस प्रकार की जाती है ?
4. परीक्षण पदों के कठिनता स्तर व वैधता का मूल्यांकन किस चरण के अन्तर्गत व किस प्रकार किया जाता है।
5. परीक्षण का उपयोग किन-किन क्षेत्रों में किया जाता है? संक्षेप में वर्णन करें।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. परीक्षण रचना के चरणों का विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिए।
2. पद विश्लेषण से आप क्या समझते हैं ? प्रारम्भिक व वास्तविक जांच का संक्षिप्त अर्थ स्पष्ट करिये।
3. पदों के लेखन व चयन को समझाइये।
4. परीक्षण कितने प्रकार के होते हैं सविस्तार वर्णन करें।
5. मनोवैज्ञानिक परीक्षण निर्माण के सामान्य चरणों का वर्णन कीजिए।

इकाई 13:- पद या एकांश का अर्थ, विशेषताएँ एवं प्रकार, एकांश लेखन के सामान्य दिशा निर्देश, निबन्धात्मक तथा वस्तुनिष्ठ परीक्षण की तुलना

इकाई की रूप रेखा

13.1 प्रस्तावना

13.2 उद्देश्य

13.3 एकांश का अर्थ एवं विशेषताएँ

13.4 एकांश का प्रकार

13.5 पद या एकांश लेखन के सामान्य निर्देश

13.6 निबन्धात्मक परीक्षण तथा वस्तुनिष्ठ परीक्षण का तुलनात्मक अध्ययन

13.7 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

13.8 सांराश

13.9 शब्दावली

13.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

13.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

13.12 निबन्धात्मक प्रश्न एवं लघु उत्तरीय प्रश्न

13.1 प्रस्तावना:-

किसी भी मनोवैज्ञानिक परीक्षण के निर्माण में पदों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। परीक्षण की रचना हेतु लिखा जाने वाला पद/एकांश प्रश्न या कथन के रूप में होता है। पद से तात्पर्य एक ऐसा प्रश्न या पद से होता है जिसे प्रायः छोटी इकाइयों में नही बॉटा जाता है। सर्वप्रथम उद्धेश्यों एव विषयवस्तु को ध्यान में रखकर परीक्षण निर्माता मौलिक चिंतन की सहायता से या उपलब्ध मानकीकृत या निर्मित परीक्षणों में से चयनकर पदों को एकत्रित किया जाता है। इसके पश्चात परीक्षण के उद्धेश्यों एवं विषयवस्तु के आधार परीक्षणकर्त्ता चयन किये गयें पदों को व्यवस्थित ढंग से प्रदर्शित करता है। पदों का लेखन सरल होना चाहिए तथा इसमें अलंकारिक भाषा का प्रयोग बिल्कुल नही होना चाहिए। किसी पद में दो भाग होते हैं- मुख्य प्रश्न या कथन ओर/ विकल्प आवश्यकतानुसार विकल्प दो, चार पाँच, सात या कुछ भी हो सकता है। परीक्षण के पदों का चयन करने के पश्चात परीक्षण निर्माता पदों की विषयवस्तु तथा उपर्युक्तता की जाँच हेतु विशेषज्ञों से परामर्श कर संशोधन कर लिया जाता है तत्पश्चात पदों का विश्लेषण किया जाता है।

13.2 उद्देश्यः-

प्रस्तुत इकाई के अर्न्तगत आप जान पायेगें कि –

- पद का क्या अर्थ है।
- पदों की कौन-कौन सी विशेषताएँ हैं।
- पद कितने प्रकार के होते हैं।
- पद लेखन के सामान्य चरण कौन कौन से हैं।
- निबन्धात्मक परीक्षण और वस्तुनिष्ठ परीक्षण क्या होते हैं।

13.3 एकांश का अर्थ एवं विशेषताएँ

मनोमीति (Psychometric) में एकांश या पद से तात्पर्य एक ऐसे प्रश्न या पाठ से होता हैं जिसका विभाजन नही किया जा सकता हैं। बीन (Bean,1953) ने इसी अर्थ में एकांश को परिभाषित करते हुए कहा है, "एकांश एक ऐसा पाठ या प्रश्न होता है जिसे किसी छोटी इकाइयों में सामान्यतः तोड़ा नही जा सकता है।" स्पष्ट है कि मनोवैज्ञानिक परीक्षण में एकांश का स्वरूप ही ऐसा होता है कि उसका आगे विभाजन या उप विभाजन संभव नही होता है। एकांश के रूप में कोई शाब्दिक पाठ (Verbal test)या क्रियात्मक पाठ (Performance task) या अंकगणित प्रश्न (Arithmetical question) आदि का प्रयोग किया जा सकता है।

किसी भी एकांश को उत्तम कहलाने के लिए उसमे निम्न विशेषताओं characteristics) का होना अनिवार्य है -

1. एकांश को न तो अधिक आसान और नही अधिक कठिन होना चाहिए। एकांश की कठिनता स्तर मध्यम श्रेणी का होना चाहिए।
2. एकांशों को इस ढंग से लिखा जाना चाहिए कि परीक्षक तथा परीक्षार्थी किसी को इसका अर्थ समझने में दिक्कत नहीं हो या किसी के द्वारा उसका दोहरा अर्थ न निकाला जाय।
3. एक उत्तम एकांश की विशेषता यह भी है कि इसमें पर्याप्त मात्रा में विभेद शक्ति (Discrimination power) हो। दूसरे शब्दों, में एकांश का स्वरूप ऐसा होना चाहिए कि जिन व्यक्त्यिों में श्रेष्ठ गुण है तथा जिनमें श्रेष्ठ गुण की कमी है, में वह स्पष्ट विभेद कर दें।
4. एकांश का स्वरूप ऐसा होना चाहिए कि इसके द्वारा व्यक्ति के ज्ञान के सिर्फ महत्वपूर्ण पहलू का ही माप हो सके। इसका संबंध ज्ञान के तुच्छ पहलू से नही हो।
5. किसी भी एकांश को उत्तम कहलाने के लिए यह आवश्यक है कि वह परीक्षार्थी में अटकलबाजी को बढ़ावा नही दे।

6. एक उत्तम एकांश की विशेषता यह भी है कि इसका सही उत्तर, अन्य एकाशों की मदद से संभव न हो। दूसरे शब्दों में, एक उत्तम एकांश का स्वरूप ऐसा होना चाहिए कि उसका उत्तर स्वतंत्र रूप से ही दिया जाना संभव हो।
7. एक उत्तम एकांश की विशेषता यह भी है इसे पढ़ने में परीक्षार्थी या परीक्षक को कोई दिक्कत नही हो। दूसरे शब्दों में, इसकी भाषा एवं इसमें प्रयुक्त शब्द सरल हो न कि अंलकृत हों।

13.4 एकांश के प्रकार -

मनोवैज्ञानिक परीक्षणों एवं शैक्षिक परीक्षणों में जितने भी तरह के एकांशों को सम्मलित किया जाता है, उसे मूलतः निम्नंकित दो भागों में बाँटा गया है –

1. **निबन्धात्मक एकांश -** निबन्धात्मक एकांश वैसे एकांश को कहा जाता है जिसमें परीक्षार्थी या व्यक्ति प्रश्नों के उत्तर देने में अपनी स्मृति से प्राप्त अनुभूतियों एंव साहचयों को कुछ शब्दों या वाक्यों में खास ढंग से संगठित करता है। इस तरह के एकांशों का प्रयोग उस परिस्थिति में किया जाता हैं जहाँ शोधकर्ता का उदे्श्य व्यक्ति के आलोचनात्मक चिन्तन, संगठनात्क क्षमता, मौलिकता आदि का मापन करना होता है। मार्शल एवं हेल्स (1972) ने निबन्धात्मक एकांश के दो प्रकार बतलाएँ हैं - लघु निबन्धात्मक एकांश , जैसा कि नाम से, ही स्पष्ट है, "एक ऐसा एकांश होता है जिसका उत्तर देने के लिए परीक्षार्थी या उत्तरदाता को कुछ शब्द या लघु वाक्य लिखना पड़ता है। लम्बा निबन्धात्मक एकांश वैसे एकांश को कहा जाता हैं जिसका उत्तर देने के लिए परीक्षार्थी या उत्तरदाता को कई वाक्यों का प्रयोग करना पड़ता है। निबन्धात्मक एकांश के उदाहरण इस प्रकार है।

I. भारत के प्रधानमंत्री कार्यो का नाम बताएँ (लघु निबन्धात्मक एकांश का उदाहरण है)
II. भारत के प्रधानमंत्री के कार्यो का वर्णन करें। (लम्बा निबन्धात्मक एकांश का उदहारण है।)

आजकल निबन्धात्मक एकांशो का प्रयोग शिक्षक द्वारा छात्रों की कक्षा-उपलब्धि को मापने के लिए सफलतापूर्वक किया जा रहा है।

निबन्धात्मक एकांश के कुछ गुण तथा अवगुण है। इसके प्रमुख गुण निम्नलिखित हैं -

I. निबन्धात्मक एकांश का प्रमुख गुण यह है कि ऐसे एकांशों द्वारा उत्तरदाता अपनी अनुभूतियों एवं सहचर्यों को एक संगठित रूप दे पाने में समर्थ हो पाता है।
II. ऐसे एकांशों को लिखना आसान होता है।
III. निबन्धात्मक एकांश द्वारा तात्विक सूचनाओं का मापन सही सही ढंग से होता है।

इन गुणों के बावजूद निबन्धात्मक एकांश के कुछ अवगुण है जो निम्नांकित हैं।

I. निबन्धात्मक एकांश का सबसे बड़ दोष है यह बतलाया गया है कि इसका प्राप्तांक-लेखन काफी आत्मनिष्ठ होता है। इसके कारण इसमें विश्वसनीयता बहुत ही कम होती है। यह परीक्षक या प्राप्तांक-लेखनकर्ता से दूसरे प्रांप्ताक-लेख कर्ता तथा काफी भिन्न हुआ करता है।

II. निबन्धात्मक एकांश की अंकन प्रक्रिया में भी काफी समय लगता है। क्योंकि इसके उत्तर प्रायः लम्बे होते हैं।

III. निबन्धात्मक एकांश में उत्तरदाता मूलतः व्यक्तियों की उन क्षमताओं का ही मापन होता है जो प्रत्याह्मान की प्रक्रिया से संबंधित है। अतः ऐसे एकांशों का कार्यक्षेत्र सीमित होता है।

IV. चूँकि निबन्धात्मक एकांशों में उत्तरदाता को उत्तर देने में समय लगता है, अतः एक निश्चित समय सीमा के भीतर उत्तरदाता उतने निबन्धात्मक एकांशों का उत्तर नही दे सकता है जितना कि वस्तुनिष्ठ एकांशों का उत्तर दे पाता है।

2. **वस्तुनिष्ठ एकांश** (Objective Item) - वस्तुनिष्ठ एकांश का स्वरूप आत्मनिष्ठ एकांश से भिन्न होता है। वस्तुनिष्ठ एकांश वैसे एकांश को कहा जाता है। जिसका एक ही निश्चत उत्तर होता है। जिसे उत्तरदाता अपनी और से देता है या दिये गये कई उत्तरों में से चुनकर बतलाता है। इस व्याख्या से यह स्पष्ट है कि वस्तुनिष्ठ एकांश की तीन मुख्य विशेषताएँ होती है। जो निम्नवत् है।

1. वस्तुनिष्ठ एकांश में एक निश्चत उत्तर होता है।
2. वस्तुनिष्ठ एकांश में प्रश्नों या एकांशों के उत्तर को उत्तरदाता या व्यक्ति दिये गये कई उत्तरों में से चुनकर बतलाता है।
3. वस्तुनिष्ठ एकांश में प्रश्नों या एकाशों के उत्तर को उत्तरदाता अपनी और से भी आपूर्ति करता है।

वस्तुनिष्ठ एकांश के मुख्य दो सामान्य प्रकार बतलाया गया है -

क. आपूर्ति प्रकार का वस्तुनिष्ठ एकांश तथा

ख. चयन प्रकार का वस्तुनिष्ठ एकांश

आपूर्ति प्रकार का वस्तुनिष्ठ एकांश वैसे एकांश को कहा जाता है जहाँ एकांशों के सही उत्तर को उत्तरदाता या व्यक्ति अपनी ओर से लिखता है। इसका उदाहरण इस प्रकार है -

1. व्यवहारवादी संप्रदाय के जनक का नाम जे0बी0 वाटसन है।
2. महात्मा गाँधी भारत के राष्ट्रपिता के नाम से जाने जाते थे।

इस तरह के आपूर्ति प्रकार के वस्तुनिष्ठ एकांश को पूर्ति एकांश भी कहा जाता है। अधिकतर शोध मनोवैज्ञानिकों की आम राय यह है कि पूर्ति एकांश में उतनी वस्तुनिष्ठता नही होती है जितनी की अन्य वस्तुनिष्ठ एकांशों में होती है।

चयन प्रकार वस्तुनिष्ठ एकांश वैसे एकांशों को कहा जाता है जहाँ उत्तरदाता दिये गये कई उत्तरों में से एक सही का चयन करके अपनी अनुक्रिया करता है। नूनली (Nunnally 1970) ने ऐसे एकांशों को पहचान एकांश कहा है। ऐसे एकांशों को मूल रूप से निम्नंकित तीन प्रमुख भागों में बाँटा गया है।

i. द्विविकल्पीय एकांश
ii. बहु-विकल्पी एकांश
iii. मिलान एकांश

इन तीनों के एकांशों का उदाहरण सहित वर्णन इस प्रकार है।

i. **द्विविकल्पीय एकांश :-** द्विविकल्पीय एकांश वैसे एकांश को कहा जाता है जिसके उत्तर के रूप में दो विकल्प जैसे, हाँ, नही, 'सही-गलत', 'सत्य-असत्य' 'सहमत-असहमत' दिये रहते है और उत्तरदाता उनमें उस विकल्प पर टिक लगाते है। जिसे वह उपयुक्त या सही समझता है। ऐसे एकांश के कुछ उदाहरण इस प्रकार है-

1.	क्या आपको थकान की शिकायत है?	हाँ	नही
2.	भारत की विशेषता विभिन्नता में एकता है।	हाँ	नही
3.	जहाँ कहीं भी हो, घर की चिन्ता आपको सताती है।	हाँ	नहीं
4.	श्री गुलजारी लाल नन्दा भारत के राष्ट्रपति थे।	हाँ	नही

द्विविकल्पी एकांश का प्रयोग मूलतः व्यक्तित्व परीक्षार्थी में होता है या वैसे परीक्षणों में होता है जहाँ ऐसी सूचनाओं को इकठा करना होता है जिसमें किसी विशेष वर्णन की जरूरत नही होती है। तारीख, तकनीकी पदों, शब्दावली से संबंधित सूचनाएँ ऐसी ही होती है ऐसे एकांशों की सबसे बड़ी परिसीमा यह बतलाया गया है। इसमें सही उत्तर न जानने पर भी मात्र अटकलबाजी के आधार पर सही उत्तर ढूँढ़ निकालने की संभावना 50 प्रतिशत होती है। क्योंकि उत्तर में दो ही विकल्प होते हैं।

ii. **बहु-विकल्पीय एकांश :-**

बहु विकल्पी एकांश में सबसे अधिक लोकप्रिय वस्तुनिष्ठ एकांश है। इस तरह के एकांशों के प्रत्येक प्रश्न या एकांश के कई उत्तर दिये रहते है। जिनमें एक सही उत्तर होता है तथा बाकी गलत। जो सही उत्तर के ही समान होते है। ऐसे गलत उत्तरों को आसेधक कहा जाता है। उदाहरण निम्नांकित है।

1. मनोविश्लेषण को एक संप्रदाय के रूप में किसने स्थापित किया था?

(अ). फ्रायड (ब) वाटसन (ख) टिचनर (द) कोहलर

2. पानीपत की पहली लड़ाई कब हुई थी।

(अ) 1626 (ब) 1526 (स) 1256 (द) 1757

3. निम्नलिखित व्यक्तित्व परीक्षणों मे कौन प्रेक्षपी परीक्षण है?

(अ) कैटल 16 पी.एफ. परीक्षण (ब) रोर्शाक परीक्षण (स) एम0एम0पी0आई0

(द) आइजेन्क व्यक्तित्व प्रश्नावली।

बहु-विकल्पीय का प्रयोग शोधकर्ताओं द्वारा व्यक्ति या उत्तरदाता के ज्ञान, शब्दावली, विश्लेशण-संश्लेषण, कारण-परिणाम संबंध आदि से संबंधित क्षमताओं के मापन में किया जाता है। इस तरह के एकांशो का सबसे फायदा यह होता हैं कि इसके संगठनात्मक क्षमता को छोड़कर अन्य सभी प्रकार के शैक्षिक तथा निर्देशात्मक क्षमता की माप सफलतापूर्वक होती है। इस तरह के एकांश का एक लाभ यह भी बतलाया गया है कि अन्य दूसरे तरह के वस्तुनिष्ठ एकांशों की तुलना में इसे आसानी से सही-सही ढंग से वस्तुनिष्ठ तरीके के अंकन किया जाता है।

इन लाभों के बावजूद बहुविकल्पीय एकांश के कुछ परिसीमाएँ भी है जो निम्नांकित है-

1. ऐसे एकांशों द्वारा उत्तरदाता या व्यक्ति संगठनात्मक क्षमता या अपने आपको अभिव्यक्त करने की क्षमता का मापन संभव नही है।

2. बहु-विकल्पीय एकांशो को लिखना या तैयार करना कठिन है क्योंकि ऐसे एकांशों को लिखने के लिए आवश्यक है कि एकांश -लेखक को विषय वस्तु का सम्पूर्ण ज्ञान हो।

3. ऐसे एकांशों का उत्तर देने में उत्तरदाता को अन्य वस्तुनिष्ठ एकांशों की तुलना में काफी अधिक समय लगता है।

iii. **मिलान एकांश :-**

ऐसे एकांशों में दो कॉलम होते है-एक दांया कॉलम तथा दूसरा बांया कॉलम बांया कालम के शब्दों या वाक्याशों को दायां कालम के शब्दों या वाक्यांशों के साथ सही-सही ढंग से मिलाना होता है। इस तरह के एकांश का एक उदाहरण नीचे दिया जा रहा है।

नीचे बांयी तरफ कुछ सांख्यकीय विधियों के नाम दिये गये तथा दायी और इन विधियों से संबंधित अनुसंधानकर्ता का नाम दिया गया है। सबसे बांयी ओर एक डैस रेखा खींची गयी है जिस पर आप सांख्यिकीय विधियों से संबंधित अनुसंधानकर्त्ता के नाम के अक्षर क्रमांकों को लिख दें।

	सांख्यिकीय विधि के नाम	अनुसंधानकर्त्ता का नाम
A	घूर्णन-आघूर्ण विधि	फिशर
B	एफ अनुपात	स्पीयर मैन
C	कोटि-अन्तर विधि	पियर्सन
D	संगति-गुणांक	केंडाल

मिलान एकांश का प्रयोग तारीख, घटना, नाम, चित्र आदि से संबंधित स्मृति क्षमता की जाँच करने के लिए किया जाता है। दूसरें शब्दों में, मिलान एंकाश का सबसे प्रमुख लाभ यह है कि इसके द्वारा उन उपलब्धियों का मापन आसनी से होता है जिसमें साहचर्यात्मक सीखना सम्मिलित होता है।

मिलान एंकाशों की कुछ परिसीमाएँ या दोश   भी बतलायें गये है जो निम्नांकित है

1. मिलान एकांशों द्वारा संप्रत्यय के बारे में उत्तरदाता का ज्ञान कितना है, इसका मापन सही-सही नही हो सकता है क्योंकि एकांशों द्वारा मात्र तात्विक साहचर्यो का ही मापन होता है।

2. ऐसे एकांशो द्वारा उत्तरदाता की संगठनात्मक क्षमता का मापन नही हो पाता है।

3. ऐसे एकांशों में यदि उत्तरदाता एक युग्म को छोड़कर अन्य सभी युग्मों के सही उत्तरो को जानता है, तो वह अन्तिम युग्म का भी उत्तर छंटनी की प्रक्रिया द्वारा अपने आप ज्ञात कर लेता है। ऐसा सचमुच में नही होना चाहिए क्योंकि प्रावधान ये होना चाहिए कि किसी प्रश्न का उत्तर उत्तरदाता अपने ज्ञान के आधार पर दे सकें।

4. ऐसे एंकाशों को तैयार करना भी शोधकर्ता या एकांश लेखक के लिए बहुत कठिन होता है।

स्पष्ट हुआ, कि मनोवैज्ञानिक तथा शैक्षिक शोधों में परीक्षण का प्रयोग होता है, उसमें दो तरह के ही एंकाशों का उपयोग किया जाता है।-आत्मनिष्ठ एकांश तथा वस्तुनिष्ठ एकांश /वस्तुनिष्ठ एकांश में बहु-विकल्पी एंकाशों पर आधारित मनोवैज्ञानिक परीक्षाणों की अधिकता पाई जाती है।

13.5 पद या एकांश लेखन के सामान्य निर्देश -

मनोवैज्ञानिक शैक्षिक परीक्षण में भिन्न-भिन्न तरह के एकांशों का प्रयोग किया जाता है। ऐसे एकांशों श्रेष्ठ हों तथा उत्तम गुण के हो। इसके लिए यह आवश्यक है कि एकांश -लेखन या शोधकर्ता कुछ निश्चित सामान्य निर्देश के अनुकूल काम करें। इन सामान्य निर्देशों मे निम्नांकित अधिक महत्वपूर्ण बतलाया गया है –

I. एकांशों को स्पष्ट शब्दों मे लिखा जाना चाहिए। एकांश की भाषा सरल हो तथा इसे निश्चित रूप से भाषा समझने की क्षमता की जाँच करने वाला नही होना चाहिए। एकांश की भाषा ऐसी होनी चाहिए कि वह स्पष्टतः श्रेष्ठ व्यक्तियों तथा निम्न व्यक्तियों में अन्तर कर सकें। भाषा की स्पष्टता का ख्याल विशेषकर एकांश-लेखक को वस्तुनिष्ठ एकांश के लिखने में अधिक करना चाहिए क्योंकि ऐसे प्रत्येक एकांश द्वारा ज्ञान की एक पृथक इकाई का मापन होता है। ऐसे एकांश में स्पष्टत रह जाने से इसकी वैधता काफी प्रभावित होती है।

II. अक्रियात्मक शब्दों को एकांश में सम्मिलित नही करना चाहिए। क्योंकि ऐसे शब्दों का एकांश की वैधता पर कुप्रभाव पड़ता है। प्रायः ऐसे अक्रियात्मक शब्दों का प्रयोग एकांश -लेखक द्वारा वस्तुनिष्ठ एकांश के आसेधक को प्रभावी बनाने के लिए किया जाता है। ऐसे अक्रियात्मक शब्दों का सही अनुक्रिया करने में कोई विशेष योगदान नही होता है।

III. एकांश में असंगत परिशुद्धता को यथासंभव सम्मिलित नही किया जाना चाहिए। इस ढंग की असंगत परिशुद्धता एकांश लेखक के अपरिपक्व चिन्तन का द्योतक होता है और इस तरह के एकांश से उत्तदाता भी सही उत्तर का चयन करने में पेशोपेश में पड़ जाता है।

IV. एकांश की कठिनता स्तर न तो अधिक और ही कम होना चाहिए। दूसरें शब्दों में एकांश न तो बहुत अधिक आसान ओर न बहुत अधिक कठिन होना चाहिए। इन दोनों तरह के एकांशों की बैद्यता बहुत कम होती है। अतः एकांश -लेखक के अपरिपक्व चिन्तन का द्योतक होता है।

V. यथासंभव एकांश लेखक को चाहिए कि वह एकांशों में रूढ़िवद्ध शब्दों का प्रयोग न करें क्योंकि इस तरह के शब्दों से वैसे उत्तरदाता को अनावश्यक रूप से सभी उत्तर ढूँढ़ने में कुछ मदद मिल जाती है जो रट्टूमल होते है। ऐसे रूढ़िवद्ध शब्द चूँकि उत्तरदाताओं में अधिक लोकप्रिय होते है, अतः उसे एकांश में देखते ही वे संभावित उत्तर को आसानी से चाहे सही ज्ञान न हो, खोज लेता है। अतः ऐसे शब्दों का प्रयोग यथासंभव एकांश -लेखक को नही करना चाहिए।

VI. एकांश -लेखक को असंगत संकेत से बचना चाहिए। कभी-कभी एकांश -लेखक उच्चारण में समानता करके, शब्द की आवाजों में समानता लाकर या उत्तर के आकार में वृद्धि करके सही उत्तर की दिशा में उत्तरदाता के लिए अनावश्यक संकेत छोड़ देता है। इसका परिणाम यह होता है कि उत्तरदाता सही उत्तर को अपने ज्ञान के आधार पर नही बल्कि इन असंगत संकेतों के ही आधार पर ढूँढ़ निकालते हैं। इससे एकांश की वैधता कम हो जाती है।

VII. जब द्विविकल्पी एकांश लिखा जा रहा हो, जो वैसी परिस्थिति में विशिष्ट सूचक जैसे, 'कभी नही', 'हमेशा', सभी, कुछ भी नही आदि को सम्मिलित नही करना चाहिए क्योंकि ऐसे शब्दों से भी उत्तर के बारे में उत्तरदाता को अनावश्यक संकेत मिल जाता है।

VIII. अन्तर्बद्ध एकांशों को परीक्षण में सम्मिलित नही किया जाना चाहिए। अन्तर्बद्ध एकांश वैसे एकांश को कहा जाता है जिसका सही उत्तर अन्य एकांशो से बिना संबंध स्थापित किये हुए नही दिया जा सकता है। ऐसे एकांशो द्वारा सभी उत्तरदाताओं को उत्तर दने का समान अवसर नहीं मिल पाता है। अन्तर्बद्ध एकांश का एक उदाहरण इस प्रकार है।

1. कोटि-अन्तर सहसंबंध विधि दो चरों के बीच संबंध ज्ञात करने की विधि है। सही/गलत
2. इस विधि का प्रतिपादन फिशर द्वारा किया गया था। सही /गलत
3. इस विधि का प्रयोग सिर्फ कोटि में व्यक्त किये गये आंकड़ों के लिए होता है। सही/गलत

अब इस उदाहरण में उत्तरदाता एकांश संख्या 2 तथा एकांश संख्या 3 का सही-सही उत्तर तभी दे सकता है जब वह एकांश संख्या का सही सही उत्तर जानता हो। अतः ये दोनो ही अन्तर्बद्व एकांश के उदाहरण हैं। ऐसे एकांशों का प्रयोग एकांश -लेखक को नही करना चाहिए क्योंकि ऐसे एकांश सभी उत्तरदाता को उत्तर देने के लिए समान अवसर प्रदान नही करते हैं।

इस तरह से हम देखते हैं कि एक उत्तम एकांश -लेखन के लिए शोधकर्ताओं ने कुछ विशेष -निर्देश बना रखा है जिसे यदि ठीक ढंग से पालन किया जाए जो उत्तम एकांश -लेखन का कार्य, सरल सुगम एक सुलभ हो सकता है।

13.6 निबन्धात्मक परीक्षण तथा वस्तुनिष्ठ परीक्षण का तुलनात्मक अध्ययन-

जिस परीक्षण में निबन्धात्मक एकांशो, का प्रयोग होता है, उसे निबन्धात्मक परीक्षण कहा जाता हैं तथा जिस परीक्षण में वस्तुनिष्ठ एकांशों का प्रयोग होता है, उसे वस्तुनिष्ठ परीक्षण कहा जाता है। इन दोनों तरह के परीक्षणों में कुछ समानताएँ एव विषमताएँ है जिन पर प्रकाश डालना अनिवार्य है। इन दोनों तरह के परीक्षणों में प्रमुख समानताएँ निम्नाकिंत है-

1. निबन्धात्मक परीक्षण तथा वस्तुनिष्ठ परीक्षण दोनों में ही दोनो आत्मानिष्ठता का तत्व सम्मिलित होता है। वस्तुनिष्ठ परीक्षण में एकाशों को लिखने में तथा परीक्षण की वैधता ज्ञात करने के ख्याल से किसी बाह्य कसौटी के चयन में आत्मनिष्ठता सम्मिलित होती है। आत्मनिष्ठ परीक्षण में एकांशों को लिखने तथा उसका चयन करने में आत्मनिष्ठता सम्मिलित होती है। स्पष्ट हुआ कि इन दोनों तरह के परीक्षणों में आत्मानिष्ठता का तत्व सम्मिलित होता है।
2. इन दोनों ही तरह के परीक्षणों में परीक्षण प्राप्तांकों की वस्तुनिष्ठ व्याख्या पर बल डाला जाता है।
3. किसी भी तरह के शैक्षिक ज्ञान को निबन्धात्मक परीक्षण तथा वस्तुनिष्ठ परीक्षण द्वारा आसानी से मापा जा सकता है।

   इन समानताओं के बावजूद इन दोनों तरह के परीक्षणों में कुछ विभिन्नताएँ है, जो निम्नांकित है।

1. निबन्धात्क परीक्षण में चिन्तन एवं लेखन महत्त्वपूर्ण होता है। जबकि वस्तुनिष्ठ परीक्षण में चिन्तन एवं पठन महत्वपूर्ण होता है। निबन्धात्मक परीक्षण में व्यक्ति पूछे गये प्रश्नों पर ठीक ढंग से गहन रूप से सोचता है और फिर उससे सम्बन्धित मन में आए विचारों को संगत ढंग से लिखता है। वस्तुनिष्ठ परीक्षण में व्यक्ति प्रश्नों एवं एकांशों को पढ़ते जाता है और फिर सोचकर दिए हुए सही उत्तर पर टिक या अन्य कोई चिह्न लगा देता है।
2. निबन्धात्मक परीक्षण का विस्तार वस्तुनिष्ठ परीक्षण की तुलना में सीमित होता है। चूँकि निबन्धात्मक परीक्षण में प्रश्नों की संख्या आमतौर पर 10-12 ही होती है, अतः चाह कर भी शोधकर्ता समग्र क्षेत्र से प्रश्न नही पूछ सकता है। परन्तु वस्तुनिष्ठ परीक्षण में चूँकि प्रश्नों की संख्या अधिक होती है, अतः शोधकर्ता के लिए समग्र क्षेत्र से प्रश्नों का चयन करना बिल्कुल ही आसान हो जाता है। अतः इस परीक्षण का विस्तार स्वभावतः निबन्धात्मक परीक्षण से बड़ा होता है।
3. उत्तरों का मूल्यांकन करने के आधार पर निबन्धात्मक परीक्षण, वस्तुनिष्ठ परीक्षण की तुलना में अधिक वैज्ञानिक नही होते है। निबन्धात्मक परीक्षण में उत्तरों का मूल्यांकन करने में आत्मनिष्ठता अधिक होती है क्योंकि ऐसे परीक्षण का मूल्यांकन एक परीक्षक से दूसरे परीक्षक तथा कभी कभी

एक ही परीक्षक द्वारा भिन्न-भिन्न समय में अलग-अलग होता है। परन्तु वस्तुनिष्ठ परीक्षण के उत्तरों के मूल्यांकन में ऐसी बात नही होती है। ऐसे उत्तरों का मूल्यांकन किसी भी परिस्थिति में किसी भी परीक्षक द्वारा एक ही तरह का होता है।

4. निबन्धात्मक परीक्षण में परीक्षक के पूर्वाग्रह एवं पक्षपात का विशेष महत्व होता है जिसका उत्तरों के मूल्यांकन पर अधिक असर पड़ता है। परीक्षक ऐसे उत्तरों में पहले ही एक धारणा बनाये हुए होते है कि उत्तर का प्रारम्भ एवं अन्य एक खास तरह का होना चाहिए, तथा उसकी भाषा शैली, तथ्यों का प्रस्तुतीकरण एवं संगठन निश्चित ढंग का होना चाहिए, आदि। परन्तु वस्तुनिष्ठ परीक्षण में ऐसी कोई नही बात होती है और परीक्षक इन बातों के बारें में कभी सोचता भी नही है। क्योंकि व्यक्ति को यहाँ कुछ लिखने की कोई आवश्यकता नही होती है।
5. वस्तुनिष्ठ परीक्षण का स्वरूप कुछ भी क्यों न हो, व्यक्ति या उत्तरदाता उसमें अटकलबाजी के आधार पर कुछ न कुछ सही उत्तर ढूँढ ही निकाल पाते हैं। निबन्धात्मक परीक्षण में इस ढंग की अटकलबाजी तो नही चल पाती है परन्तु कभी-कभी उत्तरदाता आँख में धूल झांककर निकल जाने की कोशिश आवश्यक करते हैं। अक्सर देखा गया है कि निबन्धात्मक परीक्षण के किसी प्रश्न का उत्तर जब सही-सही नही जानते हैं तो वे कुछ भी लिखकर उसे आकर्षक भाषा रूपी चादर में लपेट देते हैं। इसका परिणाम कभी-कभी यह होता है कि परीक्षक छात्र को तीव्र बुद्धि का समझकर एवं दिये गये उत्तर को एक उत्तम उत्तर समझकर अच्छा अंक देने की भूल कर बैठते है।
6. निबन्धात्क परीक्षण में छात्रों की संगठनात्मक क्षमता, मनोवृत्ति एवं अभिरूचि आदि का पता आसानी से लग जाता है परन्तु वस्तुनिष्ठ परीक्षण में उत्तरदाताओं के इन सब पहलुओं की भनक तक नही मिल पाती है।
7. निबन्धात्मक परीक्षण में उत्तरदाता प्रश्नों का उत्तर यथासंभव अपने शब्दों में लिखते है। उत्तरदाता अपने मन से तथ्यों का प्रत्याह्वान करके उसे अपनी इच्छानुसार तथ्यों को संगठित करते है जिससे उनको अपनी कुशलता दिखलाने का अच्छा मौका मिलता है। परन्तु वस्तुनिष्ठ परीक्षण मे ऐसी बात नही हैं क्योंकि यहाँ उत्तरदाता को कुछ लिखने की आवश्यकता होती ही नही है। उसे सिर्फ दिए गये उत्तरों में से किसी एक का चयन करके ही अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करनी होती है।
8. निबन्धात्मक परीक्षण का संचालन तथा उसके प्रश्नों का निर्माण करना शोधकर्ता के लिए आसान, कम श्रम एवं समय लेने वाला होता है। परन्तु वस्तुनिष्ठ परीक्षण के प्रश्नों को निर्मित करना शोधकर्ता के लिए टेढ़ी खीर है। अक्सर ऐसा देखा गया है कि इनका निर्माण सभी शोधकर्ता नही कर पाते है। बल्कि अनुभव प्राप्त शोधकर्ता ही कर पाते है।
9. मोटे तौर पर निबन्धात्मक परीक्षण एक तरह का प्रत्याह्वान परीक्षण है क्योंकि उत्तरदाता अपने पूर्व सीखी गई अनुभूतियों एवं साहचर्यों को उनके मूल स्रोत की अनुपस्थिति में ही चेतना में लाता है।

परन्तु वस्तुनिष्ठ परीक्षण में (पूर्ति परीक्षण को छोड़कर) उत्तरदाता को दिये गये उत्तरों मे से सही उत्तर की पहचान करनी पड़ती है। अतः वस्तुनिष्ठ मूलतः एक तरह का पहचान परीक्षण है।

10. निबन्धात्मक परीक्षण में छात्रों की लेखन-गति अभ्यास के कारण बढ़ जाती है। परन्तु वस्तुनिष्ठ परीक्षण में लेखन अभ्यास न होने से छात्रों की लेखन-गति बढ़ने का कोई प्रश्न ही नही उठता है।

स्पष्ट हुआ कि निबन्धात्मक परीक्षण तथा वस्तुनिष्ठ परीक्षण में कुछ समानता होते हुए भी काफी विभिन्नता है।

13.7 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. वस्तुनिष्ठ एकांश को कितने भागों में बाँटा गया हैं।

   i. ....

   ii. ....

2. निम्नलिखित में से किस वस्तुनिष्ठ एकांश में वस्तुनिष्ठता सबसे कम होती है।

   i. द्विविकल्प एकांश
   ii. बहु विकल्प एकांश
   iii. पूरक एकांश
   iv. मिलान एकांश

   ....

3. बहु-विकल्प एकांशों में एक सही उत्तर होता है तथा अन्य उत्तर सही उत्तर से मिलता-जुलता उत्तर होता है। ऐसे उत्तर को कहा जाता है।

   i. गलत विकल्प
   ii. अनुपर्युक्त उत्तर
   iii. आसेधक
   iv. इनमें से कोई भी नही

13.7 सारांश:-

मनोमीति में एकांश से तात्पर्य एक ऐसे प्रश्न या पाठ से होता है जिसके विभाजन नही किए जा सकते हैं। किसी एकांश को उत्तम कहलाने के लिए उसे स्पष्ट भाषा में लिखा जाना आवश्यक होता है तथा साथ ही साथ उसकी कठिनता स्तर को भी न ज्यादा और न ही कम बल्कि साधारण स्तर का होना अनिवार्य है। मनोवैज्ञानिक एवं शैक्षिक परीक्षणों में प्रयोग होने वाले एकांशों को मूल रूप से दो भागों में बाँटा गया है- आत्मनिष्ठ एकांश तथा वस्तुनिष्ठ एकांश। वस्तुनिष्ठ एकांश को भी फिर मूलतःतीन भागों में बाँटा गया है- द्विकल्पी एकांश, बहु-विकल्पीय एकांश तथा मिलान एकांश इन सबके दुण-दोष की भी व्याख्या उदाहरण सहित की गयी है। एकांश -लेखन के कुछ सामान्य निर्देशों का भी वर्णन किया गया है। इन

निर्देशों के आलोक में एकांश -लेखन करने से उत्तम एकांश तैयार किये जा सकते है। निबन्धात्मक परीक्षण तथा वस्तुनिष्ठ परीक्षण का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। इन दोनों के बीच व्याप्त समानताओं एवं विस मताओं पर पर्याप्त प्रकाश डाला गया है।

13.9 शब्दावली

- **एकांश या पद** (Item)एक ऐसा प्रश्न या पाठ जिसका विभाजन किसी छोटी इकाई में नही किया जा सकता है।
- **निबन्धात्मक पद** (Essay Item) वैसा एकांश या पद जिसमें प्रयोज्य या प्रश्नों के उत्तर देने में अपनी स्मृति से प्राप्त अनुभूतियों एवं साहचर्यों को संगठित करके प्रयोग करता हैं।
- **वस्तुनिष्ठ एकांश** (Objective Item) एक ऐसा एकांश जिसका एक ही निश्चित उत्तर होता है।
- **द्विविकल्पी एकांश** (Two-alternative Item) वैसे एकांश या पद जिसके उत्तर के लिए दो विकल्प हों।
- **आसेधक** (Detractor) सही उत्तरों से ध्यान हटाने के लिए वैसे ही गलत उत्तरों का प्रयोग किया जाता है जिसे आसेधक कहा जाता है।

13.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. वस्तुनिष्ठ एकांश को दो भागों में बाटा गया है। (क) आपूर्ति प्रकार का वस्तुनिष्ठ एकांश (ख) चयन प्रकार का वस्तुनिष्ठ एकांश
2. पूरक एकांश में वस्तुनिष्ठता सबसे कम होती है।
3. सही उत्तर से मिलते-जुलते उत्तर को आसेधक (Destructor) कहा जाता है।

4. 13.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

8. Bean, K.L. (1953) Construction of Education and Personnel Tests New York: Mc Grew hill Book Co.
9. Bharyava, M. (1997), Psychological Test and Measurement, Printer Palace, Agra.
10. Bradfield J.M. & Murdock. H.S.: Measurement and Evaluation in Education, 1975 P.100.
11. Brown F.G. (1970), Principles of Educational and Psychological Testing. New York : Dryden Press.

12. Freeman, Frank, S. (1971), Theory and Practice of Psychological Testing. New Delhi: Oxford & IBH Publishing Co. Pvt. Ltd.
13. Guilford, J.P. (1954), Psychometric Methods. New Delhi: Take MC Grow hill Publishng Co.
14. Harper, A.E., Dashgupta, B. and Sangal, S.P. (1965). Item Analysis Chart & Instruction. Delhi: Manasayan.
15. Srivastava, Rani.J., (1999), Psychological & Educational Measurement Motilal Banarshi das Publication, Delhi.

9. Tate, M.W.: Statistics in education and Psychology, (1967), P. 205

13.12 निबन्धात्मक प्रश्न -

1. एकांश या पद का क्या अर्थ है। एकांश की कौन- कौन सी विषेशतायें होती है वर्णन कीजिए।
2. एकांश के प्रकार का सविस्तार वर्णन कीजिए।
3. एकांश या पद के सामान्य चरण कौन-कौन से हैं वर्णन कीजिए।
4. निबन्धात्मक एवं वस्तुनिष्ठ परीक्षण किसे कहते है इसके गुण दोषों का सविस्तार वर्णन कीजिए।

इकाई 14:- पद विश्लेषण: पदों का कठिनाई स्तर एवम पद विभेदन शक्ति, पद के कठिनाई स्तर एवं विभेदन शक्ति में सम्बन्ध

इकाई की रूप रेखा

14.1 प्रस्तावना

14.2 उद्देश्य

14.3 पद विश्लेषण

14.4 पद कठिनता के स्तर

14.5 कठिनता स्तर का निर्धारण

14.6 पद की विभदेनशक्ति

14.7 विभदेन शक्ति का निर्धारण

14.7.1 फ्लानागन का प्रोडेक्ट मोमेन्ट सहसंबध गुणांक विधि

14.7.2 डेविस विभेदनकारी सूची

14.7.3 सायमण्ड विधि

14.7.4 कैली विधि

14.7.5 गिलफोर्ड का काई वर्ग परीक्षण विधि

14.8 पद विश्लेषण प्रक्रिया के चरण

14.9 पद की कठिनता स्तर एवं विभेदन शक्ति में संबंध

14.10 सारांश

14.11 पारिभाषिक शब्दावली

14.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

14.13 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

14.14 निबन्धात्मक प्रश्न

14.1 प्रस्तावना:-

किसी परीक्षण की प्रभावशीलता एवं उपयोगिता उसमें निहित पदों की विशेषताओं पर निर्भर करती है। परीक्षण को अत्यधिक प्रभावशाली बनाने के लिए परीक्षण निर्माण को इसमें सम्मिलित होने वाले समस्त पदों का पृथक-पृथक अध्ययन करना होता है। यह अध्ययन पद-विश्लेषण विधि द्वारा किया जाता है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप पद की कठिनता तथा उसकी विभेदन शक्ति को ज्ञात करने एवं उसके परीक्षण रचना में महत्व के बारे में जान सकेंगे।

पद-विश्लेषण के सम्बन्ध में फ्रीमैन का सुझाव है, ''पदों के मूल्यांकन में दो पहलुओं पर मुख्य रूप से विचार करना चाहिए- प्रथम, प्रत्येक पद का कठिनता स्तर तथा द्वितीय, प्रत्येक पद की विभेदन शक्ति।'' परीक्षण के अन्तिम रूप की रचना करने के लिये पद-विश्लेषण विधि के कठिनता स्तर व विभेदन शक्ति का प्रयोग अत्यन्त आवश्यक है।

14.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद जान सकेंगे कि -

- पद-विश्लेषण किस प्रकार होता है।
- कठिनता-स्तर के अर्थ को स्पशट कर सकेंगे।
- कठिनता स्तर का निर्धारण कैसे होता है।
- कठिनता-स्तर ज्ञात करने की विधियों के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे
- पद की विभेदन शक्ति के अर्थ को जान सकेंगे।
- विभेदन शक्ति की गणना किन विधियों द्वारा की जाती है उसके बारे में जान सकेंगे।
- पद-विश्लेशण प्रक्रिया के महत्वपूर्ण चरण कौन से हैं।
- पद की कठिनता स्तर एवं विभेदन शक्ति में सम्बन्ध।

14.3 पद-विश्लेषण -

किसी परीक्षण की प्रभावशीलता एवं उपयोगिता उस परीक्षण में सम्मिलित होने वाले पदों की विशेषता पर निर्भर करता है। किसी परीक्षण का फलांक उसकी वैधता, विश्वसनीयता तथा उसमें सम्मिलित पदों के आपसी सहसम्बन्ध के फलस्वरूप प्राप्त होता है। पदों को लिख लेने तथा कुछ विशेषज्ञों के परामर्श से संशोधन कर लेने के बाद पदों का विश्लेषण किया जाता है। परीक्षण को अत्यधिक प्रभावशाली बनाने के उद्देश्य से परीक्षण में सम्मिलित होने वाले सभी पदों का अलग-अलग अध्ययन किया जाता है। इस कार्य को ही पद विश्लेषण कहा जाता है। इस प्रक्रिया के अंतर्गत सम्मलित सभी पदों का व्यक्तिगत रूप से अध्ययन किया जाता है तथा यह देखने का प्रयास किया जाता है कि समस्त पदों में से प्रत्येक व्यक्तिगत

पद को किसी समूह के कितने प्रतिशत व्यक्तियों ने समाधान करने का प्रयास किया। इसके अंतर्गत पद की प्रभावशीलता तथा उपयुक्तता का अध्ययन किया जाता है।

ग्रे (Gray,1980) के अनुसार, ‘‘पद विश्लेषण मूल रूप से पदों की प्रभावशीलता की माप करने के ख्याल से प्रत्येक पद के प्रति किये गये अनुक्रियाओं के पैटर्न का एक परीक्षण है।’’

दूसरे शब्दों में पदों के विश्लेषण द्वारा मूलरूप से पदों की प्रभावशीलता का मापन होता है। इसके अतिरिक्त इस प्रविधि द्वारा यह भी पता चल जाता है कि कौन-कौन से पदों का उपयोग किया जा सकता है और किन पदों को परीक्षण से निकाला जा सकता है। या कौन से ऐसे पद हैं जिनमें परिमार्जन (Modification) की आवश्यकता है।

14.3.1 पद विश्लेषण के विशेष उद्देश्य

1.पद विश्लेषण का प्रमुख उद्देश्य पदों के कठिनता स्तर का पता लगाना है कौन सा पद आसान या सरल है तथा कौन से पद का कठिनता स्तर औसत है।

2.पद विश्लेषण का दूसरा प्रमुख उद्देश्य पदों के विभेदन शक्ति का पता लगाना होता है। कुछ ऐसे पद होते हैं जिनकी विभेदन शक्ति अधिक होती है तथा कुछ ऐसे पद होते हैं जिनकी विभेदन शक्ति बहुत कम या नही के बराबर होती है। विभेदन शक्ति से तात्पर्य है कि श्रेष्ठ या उत्तम व्यक्तियों तथा वैसे व्यक्तियों जिनके पास परीक्षण द्वारा मापे जाने वाले गुण कम है, के बीच स्पष्ट अन्तर करने की क्षमता से होता है।

14.4 पद कठिनता स्तर (Item Difficulty Level)

शिक्षक, विद्यार्थी,शोधकर्त्ता आदि सभी लोग यह जानने का प्रयास करते हैं कि

- पद कठिनता क्या होता है।
- पद कठिनता कैसे ज्ञात करते हैं ।
- इसकी उपयोगिता क्या है।
- पद कठिनता को ज्ञात करने की कौन-कौन सी विधियाँ है।

परीक्षण में जितने पद होगें उतने ही स्वतन्त्र रूप से कठिनता-स्तर होंगे। परीक्षण के पदों में कठिनता स्तर इंगित करने के लिए किसी पद का सही व गलत उत्तर देने वाले व्यक्तियों का प्रतिशत ज्ञात किया जाता है। किसी समूह के समस्त व्यक्तियों द्वारा हल करने वाले तथा हल न करने वाले पद को परीक्षण में सम्मिलित नहीं किया जाता है। जो पद समूह के पचास प्रतिशत व्यक्तियों द्वारा हल कर लिया जाता है। वह उपयुक्त कठिनता स्तर का समझा जाता है। यह जरूरी नहीं है कि परीक्षण में केवल ऐसे पद ही सम्मिलित किये जाए जिन्हें पचास प्रतिशत व्यक्तियों ने हल किया है, बल्कि ऐसे पदों को भी शामिल किया जाता है जिन्हें समूह के श्रेश्ठतम व निम्नतम व्यक्तियों ने भी हल किया हो। कठिनता स्तर से पदों को क्रमिक रूप से व्यवस्थित किया जा सकता है। इससे यह भी संकेत मिलता है कि परीक्षण में कौन-सा पद प्रथम, मध्य

तथा अन्त में आयेगा। पदों का कठिनता स्तर ज्ञात करने की कोई निष्चित उपयुक्त विधि नहीं है। टाटे (Tate,1967) के अनुसार ''पद के कठिनता को ज्ञात करने की सबसे उपयोगी विधि पद को सही हल करने वाले परीक्षार्थियों का अनुपात है। अनुपात जितना कम होगा पद उतना ही कठिन होगा।''

इस सम्बन्ध में ब्रेडफील्ड तथा मोरडोक का विचार है ''विभेदन शीलता की मात्रा को पद कठिनता की सूची के रूप में लिया जा सकता है, समूह के 90 प्रतिशत व्यक्तियों द्वारा शुद्ध हल किये गये पद को अति सरल पद, 10 प्रतिशत व्यक्तियों द्वारा शुद्ध हल किये गये पद को अति सरल पद, 10 प्रतिशत व्यक्तियों द्वारा हल किये गये पद को अति कठिन पद तथा 50 प्रतिशत व्यक्तियों द्वारा शुद्ध हल किये गये पद को उपयुक्त कठिनता-स्तर का पद समझा जाता है।''

14.5 कठिनता स्तर का निर्धारण

पद की कठिनता स्तर ज्ञात करने की प्रमुख विधियां निम्न हैं।

I. सामान्य सूत्र के माध्यम सेः पद के कठिनता स्तर को ज्ञात करने का सामान्य सूत्र इस प्रकार है-

$$\text{ID} = \frac{R}{N} X100$$

यहाँ,

I.D.	=	पद कठिनता
R	=	सही उत्तर देने वाले व्यक्तियों की संख्या
N	=	व्यक्तियों की कुल संख्या

यदि किसी समूह के 75 छात्रों में से 60 ने पद का सही उत्तर दिया। तो इस पद का कठिनता स्तर

$$\text{I.D.} = \frac{60}{75} X100$$

I.D. = 80% होगा,

अतः किसी पद का कठिनता स्तर परीक्षण करने वाले व्यक्तियों का वह प्रतिशत है जो किसी प्रश्न का सही रूप में उत्तर देते हैं।

II. **27 प्रतिशत उच्च तथा 27 प्रतिशत निम्न समूह के सही प्रत्युतर द्वारा**

इस विधि द्वारा कठिनता स्तर ज्ञात करने के लिए सर्वप्रथम सभी उतरदाताओं के परीक्षण के कुल प्राप्तांक के आधार पर उच्चतम से निम्नतम की ओर व्यवस्थित करके उसमें से ऊपर के 27 प्रतिशत तथा नीचे के 27 प्रतिशत व्यक्तियों का चयन किया जाता है। इसके बाद प्रत्येक पद के सही प्रत्युतरों की गणना का उच्च तथा निम्न समूहों का अलग-अलग योग ज्ञात कर निम्नांकित सूत्र द्वारा कठिनता स्तर ज्ञात किया जाता है-

100-U+L/2

उदाहरणार्थ, किसी पद को उच्च समूह के 50 व्यक्तियों तथा निम्न समूह के 27 व्यक्तियों ने हल किया तो उसका कठिनता स्तर 100 - 50+ 20//2= 100-35= 65 होगा। इस विधि में कठिनता मूल्य का प्रसार 0 से 100 तक होता है। 90 से अधिक तथा 19 से कम कठिनता मूल्य वाले पद को कमजोर तथा अनुपयुक्त समझना चाहिए। अत्यन्त कठिन व अत्यन्त सरल पदों को परीक्षण में नही रखना चाहिए।

III. हार्पर की फैसीलिटी इन्डेक्स (Facility Index)

27 प्रतिशत उच्च तथा 27 प्रतिशत निम्न समूह के प्रत्युतर की विधि एक ऐसा प्रतिशत है जिसके द्वारा विश्वसनीय परिणाम प्राप्त किये जा सकते है। हार्पर की विधि में उच्च समूह तथा निम्न समूह के सही प्रत्युतरों को जोड़कर दोनों समूहों के अधिकतम योग से विभाजित कर दिया जाता है।

Facility Index का सूत्र निम्न है-

Facility Index **(FI)** = $\frac{R(U)+R(L)}{2E}$

उदाहरणार्थ, यदि 400 में से किसी उच्च समूह के 70 तथा निम्न समूह के 50 व्यक्तियों ने सही प्रत्युतर दिया तो उनका

$$\mathbf{(FI)} = \frac{\mathbf{70+50}}{\mathbf{2x108}}\mathbf{X100}$$

FI = $\frac{\mathbf{120}}{\mathbf{216}}$**x100 = 56%** हुआ। अर्थात इस पद का कठिनता स्तर 56 प्रतिशत हुआ।

IV.सामान्य वक्र के द्वाराः-

परीक्षण पद के कठिनता स्तर को सामान्य वक्र के मानक विचलन द्वारा भी ज्ञात किया जा सकता है। यदि किसी परीक्षण पद को 84 प्रतिशत परीक्षार्थी सही रूप में हल कर लेते है तो सामान्य वक्र में उनका क्रम-1σ (S.D.) होगा अर्थात मध्यमान से 1 मानक विचलन कम होगा। इसी तरह यदि पद को केवल 16 प्रतिशत विद्यार्थी ही हल कर पाते है तो उनका क्रम +1σ(S.D.) होगा। कहने का तात्पर्य है कि किसी अमुक पद का कठिनता स्तर -0.56 (S.D.) या +0.56 (S.D.) है, तो इसका तात्पर्य यह होगा कि उस पद को क्रमश:69 प्रतिशत तथा 31 प्रतिशत व्यक्तियों ने हल किया। अतः यहाँ पर कठिनता स्तर 31 प्रतिशत होगा।

अभ्यास हेतु प्रश्न

---

1. पद के कठिनता स्तर को ज्ञात करने के सामान्य सूत्र क्या है?
2. फैसिलिटी इन्डेक्स का सूत्र क्या है?

निर्देष: अपना उत्तर नीचे दिए गऐ स्थान में लिखें। इस इकाई के अंत में दिये गए उत्तरों से अपने उत्तर की जांच करें।

....

....

....

....

14.6 पद की विभेदन शक्ति (Discrimination Power if Item)

सभी शोधकर्ता, विद्यार्थी इस बात को जानने के लिए उत्सुक रहते हैं कि-

- पद की विभेदन शक्ति से क्या तात्पर्य है?
- पद विभेदन कैसे ज्ञात करते है?
- इसको ज्ञात करने की कौन-कौन सी विधियाँ है?
- पद विभेदन शक्ति की क्या उपयोगिता है?

किसी मनोवैज्ञानिक परीक्षण के लिए लिखे गये पदों की एक महत्वपूर्ण विशेषता विभेदन शक्ति कही जाती है। यह माना जाता है कि मापी जाने वाली योग्यता समूह के सभी व्यक्तियों में समान मात्रा में नहीं पायी जाती। कुछ व्यक्ति योग्यता में अधिक तथा कुछ कम योग्यता वाले होगे। उदाहरणार्थ, यदि हम बुद्धि का मापन कर रहे है तो कुछ व्यक्ति औसत से नीचे पाये जायेगें। एक अच्छे परीक्षण की यह विशेषता होनी चाहिए कि वह व्यक्तियों की योग्यता की मात्रा के आधार पर भेद या अन्तर को स्पश्ट कर सके। अतः इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए पदों के भीतर विभेदन करने की क्षमता पाया जाना अत्यन्त आवश्यक है। पदों की इसी क्षमता को विभेदन शक्ति कहा जाता है। बीम (Beam,1953)के अनुसार, ''मापे जाने वाले शीलगुण या शीलगुण के समूह के रूप में श्रेष्ठ व्यक्तियों से अलग करने की किसी पद की क्षमता को विभेदन देषनांक कहा जाता है।"

14.7 विभेदन शक्ति का निर्धारण

पदों की विभेदन शक्ति की गणना हेतु अनेक विधियों का विकास किया गया है। इनमें से मुख्य विधियां निम्न है-

14.7.1फ्लानागन का प्रोडक्ट मोमेन्ट सहसंबध गुणांक विधिः-

फ्लानागन (Flanagan)ने एक तालिका में कठिनता स्तर और विभेदनषक्ति सम्बन्धी देषनांको के विभिन्न मूल्यों को व्यवस्थित किया है। उनके द्वारा दिये गये निर्देषों की सहायता से पदों की कठिनाई और विभेदनशीलता के देषनांकों को सीधे-सीधे तालिका से देखा जा सकता है। गिलफोर्ड ने फलैनागन विधि

को किसी पद की वैधता ज्ञात करने की सबसे प्रभावशाली विधि बताया है। इस विधि के चार मुख्य चरण हैः-

क) सम्पूर्ण प्रतिदर्श से 27 प्रतिशत उच्च तथा 27 प्रतिशत निम्न व्यक्तियों को छाँटना।

ख) प्रत्येक पद के सही प्रत्युतरों की गणना का उच्च तथा निम्न समूह का अलग-अलग योग ज्ञात करना।

ग) दोनों समूहों- उच्च (U) तथा निम्न (L) के मध्य सही प्रत्युतरों का अन्तर ज्ञात करना।

घ) फ्लैनागन की सारिणी द्वारा प्रोडक्ट मोमेण्ट सह-सम्बन्ध ज्ञात करना

इस विधि में देषनांकों (Index) को प्रसार 0 से .93 के बीच आता है। निम्न सहसम्बन्ध वाले पदों को परीक्षण से छाँट दिया जाता है, चाहे व धनात्मक या त्रृणात्मक कुछ भी हो। शून्य या ऋणात्मक देषनांकों वाले पदों को अनुपयुक्त तथा 0.25 से कम वैधता गुणांक वाले पदों को कमजोर पद माना जाता है।

14.7.2डेविस विभेदनकारी सूची (Davis Item Analysis Chart)

डेविस के चार्ट से भी दिये गये निर्देशों की सहायता से भी देषनांकों की जानकारी प्राप्त की जा सकती है। डेविस की विधि पदों का विभेद मूल्य ज्ञात करने की एक महत्वपूर्ण विधि है। इस चार्ट के विभेदनकारी देषनांक (Discrimination Indices) प्रतिशत तथा सह सम्बन्धों पर आधारित होते हुए भी ये प्रतिशत तथा सह सम्बन्ध के रूप में नहीं पढ़ी जाती है। यह चार्ट सीधी रेखा मापनी (Linear Scale) है। क्योंकि इसमें मापनी (Linear Scale) के समस्त बिन्दुओं पर देषनांकों के मध्य की दूरी एक सामान होती है। ये बिन्दु प्राप्तांक होते है, इनको जोड़ा तथा औसत किया जाता है। इस विधि के चार चरण होते हैं ।

क) किसी समूह के 27 प्रतिशत उच्च तथा 27 प्रतिशत निम्न व्यक्तियों को छाँटना।

ख) प्रत्येक पद के सही प्रत्युतरों की गणना कर उच्च तथा निम्न समूहों का अलग-अलग योग करना।

ग) दोनों समूहों के सही प्रत्यत्तरों के मध्य अन्तर ज्ञात करना।

घ) चार्ट के माध्यम से विभेदनकारी सूची को देखना।

14.7.3. सायमण्ड विधि (Symonds Method)

यह विधि उच्च तथा निम्न समूहों पर आधारित होती है तथा जिसकी यह मान्यता है कि किसी भी परीक्षण के श्रेष्ठ पद वे हैं जिन्हें उच्च समूह के व्यक्ति हल कर सकें तथा कमजोर पद वे हैं जिन्हें केवल कमजोर द्वारा ही हल किया जा सके। इस विधि के तीन मुख्य चरण हैं ।

क) श्रेष्ठ व कमजोर व्यक्तियों के दो समूह ‘अ’ एवं ‘ब’ बना लिये जाते हैं ।

ख) प्रत्येक पद के सही प्रत्युतर की गणना कर ली जाती है तथा दोनों ‘अ’ व ‘ब’ समूहों का अलग-अलग योग कर लिया जाता है।

ग) दोनों समूहों के सही प्रत्युतरों के मध्य अन्तर प्रत्येक पद की वैधता की मात्रा को व्यक्त करता है।

सायमण्ड विधि द्वारा विभेदन देषनांक की गणना

पद क्रम	उच्च वर्ग	निम्न वर्ग	विभेदन शक्ति	व्याख्या
1	18	05	13	उत्तम
2	17	15	02	निर्बल
3	10	10	00	निरर्थक
4	06	09	.3	अवैध
5	09	06	03	साधारण
6	15	11	04	साधारण
7	19	07	12	उत्तम
8	08	08	00	निरर्थक
9	16	05	11	उत्तम
10	12	11	01	निर्बल

उक्त तालिका के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि कुछ विभेदन देषनांक शून्य है। ऐसे पदों की निरर्थक माना जाता है क्योंकि ये विभेदन शक्ति नहीं रखते है। जिन पदों पर दोनों समूहों का अन्तर अधिक है उन्हें उत्तम कहा जायेगा। किन्तु जिनमें यह अन्तर कम है उन पदों को निर्बल माना जायेगा। जिस पद का देषंनाक ऋणात्मक है वह अवैध होता है। निरर्थक व अवैध पद परीक्षण के लिये नहीं चुने जाते हैं।

14.7.4. **कैली विधि (Kelly Method)**

कैली विधि भी किसी समूह के उच्चतम एवं निम्नतम 27 प्रतिशत पर आधारित है परन्तु यह दोनों समूहों के सही प्रत्युतरों के अनुपात से संबन्धित न होकर सामान्य संभावना वक्र(Normal Probability Curve) की सिग्मा इकाई (unit) के आधार पर पदों के अन्तरों को प्रदर्शित करती है। इस विधि के चार चरण होते हैं -

क) 27 प्रतिशत उच्च तथा 27 निम्न व्यक्तियों की छाँटना।

ख) प्रत्येक पद के सही प्रत्युतर की गणना करके उच्च तथा निम्न समूहों का अलग-अलग योग ज्ञात करना।

ग) सामान्य संभावना वक्र की उपयुक्त तालिका से उच्च तथा निम्न समूह के प्रत्युतरों के योग के आधार पर सिगमा-मूल्य ज्ञात करना।

घ) उच्च समूह द्वारा प्राप्त सिग्मा मूल्य में से निम्न समूह के सिगमा मूल्य को घटाना।

कैली विधि के अनुसार देषनांक का प्रसार 0 से □ 5.18 के मध्य होता है। ऋणात्मक या शून्य देषनांक वाले पद अवैध तथा 0.40 गुणांक से कम वाले पदों को दुर्बल समझा जाता है।

14.7.5. गिलफोर्ड का काई वर्ग परीक्षण विधि

गिलफोर्ड (Guilford,1954) ने पदों की विभेदन शक्ति ज्ञात करने के लिये काई वर्ग-परीक्षण (Chi-square test) विधि का सुझाव दिया है। काई वर्ग परीक्षण का प्रयोग करने के लिए यह आवश्यक है कि उच्च समूह तथा निम्न समूह में व्यक्तियों की संख्या एक समान हो। काई-वर्ग का सूत्र इस प्रकार है-

$$X^2 = \frac{N(P\mu - Pl}{4PQ}$$

यहां

X^2 = Chi-square (काई-वर्ग)

N = उत्तरदाताओं की कुल संख्या

$P\mu$ = उच्च समूह में सफल व्यक्तियों का अनुपात

(Proportion of Successful individuals in upper group)

Pl निम्न समूह में सफल व्यक्तियों का अनुपात

(Proportion of Successful individuals in lower group)

P = $P\mu$ तथा Pl का अंकगणितीय माध्य

(Arithmetic Mean of $P\mu$ and Pl

Q = I-P

काई वर्ग के सार्थक आने पर पद को धनात्मक विभेदन शक्ति से पूर्ण माना जाता है और ऐसे पद का चयन अंतिम रूप से परीक्षण के लिए कर लिया जाता है।

फलस्वरूप हम यह कह सकते हैं कि, पद विश्लेषण की सहायता से किसी निम्न कोटि के पद की गुणवत्ता को बढ़ाया नहीं जा सकता। हम सिर्फ अवैध, निरर्थक और दुर्बल पदों को परीक्षण के अन्तिम प्रारूप में सम्मिलित किए जाने से रोक सकते हैं।

14.8 पद- विश्लेषण प्रक्रिया के चरण

पद विश्लेषण प्रक्रिया के निम्नलिखित महत्वपूर्ण चरण होते है

क) सबसे पहले परीक्षण के प्रत्येक पद का अंकन (Scoring)किया जाता है तथा सही प्रत्युतरों को गिन लिया जाता है।

ख) प्रत्येक व्यक्ति के योग अंक के आधार पर 27 प्रतिशत उच्च (पक्तियों उच्च समूह) तथा 27 प्रतिशत निम्न व्यक्तियों (निम्न समूह) को ज्ञात करना।

ग) फिर यह देखा जाता है कि उच्च व निम्न समूह के कितने-कितने व्यक्तियों ने प्रत्येक पद को सही रूप में हल किया या गलत किया। इसी तरह प्रत्येंक पद पर निम्न तथा उच्च समूह के सही प्रत्युतरों के अन्तरों को ज्ञात कर लिया जाता है। फिर इन अन्तरों को आरोही क्रम में व्यवस्थित करते है-उच्चतम ऋणात्मक अंक से प्रारम्भ कर उच्चतम धनात्मक अंक तक समाप्त कर देते है। अधिक धनात्मक अन्तर अधिक विभेदी पदों को इंगित करता है जबकि अल्प धनात्मक अन्तर या ऋणात्मक अन्तरों वाले पद विभेद नहीं करते हैं।

घ) पदों को कठिनता स्तर ज्ञात करने हेतु उच्च तथा निम्न समूह द्वारा हल किये गये पदों की संख्या के योग को 2 से विभाजित कर 100 में से घटा देते हैं ।

उदाहरण के लिये, किसी समूह के उच्च तथा निम्न वर्ग द्वारा किसे गये 5 प्रत्युत्तरों को निम्न तालिका में अंकित किया जा रहा है-

पद विश्लेषण तालिका

समूह	विकल्प					नहीं किया	परीक्षण संख्या	मूल्य स्तर
	अ	ब	स	द	य			
उच्च वर्ग	1	12	2	1	0	x	16	4 78
निम्न वर्ग	2	8	3	3	0	x	16	
योग	3	20	5	4	0		32	

प्रस्तुत उदाहरण में पद 'ब' का उत्तर ही शुद्ध प्रत्युतर है। अतः विभेदन मूल्य तथा कठिनता स्तर ज्ञात करने के लिए उसी प्रत्युतर के अंकों का प्रयोग किया जायेगा। इस चार्ट का प्रयोग आवश्यकता पड़ने पर किया जाता है।

14.9 पद की कठिनता स्तर एवं विभेदन शक्ति में संबंध:-

किसी भी परीक्षण के लिये निर्मित परीक्षण के पदों की कठिनता स्तर एवं विभेदन शक्ति के बीच घनिष्ठ संबंध होता है। पद की कठिनता स्तर का संबंध पद विभेदन सूचकांक (Discrimination Index) से

सीधा होता है। जो पद अधिक आसान होता है या अधिक कठिन होता है, वह उत्तरदाताओं को आपस में अच्छी तरह से विभेदित नही कर पाता है। दूसरे शब्दों में इस तरह के पदों की विभेदन शक्ति कम होती है। बहुत अधिक विभेदन के लिए यह आवश्यक है कि किसी पद पर उच्च समूह के सभी सदस्य सफल हो तथा निम्न समूह के सभी सदस्य उसी पर पर असफल हो। इस प्रकार से ऐसे पद जो पूरी तरह से विभेदन कर रहे हो, उसकी कठिनता स्तर 0.5 होगा।

उदाहरण के लिए मान लिया जाय कि उच्च समूह में 100 सदस्य तथा निम्न समूह में 100 सदस्य है किसी पद पर उच्च समूह के सभी सदस्यों ने सही उत्तर दिया तथा निम्न समूह के सभी सदस्यों ने गलत उत्तर दिया, इस प्रकार से पद का कठिनता स्तर 100/200=0.50 होगी। परन्तु वह पद जो बिल्कुल ही विभेदन नही करता है, उसकी भी कठिनता स्तर 0.50 हो सकती है। उदाहरण समूह के 100 सदस्यों में से 50 ने सही उत्तर दिया तथा निम्न समूह के 100 सदस्यों में से भी 50 सदस्यों ने सही उत्तर दिया तब ऐसी स्थिति में इस पद की विभेदन शक्ति शून्य होगा परन्तु कठिनता स्तर 50+50/200=100/200=0.50 होगी। इसका अर्थ यह है कि उच्च विभेदन सूचकांक के लिए पदों की कठिनता स्तर 0.50 ही हो यह आवश्यक नही है लेकिन एक आदर्श कठिनता स्तर की जरूरत होती है। परन्तु आदर्श कठिनता स्तर से भी हमेशा उच्च विभेदन शक्ति होगी ही, यह निश्चित रूप से नही कही जा सकती है।

14.10 सारांश

परीक्षण का प्रभावी व उपयोगी होना अत्यन्त आवश्यक होता है, एवम् परीक्षण उपयोगी उसमें निहित विशेष पदों के कारण से होता है। पद- विश्लेषण द्वारा उचित पदों का चयन करके परीक्षण के अन्तिम रूप की रचना की जाती है। पद-विष्लेशण के अन्तर्गत पदों के कठिनता स्तर व विभेदन शक्ति की जांच की जाती है। पचास प्रतिशत व्यक्तियों द्वारा हल कर लिया जाने वाला पद उपयुक्त कठिनता स्तर का माना जाता है। पद के कठिनता स्तर को ज्ञात करने के लिये कुछ विधियों का भी प्रयोग किया जाता है जिनमें से प्रमुख, सामान्य सूत्र द्वारा, सामान्य व्रक द्वारा, हार्पर की फेसीलिटी इन्डेक्स व 27 प्रतिशत उच्च तथा 27 प्रतिशत निम्न समूह के सही प्रत्युत्तर जांच करना, इत्यादि है।

कठिनता स्तर के समान ही पदों को विभेदन शक्ति की भी जांच की जाती है। विभेदन शक्ति से तात्पर्य मापे जाने वाले शीलगुण के आधार पर व्यक्तियों या उनके समूह में भेद करने की क्षमता से है। जिन पदों की विभेदन शक्ति -20 या उससे अधिक पायी जाती है, उसे ही परीक्षण के अन्तिम रूप में शामिल किया जता है। पद की विभेदन शक्ति का निर्धारण शक्ति विधियों द्वारा किया जाता है- फलेनागन प्रोडक्ट मोमेण्ट सह सम्बन्ध गुणांक विधि, डेविस विभेदनकारी सूची, सांयमण्ड विधि, कैली विधि एवम् गिलफोर्ड की काई वर्ग परीक्षण विधि इत्यादि है।

पद कठिनता व विभेदन शक्ति की जांच के पश्चात उत्तम व उचित पदों के द्वारा परीक्षण के अन्तिम रूप की रचना की जाती है। पद-विश्लेषण प्रक्रिया कुछ चरणों के माध्यम से पूरी की जाती है जिसका वर्णन प्रस्तुत इकाई में किया गया है।

14.11 पारिभाषिक शब्दावली

- **प्रतिशतक, प्रतिशतक फलांक (Percentile, Percentile Score)**

फलांकों के वितरण में सापेक्षिक स्थिति या श्रेणी का प्रमाप-निर्देशांक। इसका अर्थ है कि किसी दिये हुए बिन्दु या फलांक के नीचे उतने प्रतिशत फलांक है, जैसे 75 वाँ प्रतिशतक वह बिन्दु या फलांक है, जिसके नीचे 75 प्रतिशत फलांक हो।

- **प्रमाप (Standard)**

कोई वस्तु, गुण या मात्रा जिसको आधार बनाकर अन्य वस्तुओं या गुणो की तुलना की जाए। आवश्यक नहीं है कि एक अनुसन्धान में प्रयुक्त प्रमाप दूसरे अन्वेशण में भी उपयुक्त हो।

- **प्रमाप विचलन (Standard Deviation)** मापन में विचलन का एक निर्देशक, जिसकी गणना करने के लिए मध्यमान के सभी संख्याओं का अन्तर या विचलन निकालकर सब विचलनों का वर्ग करते हैं फिर इन सभी वर्गों के योग में संख्याओं का भाग देकर वर्गमूल निकाल लेते हैं।

- **मध्यमान (Mean)**

संख्याओं के योग में उनके नम्बर का भाग दिये जाने पर जो परिणाम आता है उसे मध्यमान कहते हैं। यह केन्द्रीय प्रवृत्ति का एक प्रतिनिधि मापक है।

- **पद विभेदन शक्ति (Discrimination Power of Item)**

प्रश्न पद का वह गुण, जिससे वह किसी वस्तु का अधिक एवं कम ज्ञान वाले व्यक्तियों में विभेद या अन्तर करने में समर्थ है।

- **सह-सम्बन्ध गुणांक (Coefficient of Correlation)**

सह-सम्बन्ध गुणांक दो पदों में पाये जाने वाला ऐसा अनुपात है जिससे यह पता लगता है कि एक पद में होने वाले परिवर्तन दूसरे पद में होने वाले परिवर्तनो पर कितनी मात्रा में आधारित है, या किस मात्रा में अनुसरण करते हैं।

- **सह-सम्बन्ध (Correlation)**

जब दो या दो से अधिक पदों तथा घटनाओं में पारस्परिक सम्बन्ध पाया जाता है, तब ऐसे पारस्परिक सम्बन्ध को सह-सम्बन्ध कहते हैं।

- **विश्वसनीयता (Reliability)**

मापन-उपकरण का एक आवश्यक गुण, जिसका अर्थ है संगति। जब कोई उपकरण बार-बार प्रयुक्त होने पर वही निष्कर्ष दे तो वह विश्वसनीय कहलाता है।

- **वैधता (Validity)**

मानक-उपकरण या प्रक्रियों का एक आवश्यक गुण कि वह परीक्षण यथार्थता से उसी उद्देश्य का मापन करता है या नही, जिसके लिए- वह बनाया गया है। वैधता स्थापित करने की प्रक्रिया को ''वैधकरण'' (Validation) कहते हैं।

- **पद कठिनता (Item Difficulty)**

परीक्षार्थियों का वह प्रतिशत, जिन्होंने प्रश्न या पद को ठीक हल किया हो। 50 प्रतिशत कठिनता का अर्थ है कि प्रश्न-पद को प्रतिक्रिया करने वाले परीक्षार्थियों के आधे ने ठीक किया है।

14.11. अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

पद के कठिनता स्तर को ज्ञात करने का

- सामान्य सूत्र - ID = $\frac{R}{N}$X100
- फैसिलिटी इंडेक्स का सूत्र – (FI) = $\frac{R(U)+R(L)}{2E}$

14.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

16. Bean, K.L. (1953) Construction of Education and Personnel Tests New York: Mc Grew Hill Book Co.
17. Bharyava, M. (1997), Psychological Test and Measurement, Printer Palace, Agra.
18. Bradfield J.M. & Murdock. H.S.: Measurement and Evaluation in Education, 1975 P.100.
19. Brown F.G. (1970), Principles of Educational and Psychological Testing. New York : Dryden Press.
20. Freeman, Frank, S. (1971), Theory and Practice of Psychological Testing. New Delhi: Oxford & IBH Publishing Co. Pvt. Ltd.
21. Guilford, J.P. (1954), Psychometric Methods. New Delhi: TATA MC Grow hill Publishng Co.

22. Srivastava, Rani. J., (1999), Psychological & Educational Measurement Motilal Banarshi das Publication, Delhi.

9. Tate, M.W.: Statistics in education and Psychology, (1967), P. 205

14.13 निबंधात्मक प्रश्न:

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. पद कठिनता स्तर के अर्थ को स्पष्ट करते हुये कठिनता-स्तर ज्ञात करने की विधियों का विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिये।
2. पद की विभेदन शक्ति से आप क्या समझते है? पद की विभेदन शक्ति की गणना हेतु प्रमुख विधियों को समझाइये।
3. पद-विश्लेषण प्रक्रिया के चरणों को स्पष्ट कीजिये।

लघु-उत्तरीय प्रश्न:

1. पद के कठिनता-स्तर व विभेदन शक्ति के अर्थ को स्पष्ट कीजिये।
2. 27 प्रतिशत उच्च तथा 27 प्रतिशत निम्न समूह के सही प्रत्युतर द्वारा पद के कठिनता स्तर को किस प्रकार ज्ञात किया जाता है?
3. हार्पर की फैसीलिटी इन्डेक्स को समझाइये।
4. सायमण्ड विधि व कैली विधि का अन्तर की स्पष्ट कीजिये।
5. विभेदन शक्ति की फ्लानागन प्रोडक्ट मोमेन्ट सहसम्बन्ध गुणांक विधि को स्पष्ट कीजिये।